ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

इक्कीसवी सदी के प्रमुख जनजातीय उपन्यासों में प्रथाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. शोभना जोशी
कु. अर्चना कदम (शोधार्थी)

सारांश :– इस शोध पत्र में इक्कीसवीं सदी के विभिन्न उपन्यासों में मुख्य रूप से प्रचलित विभिन्न प्रथाओं एवं मान्यताओं का वर्णन किया गया है। इन सभी प्रथाओं का जनजातियों पर प्रतिकूल या अनुकूल प्रभाव शोधार्थी द्वारा देखा गया है।

मूल शब्द :– जनजाति जीवन, प्रथाएँ, प्रमुख उपन्यास।

विषय का प्रतिपादन :– जनजाति, गोत्र का एक विस्तृत स्वरूप है। यह खानाबदोशी जत्थे, झुण्ड, गोत्र, भ्रातृदल एवं मोइटी अर्थात् युग्म संगठन से अधिक विस्तृत एवं संगठित होती है। जनजातियों को आदिम समाज, आदिवासी, वन्य जाति, गिरीजन एवं अनुसुचित जनजाति आदि नामों से पुकारा जाता है। जनजातियों की सामाजिक संरचना, उनकी प्रथाएँ, मान्याताएँ, धार्मिक रीतियॉ उनती ही अनोखी और असाधारण है जितना की उनका जीवन है। जनजातीया समाज में प्रथाओं का विशेष महत्व है। सामाजिक नियंत्रण बनाये रखने की दृष्टि से प्रथाएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आदिवासी समाजों में आधुनिक समाजों के समान कानून आदि का निर्माण नही किया जाता है इसलिए प्रथाओं का विशेष महत्व होता है। प्रथाओ का महत्व इस बात से स्पष्ट होता है कि व्यक्ति आज भी साधारणतः कानून की उपेक्षा कर सकता है, उसका उल्लघंन कर सकता है लेकिन प्रथाओं के विरूद्ध कार्य करने का साहस नही कर सकता है। प्रथाएँ वास्तव में सामूहिक व्यवहार के वे तरीके है जो पीढ़ी –दर– पीढ़ी हस्तान्तरित होते रहते है, जिन्हें समूह में कल्याण की दृष्टि से आवश्यक माना जाता है। इन्हें सभी का अभिमत प्राप्त होता है। एवं समूह कल्याण के लिए इन्हें आवश्यक माना जाता है।

कार्य प्रणाली :– प्रस्तुत शोध पत्र में विवरणात्मक एवं मूल्याकंन प्रणाली का प्रयोग किया गया है। शोध पत्र में दर्शायी गयी मान्यताओं को पूर्व शोध–पत्रों, उपन्यास, पुस्तकों एवं सरकारी वेबसाईटस आदि से लिया गया है।

उद्देश्य :– 1. जनजातियों में प्रचलित मान्यताएँ एवं प्रथाओं का अध्ययन करना।

2. मान्यताओं एवं प्रथाओं के कारण जनजातियों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

प्रमुख उपन्यासों में प्रथाओं का वर्णन :– साहित्य मनुष्य की अभिव्यक्तियों का सशक्त माध्यम है जिसमें लेखक अपने भावों और विचारों को आकार देता है। यह आकार कभी कविताओं के रूप में होता है तो कभी गद्य की विभिन्न विधाओं; नाटक, निबंध, कहानी, उपन्यास, एकांकी आदि रूप में होता है। उपन्यास गद्य की वह विध है जिसमें जीवन के हर क्षेत्र को विस्तृत रूप प्रदान किया जाता है। उपन्यास ने जीवन के हर क्षेत्र के विषय को छुआ है। यहॉ हम इक्कीसवी सदी के प्रमुख उपन्यासों में जनजातियों में प्रचलित प्रथाएँ एवं मान्याताओं पर चर्चा करेंगे।

मौताणा प्रथा :– भील जनजाति में ऐसी प्रथा है जिसमें यदि किसी व्यक्ति से हत्या हो जाए या उसके खेत मं या उसके स्थान पर कोई मरा हुआ पाया जाए, तब उस अवस्था में गांव वाले मिलकर दूसरे गांव वालों से मौताण नाम रकम वसूलते है। जिसके कारण उस व्यक्ति को या तो कर्ज लेना पड़ता है। या अपने बच्चों को बाल मजदूरी में लगाना पड़ता है।

'अरण्य में सूरज'

1. **धान का बिचड़ा** :– असुर जनजाति में ऐसी मान्यता है कि धान को आदमी के खून मे सानकर बिचड़ा डालने से फसल बहुत अच्छी होती हैं। इसलिए फसल, बोवनी के समय मुड़ीकटवा नामक व्यक्ति घात लगाए रहते है कि कब मौका मिले और किसी व्यक्ति का सिर काटकर खेतों में खून डाला जाए। जिससे फसल अच्छी हो सके।

'ग्लोबल गांव के देवता'

2. **सहिया** :– असूर जनजाति में लड़का –लड़की जब आपसी सहमति से एक दूसरे के साथ जुड़ना चाहते है तब गॉव में सहिया जोड़ा जाता है। जिसमें पूरे विधि–विधान के साथ लड़के वाले और लड़की वाले नाते रिश्तेदार आपस में मिलकर भोज

रखते है। लड़के के परिवार से लड़की को उपहार स्वरूप वस्त्र, गहने, मिठाई आदि भेंट की जाती है।

'ग्लोबल गॉव के देवता'

3. **बेहोरसोद** :– झारखण्ड में बसने वाली मुण्डा जनजाति में बेटी के ब्याह तय होने पर 'बेहोरसोद' नामक प्रथा निभाई जाती है। इसमें बेटी का पिता घर–घर निमंत्रण देने जाता है। वह जिस घर में निमंत्रण देता है वहॉ पर एक फूल लगाता है और बदले में घर के लोग उसे हॅडिया पिलाते है। यह सिलसिला तब–तक चलता है जब तक वह हर घर में जाकर निमंत्रण न दे आऐ।

'पठार का कोहरा'

4. **सॉप का डॅसना** :– पश्चिमी चम्पारन क्षेत्र में रहने वाली थारू जनजाति में यह मान्यता है कि यदि किसी को सॉप डॅस ले तो, न तो उसे गाड़ सकते है। ना ही उसे जला सकते है। वे लोग उसे नदी में बहा देते है। क्योंकि उनका मानना है कि सॉप के ड़से हुए व्यक्ति को नदी खुद ही खींच लेती है और उसका विष निकालकर मुर्दे को जीवित कर देती है।

'जंगल जहॉ शुरू होता है।'

5. **बपला** :– 'हो' जनजाति में दो परिवारों के बीच होने वाले नये सम्बंधों को मजबूत बनाने की रस्म निभाई जाती है। इसमें दूतम् पंचों के द्वारा दोनों पक्षों की सहमति से यह भी तय किया जात है कि बपला में लड़के की तरफ से कितने लोग जाएंगे लड़की वालों के घर।

'मंरग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ।'

6. **एकसरिया** :– 'हो' जनजाति में एकसरिया एक प्रथा होती है जिसमे स्त्री जब बच्चा जन्म देती है तब से लेकर बच्चे को उस समय तक कपड़े नही पहनाऐ जाते है जब तक की एकसरिया न हो जाए। एकसरिया में भोज करवाना होता है जिसमें गर्मियों में शिकार करके धुऍ में सुखाकर रखे गए हिरन का मांस, बकरी, मुर्गा, भात, धान, गोंदली, कोदो आदि खाद्य पदार्थ बनाए जाते है। इसके साथ ही डियंग पेय पदार्थ जो डियंग बनाने का चावल और रानु (डियंग बनाने की जड़ी) से तैयार किया जाता है, इन सबके द्वारा सामूहिक भोज तैयार किया जाता है।

'मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ।'

7. **मुंह में हिलि** :– मुंह में हिलि अर्थात दॉत के ऊपर दॉत निकल आना। 'हो' जनजाति में यह माना जाता है कि जिस लड़की के दॉत के ऊपर दॉत निकल आते है तो उससे कोई विवाह नही करता है। उसे अशुभ माना जाता है। मान्यता यह भी है कि यदि किसी कुत्ते से उस लड़की की शादी कर दी जाए तो वह उसका अशुभपन ले जाता है। फिर वह लड़की अशुभ नही रहती।

'मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ।'

8. **दुलसुनुम** :– दुलसुनुम अर्थात् बड़ा श्राद्ध। थारू जनजाति में माना जाता है कि मरने वाले व्यक्ति को पूरे अनुष्ठान के साथ क्रियाकर्म करना काफी नही होता है। मृतक के मरने के दो वर्ष के अंदर ही अंदर घरवाले को दुलसुनुम अर्थात् श्राद्ध करवाना पड़ता है। जिससे मृतक को पूर्ण रूप से शांति मिल सके। बिना दुलसुनुम किए परिवार में विवाह, गृहप्रवेश आदि कोई शुभ कार्य नही किया जा सकता है।

'मरंग गोड़ा नीलकण्ठ हुआ।'

9. **विभिन्न प्रथाओं का जनजातियों पर प्रभाव** :– प्रथाएँ वह सामूहिक व्यवहार है वे तरीके है जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते रहती है। प्रश्न यह है कि इन प्रथाओं को मानने से जनजातियों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है? कुछ प्रथाएँ ऐसी है जिनके कारण व्यक्ति कर्ज में डूब जाता है। परिवार के बच्चों को बाल–मजदूरी तक करनी पड़ जाती है। जिसके कारण बच्चे शिक्षा ग्रहण नही कर पाते है। जैसे 'मौताणा, प्रथा, दुलसुनुम आदि। कुछ प्रथाओं के कारण अपराध, हिंसा एवं आपसी संघर्ष बढ़ रहे है जैसे एकसरिया, सांप के डंसने पर नदी में बहाना आदि। परंतु कुछ प्रथाएँ ऐसी भी है जो जनजातियों की सांस्कृतिक सुन्दरता को संजोए है। उनके आपसी संबंधो को मजबूत किए है जैसे– सहियॉ, बपला, बेहोरसोद आदि।

अतः प्रथाएँ एक प्रकार के नैतिक कानून है जो सामूहिक व्यवहार को नियंत्रण में रखने के लिए बनायी जाती है कभी ये विकास में बाधा बन जाती है

तो कभी उन जनजातियों के असाधारण जीवन की पहचान बन जाती है। यह उनकी सांस्कृति सुंदरता को प्रदर्शित करती है।

संदर्भ सूची :–

1. अरण्य में सूरज, अजित गुप्ता
2. ग्लोबल गांव के देवता, रणेन्द्र
3. मंरग गोंड़ा नीलकण्ठ हुआ, महुआ माजी
4. पठार पर कोहरा, राकेश कुमार सिंह
5. जंगल जहां शुरू होता है। संजीव
6. समाजशास्त्र, प्रो. एम. एल. गुप्ता, डॉ. डी. डी. शर्मा
7. भारत में सामाजिक समस्याऐ, तेजस्कर पाण्डेय, संगीता पाण्डेय।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

रीवा नगर निगम के अंतर्गत महिला नेतृत्व एवं राजनैतिक विकास

डॉ. श्रीमती सरोज बिल्लोरे (शोध निर्देशिका)
प्राध्यापक–राजनीति विज्ञान विभाग, शासकीय माता जीजाबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर
श्रीमती मीरा कांठा (शोधार्थी)
शोध केन्द्र, समाज विज्ञान अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म. प्र.)

प्रस्तावना :– भारत एक विकासशील राष्ट्र है एवं किसी भी देश के लिए लोकशक्ति का विशेष महत्व रहता है, इसमें स्त्री एवं पुरूष दोनों सम्मिलित है क्योंकि ये दोनों समाज के अनिवार्य अंग है। यदि किसी भी देश को विकसित करना है तो सबसे पहले महिलाओं का विकास करना होगा क्योंकि महिला ही समाज की जननी होती है भारतीय संविधान में भी लिंग की समानता का प्रावधान है।

प्राचीन काल में महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। समाज में विभिन्न कुरीतियां विद्यमान थी जैसे – बाल विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या इत्यादि। वर्तमान समाज में संवैधानिक प्रावधानों की व्यवस्था के कारण कुरीतियों का अंत हुआ है। महिलायें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुई हैं, वे आज घर की चार दीवारी तक सीमित नही हैं बल्कि सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक नेतृत्व की भूमिका निभा रही हैं।

74 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम ने भारत में नगर निगम की व्यवस्था की गई है तथा नगर निगम में अनु जाति., अनु. जनजाति, जनजाति, पिछड़े वर्ग एवं महिलाओं को आरक्षण के माध्यम से प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ है। 74 वें संविधान संशोधन के द्वारा महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई है तथा 112 वें संशोधन द्वारा नगरीय निकाय में महिला आरक्षण को बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया गया है। जिससे सभी वर्ग की महिलायें आरक्षण का लाभ उठा रही हैं।

उद्देश्य :–

1. महिलाओं के सामाजिक नेतृत्व का अध्ययन करना।
2. महिलाओं के आर्थिक नेतृत्व का अध्ययन करना।
3. महिलाओं के राजनीतिक नेतृत्व का अध्ययन करना।
4. महिलाओं द्वारा संवैधानिक अधिकारों का उपयोग करने में आने वाली बाधाओं का अध्ययन करना।

रीवा नगर निगम के बारे में यह कहावत प्रसिद्ध है कि यहां 90 नेता 9 पहलवान और 1 जनता रहती है। इस बात से ये अंदाजा तो लगाया जा सकता है कि यहां का राजनैतिक परिदृश्य किस प्रकार का है लेकिन इस राजनीति में महिलाएं कितनी जागरूक है ये अलग बात है और यही जानने की कोशिश में हमने महिला प्रतिनिधियों से साक्षात्कार किया और प्राप्त जानकारी इस प्रकार है :–

तालिका क्रमांक 1
महिला नेताओं की राजनीति में रूचि

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	स्थानीय	72	72
2.	प्रादेशिक	20	20
3.	राष्ट्रीय	6	6
4.	अंतर्राष्ट्रीय	0	0
5.	कोई उत्तर नहीं	2	2
	योग	**100**	**100**

उपरोक्त तालिका में स्थानीय राजनीति में 72 प्रतिशत महिला जनप्रतिनिधि रूचि लेती हैं वहीं 20 प्रतिशत लोगों का उत्तर प्रादेशिक राजनीति में रूचि लेने में है, इसी प्रकार राष्ट्रीय राजनीति में रूचि लेने वाली प्रतिनिधियों का प्रतिशत 6 है। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में किसी महिला जनप्रतिनिधि की रूचि नहीं है। एवं कोई उत्तर न देने वाली प्रतिनिधि का प्रतिशत 2 है इससे ज्ञात होता है कि वे अपने अधिकारों कर्तव्यों के बारे में कुछ नहीं जानती है।

प्रस्तुत विषय से संबंधित उन कार्यों का संक्षेप वर्णन जो इस क्षेत्र में पूर्व में किया गया है :–

जिला और स्थानीय प्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा–2005 :– (श्री बी. एल. फड़िया) अध्ययन दल की रिपोर्ट में यह कहा गया है कि जब तक स्थानीय नेताओं को जिम्मेदारी और अधिकार नहीं सौंपे जाते, संविधान के निर्देशक सिद्धन्तों का राजनीतिक और विकास संबंधी लक्ष्य पूरा नहीं हो सकेगा।

अरूण कुमार शर्मा ''भारत में स्थानीय शासन'' राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष 1995 :– ने अपने अध्ययन में स्थानीय शासन के विभिन्न नियमों एवं घटकों का अध्ययन किया है। उनके अनुसार स्थानीय शासन का लक्ष्य है स्थानीय प्रबंधन में स्थानीय लोगों की भागीदारी से आम नागरिक सुविधाएँ उपलब्ध

कराना, किन्तु स्थानीय व्यवस्था आज अपने लक्ष्य से भटक गयी है, इसका कारण जहां एक ओर वित्तीय साधनों की कमी है वहीं दूसरी ओर महिलाओं में जागरूकता का अभाव है।

अध्ययन का क्षेत्र :– अध्ययन क्षेत्र के लिए मध्यप्रदेश के रीवा जिले का चयन किया गया है। रीवा जिले के अंतर्गत रीवा नगर निगम का चयन कर अध्ययन किया गया है।

अध्ययन का समग्र :– अध्ययन के लिए मध्यप्रदेश के रीवा जिले के अंतर्गत रीवा नगर निगम की महिलाओं को अध्ययन के समग्र के रूप में किया गया है।

अध्ययन की इकाई :– रीवा नगर निगम की महिला उत्तरदाताओं में से नगर निगम महापौर एवं पार्षद महिलायें अध्ययन की इकाई है।

निदर्शन विधि :– वर्तमान युग में मानव जीवन इतना विस्तृत है कि उसका अध्ययन संगणना विधि द्वारा करना अपने आप में जटिल कार्य है इसलिए निदर्शन प्रणाली का अनुसंधान में महत्व अधिक बढ़ गया है। निदर्शन प्रणाली में प्रस्तुत निदर्शन से निष्कर्ष निकाला जाता है। जिसको संपूर्ण क्षेत्र पर लागू किया जाता है। इस विधि के धन, समय और परिश्रम की बचत होती है।

शोध कार्य के अंतर्गत शोध की प्रकृति उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए उद्देशपूर्ण निदर्शन विधि के द्वारा रीवा जिले के नगर निगम की महिला पार्षदों एवं महिला महापौर का चयन किया गया है।

प्राथमिक समंकों का संकलन :– महिला उत्तरदाता से प्रत्यक्ष संपर्क कर उनसे जानकारी हासिल की। अनुसंधान क्षेत्र का प्रत्यक्ष निरीक्षण किया गया। महिला उत्तरदाताओं से सामूहिक चर्चा की गई। उत्तरदाताओं से प्रश्न कर अनुसूची भरी गई एवं उनकी वास्तविक जानकारी प्राप्त की गई। प्राथमिक आंकड़ों को सारणी के माध्यम से प्रदर्शित किया गया।

द्वितीयक समंकों का संकलन :– जनगणना पुस्तिका सरकारी प्रतिवेदन द्वितीयक स्त्रोत जिसमें महिलाओं से संबंधित साहित्य का अध्ययन, पत्र – पत्रिकाएं, समाचार पत्र, जिला सांख्यिकी पुस्तिका रीवा एवं नगर निगम कार्यालय से प्रकाशित एवं अप्रकाशित सामग्री, नगर निगम की वार्षिक पत्रिका आदि के माध्यम से जानकारी प्राप्त की गई है। पुस्तकालय अनुसंधान जिसमें महिला नीति एवं शासन की प्रमुख योजनाओं से संबंधित पुस्तकों लेखों तथा सरकारी गैर सरकारी प्रकाशनों की विस्तृत छानबीन की गई है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय :– रीवा जिला रीवा मध्यप्रदेश प्रांत का नगर एवं संभाग है। रीवा जिला मध्यप्रदेश के 51 जिलों मे से एक है। इस जिले का ऐतिहासिक अध्ययन करने के बाद यह पता चला कि रीवा शब्द की उत्पत्ति रेवा नदी से हुई है जो कि अमरकंटक से बहती थी। जिसके नाम से ही इस जिले का नाम रीवा पडा, रेवा नदी ही आज नर्मदा नदी के नाम से जानी जाती है, राजाओं के जमाने से रीवा बघेलखंड की राजधानी हुआ करती थी मुगल सम्राट अकबर ने बांधवगढ नगर के ध्वस्त हो जाने के बाद 1597 ई. में रीवा को रियासत की राजधानी के रूप मे चुना। रीवा जिला मध्यप्रदेश राज्य के उत्तर पूर्व मे स्थित प्रमुख जिला है रीवा जिला मध्यप्रदेश के गठन के साथ ही 1 नवंवर 1956 को अस्तित्व मे आया। इसके उत्तर में उत्तर प्रदेश के बांदा व इलाहाबाद जिले, पूर्व में मिर्जापुर, दक्षिण में मध्यप्रदेश के शहडोल व सीधी जिला तथा पश्चिम में सतना जिला है। देश का प्रमुख राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 7, क्रमांक 27, एवं क्रमांक 75 रीवा जिले से होकर गुजरता है।

रीवा जिले का विस्तार :– रीवा जिले की भौगोलिक स्थिति 24^0 10′ उत्तरी अक्षांश से 26^0 48′ उत्तरी अक्षांश एवं 74^0 50′ पूर्वी देशांतर से 79^0 18′ पूर्वी देशांतर है। रीवा जिला मध्यप्रदेश के पूर्वोत्तर कोने में $24^0$18′15′′ तथा 82^0 18′15′′ उत्तरी अक्षांश एवं 81^0 13′15′′ तथा $82^0$18′30′′ पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है।

इसकी अधिकतम चौड़ाई उत्तर से दक्षिण की ओर 96 कि.मी. व अधिकतम लम्बाई पूर्व से पश्चिम 125 कि.मी. है।

इसका क्षेत्रफल 6287.5 वर्ग किलोमीटर है। इसके उत्तर में उत्तर प्रदेश के बांदा व इलाहाबाद जिले, पूर्व में मिर्जापुर, दक्षिण में मध्यप्रदेश के शहडोल व सीधी जिला तथा पश्चिम में सतना जिला है।

रीवा जिले के दक्षिण में कैमूर पर्वत श्रेणियॉ तथा मध्य में विन्ध्य पर्वत है। ये दोनो पहाड़ विन्ध्यांचल पर्वत की श्रृंखलाएँ है जो पूर्व से पश्चिम की ओर फैले हुए है। विंध्य पहाड़ रीवा जिले को दो भागो में बांटता है। जिसे तरिहार एवं उपरिहार कहते है। दोनो पहाड़ों के किनारे भूमि पथरीली व पहाड़ी है। परन्तु मैदानी इलाकों की भूमि समतल और उपजाऊ है। तरिहार की अपेक्षा उपरिहार समुद्रतल से लगभग 300 फिट ऊँचा है।

भौगोलिक दृष्टि से बघेलवंश के साम्राज्य का विस्तार उत्तर से दक्षिण 22^0 36′ से 26^0 18′ उत्तरी

अक्षांश तथा पूर्वी से पश्चिम में 78°4′ से 82°5′ देशान्तर के मध्य स्थित रहा।[1] महत्वाकांक्षी राजाओं के साहस और वीरता के चलते राज्य में आंशिक विस्तार तथा कमी होते रहने के बावजूद प्रस्तुत साम्राज्य गोंडवाना क्षेत्र में बिलासपुर तक, बुन्देलखण्ड में पन्ना, कटनी, उत्तर में डभौरा, बांदा तक विस्तृत फैला था।[2] विन्ध्यगिरि की उपत्यकाओं में स्थित बांधवगढ़ के दक्षिण भाग में मैकाल, पूर्व में कैमूर, उत्तर–पूर्व में केहजुआ, पश्चिम में पन्ना और सारंगगिरि शाखाएँ अपने विस्तृत आगोश में समेटे हुए थी।

राज्य का दक्षिण पूर्वी भाग बहुत ही ऊँचा और पूर्व–उत्तर भाग अपेक्षाकृत चौरस था।[3] प्रदेश का ढाल उत्तर दिशा में होने के कारण इस प्रांत में बहने वाली तकरीबन सभी नदियाँ जिसमें सोन, टमस, बीहर, बिछिया, महाना, बेलन पस्वनी अपनी–अपनी सहायक नदियों का पानी बटोर कर गंगा–यमुना में जा मिलती है।

राज्य की केवल एक नदी नर्मदा पूर्व से पश्चिम की और बहकर कच्छ की खाड़ी में जा मिलती है पहाड़ी नदियाँ होने के कारण गर्मी के दिनों में इनमें बहुत कम पानी रह जाता है फिर भी ये नदियाँ सुन्दर तथा गहरे जल प्रपात का निर्माण कर भौगोलिक परिदृश्य में अपनी अलग पहचान बनाये रखने में सक्षम थी।[4] जल प्रपातों में चचाई, क्योटी, बहुती, पुरवा, कपिलधारा, दुग्धधारा पूरे देश में अपने खूबसूरती एवं अनुपम क्षेत्र के लिए चर्चित रहे।

विंध्य क्षेत्र में बघेलवंश के अभ्युदय और सत्ता में केन्द्र बनने का अपना अलग ही इतिहास है। ऐतिहासिक तत्वों के अनुसार बघेलवंश के पूर्ववर्ती राजवंश इस परिक्षेत्र के अन्तर्गत निवासी रहे जो राजनैतिक गतिविधियों में रूचि रखने के कारण अवसर पाने पर कही न कही के सामंत, राजा बन जाते रहे। यहां का राजकीय इतिहास ईसा के पूर्व 3–4 सदी के मध्य तक का ही उपलब्ध है।

रीवा जिले की दशकीय अन्तर की प्रवृत्ति को देखने पर पता चलता है कि 1901–1911 से लेकर 1941–1951 तक इसमें वृद्धि दर सामान्य रही। 1911–21 में ऋणात्मक हो गई थी। 1951–61 में इसमें तेजी से वृद्धि हुई है। 1981–91 में यह वृद्धि 28.77 प्रतिशत तक पहुंच गई। 1991–2001 में इसमें हल्की सी 19.3 प्रतिशत की गिरावट आई है और यह 26.84 प्रतिशत हो गई है।

रीवा जिले का मानचित्र :–

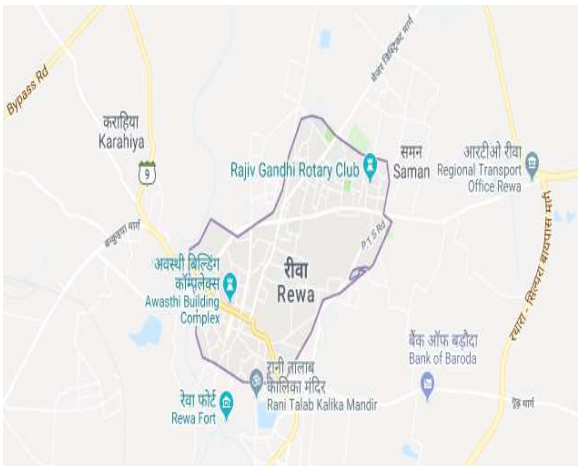

जनसंख्या 2001 एवं 2011 की जनगणना के अनुसार :– रीवा जिले की कुल आबादी 2363744 है, वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या घनत्व की दृष्टि से रीवा मध्यप्रदेश के 45 जिलों में सातवें स्थान पर है।, वर्ष 20011 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या 2363744, जनसंख्या का घनत्व 970/मीटर^2, 2011 मे साक्षरता दर 73.42 प्रतिशत स्त्री पुरूष अनुपात 1991 में 927 एवं 2001 में यह बढ़कर 933 हो गई है। सन् 2001 की जनगणना में 1991 की तुलना में पूरे देश में स्त्री, पुरूष अनुपात बढ़ा है। रीवा जिले में 1991 में स्त्री पुरूष का अनुपात 932 था, यह अनुपात 2001 की

[1] द रेवा स्टेट डायरेक्टरी ' कृष्णमूर्ति सक्सेना, पृ. 77.
[2] व्ही – पृष्ठ – 23.
[3] रीवा राज्य दर्पण : जीतन सिंह , पृ. 73.
[4] रीवा राज्य दर्पण : जीतन सिंह पृ. 73.

जनणना में बढ़कर 939 हो गया। 2011 मे लिंगानुपात 930, घनत्व 970/मी^{2}, साक्षरता 73.42 प्रतिशत है।

ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या :– रीवा जिले की ग्रामीण जनसंख्या 1991 में 84.8 प्रतिशत था, 2001 में 83.75 प्रतिशत है आज भी रीवा की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती थी। 2011 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या 2363744 है।

जिले की साक्षरता :– वह व्यक्ति जो किसी भाषा को समझ कर लिख पढ़ सकता है, वह साक्षर कहलाता है। जो पढ़ सकता है, परन्तु लिख नही सकता, साक्षर की श्रेणी में नही आता। 1961, 1971 तथा 1981 की जनगणनाओं में 0–4 आयु समूह के बच्चों को निरक्षर माना जाता रहा है, परन्तु 1991 की जनगणना से 0–6 आयु समूह तक के बच्चों को निरक्षर माना जा रहा है। 2001 की जनगणना में भारत का साक्षरता प्रतिशत 65. 38 है। वर्ष 1991 की जनगणना में प्रदेश का दूसरा सबसे कम साक्षर जिला रीवा है। 2011 की जनगणना में साक्षरता 73,42 प्रतिशत एवं लिंगानुपात 930 हो गया।

महिलाओं की ऐतिहासिक पष्ठभूमि :– उन्नीसवीं सदी का प्रारम्भ स्त्रियों को निम्न स्थिति सुधारने के चेतना के साथ हुआ। क्योंकि स्त्रियों की दिनोदिन गिरती हुई स्थिति में समाज के कुछ बुद्धिजीवियों को झकझोर दिया और उन्हें समाज में उचित सम्मान दिलाने के लिये सामाजिक सुधार आंदोलन का नेतृत्व करने को बाध्य कर दिया। इस दिशा में राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानंद, सरस्वती, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन का योगदान अविस्मरणीय है। राजा राममोहन राय द्वारा किये गये प्रयत्नों से सती प्रथा का अंत हुआ। इसी प्रकार दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज के माध्यम से बाल विवाह, पर्दा प्रथा को निरूत्साहित किया इसलिये पुनर्विवाह का तो प्रश्न ही नही'' इस प्रकार विधवाएँ स्वयं अपनी निम्न स्थिति के लिए जिम्मेदार हैं फिर भी ईवरचन्द्र विद्यासागर के प्रयत्नों से विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पारित हुआ। स्पष्ट रूप से इन सभी प्रयत्नों से बाल–विवाह विधवा, निषेध, अतंर्जातीय विवाह, पर्दा प्रथा के प्रतिकूल अधिनियिम पास हुए जिससे महिलाओं की स्थिति में काफी सुधार हुआ। इन समाज सुधार आन्दोलनों के अतिरिक्त ईसाई मिशनरियों, ब्रिटिश शासन, महिला आन्दोलन ने भी महिलाओं की दयनीय स्थिति को सुधारने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

महिला आन्दोलन के प्रर्वतकों में संस्कृति की महान् विद्वान रमाबाई, मेडम कामा, तोरूदत्त तथा स्वर्गकुमारी देवी ने भी महिलाओं को शिक्षित करने; विधवाओं की दशा सुधारने के लिये पूना सेवासदन एवं नर्सिंग मेडिकल एसोसिएशन स्थापित करने में अभूतपूर्व योगदान दिया है। इसके अतिरिक्त एनीबेसेन्ट, मारग्रेट नोबल, मारग्रेट कुशमस आदि महिलाओं ने अपना सबल एवं कुशल नेतृत्व प्रदान कर भारतीय स्त्री जागरण आन्दोलन को आगे बढ़ाने का प्रयास किया। महर्षि डी. के. कर्वे ने सन् 1907 में महिला विश्वविद्यालय की स्थापना की तथा 1915 में देश का प्रथम महिला विश्वविद्यालय स्थापित किया। इसमें केवल परीक्षा उत्तीर्ण करने का प्रावधान न था, बल्कि इनका उद्देश्य था कि स्त्रियों को इस प्रकार की शिक्षा मिलनी चाहिए कि वे एक अच्छी पत्नियाँ, अच्छी माताएँ एवं अच्छी पड़ोसिन भी बन सकें। इस संगठनों के माध्यम से स्त्रियों में चेतना लाने एवं उन्हें सम्मानपूर्ण स्थान दिलाने के भी प्रयास किये गये है। फलस्वरूप भारतीय समाज विशेष रूप से हिन्दू सामाजिक संगठन में क्रांतिकारी मोड़ आया है और इन सब स्थितियों के पश्चात् भी स्वतंत्र भारत की सरकार ने समय–समय पर अनेक अधिनियमों को पारित कर नारियों का शोषण एवं अत्याचार से बचाने का प्रयास किया गया है। जिसके फलस्वरूप नारियाँ आवांछित एवं अविवेकपूर्ण मातृत्व के अनावश्यक कष्ट से बच सकती है।

डॉ. प्रमिला कपूर ने स्पष्टतः लिखा है कि, ''भारत का शिक्षित वर्ग विशेषतः युवा शिक्षित महिला वर्ग देश में सामाजिक क्रांति, परिवर्तन और चेतना लाने तथा लोगों के दृष्टिकोण, विचारधारा और कार्यकलाप बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।

यही वर्ग भारतीय नारी में जागृत ला सकता है और ला रहा है'' पणिक्कर के अनुसार, ''परिवार की जायदाद में पुत्री, पत्नी एवं विधवा द्वारा बँटवारे की माँग से हिन्दू जीवन में एक महत्वपूर्ण किन्तु भौतिक क्रांति की आशंका है। नयी परिस्थितियों ने नयी समस्याएँ खड़ी कर दी है। प्राचीन भारत में नगरीय प्रशासन प्राचीन व्यवस्था स्थानीय स्वायत्त संस्था में यद्यपि आधुनिक काल का विकास है तथापि, अति प्राचील काल से ही हमारे देश में स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था रही है। हम भारत में स्थानीय स्वशासन के इतिहास को निम्न युगों मे बांटा गया है:–

प्राचीन काल में स्थानीय स्वशासन :– प्राचीन भारत में स्थानीय शासन को आज की भांति ही नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में विभाजित किया गया था। दोनों क्षेत्रों की प्रशासकीय व्यवस्था अलग–अलग रूप में की गई थी।

नगरों की सफाई, रोशनी, सड़क आदि की सुंदर व्यवस्था थी तथा गृह निर्माण के समय विविध सुविधाओं पर समुचित ध्यान दिया जाता था। गांव शासन की धुरी माने जाते थे। वैदिक युग में जब नगरों का स्थान नगण्य था, ग्राम शासन का महत्व अधिक था तब प्रत्येक गांव एक छोटा प्रजातंत्र था। गांवों में पंचायतें ग्रामवासियों द्वारा संगठित होती थी और प्रशासकीय तथा न्यायिक कार्यों का सम्पादन करती थी।

मनु संहिता में राजा और गांवों के बीच प्रत्यक्ष संबंध की चर्चा मिलती है और कौटिल्य के अर्थशास्त्र से पता चलता है कि राज्य ग्रामीण जीवन में बहुत कम हस्तक्षेप करता था।

मौर्यकाल में स्थानीय स्वशासन विकसित था। शासन की सुविधा के लिए प्रान्तों के 6 उपविभाग जनपद, स्थानिक, द्रोणमुख, संगम, ग्राम थे। कौटिल्य ने अपने ग्रंथ कौटिल्य में लिखा है, कि ''जनपद'' जिला का मुखिया ''स्थानिक'' कहलाता था, ग्राम का अधिकारी ''ग्रामीण'' कहा जाता था, ग्राम पदाधिकारियों के पास भूमि कर, सिंचाई, जंगल, यातायात, देखभाल तथा न्याय का कार्य था, पांच से दस गांवों का अधिकारी ''गोप'' कहलाता था। चन्द्रगुप्त मौर्य ने शासन के विकेन्द्रीयकरण की नीति अपनाते हुए स्वायत्त शासन प्रणाली लागू की थी। उसने ग्रामों की व्यवस्था कर वसूली तथा अन्य प्रशासनिक कार्यों में ग्राम वृद्धों का सहयोग लिया था।

इस व्यवस्था से उसके साम्राज्य में विद्रोह की आशंका नहीं थी। चन्द्रगुप्त के शासन काल में दूर–दूर के प्रान्तों में भी सिंचाई, भूमि के नाप और यातायात मार्गों आदि का समुचित प्रबंध था। परिणामतः उसके साम्राज्य में चारों ओर शांति और समृद्धि दिखाई देने लगी थी।

डॉ. रमेशचन्द्र मजूमदार के शब्दों में ''मौर्य सम्राट संभवतः स्वयं मगध और आसपास के प्रदेशों के शासन की व्यवस्था करते थे। दूर के प्रान्त कुमारों और उपराजाओं के अधीन थे, जो प्रायः राज परिवार से ही चुने जाते थे।

केन्द्रीय सरकार उनके कार्यों पर प्रतिवेदक नामक कर्मचारियों के माध्यम से दृष्टि रखती थी। केन्द्रीय सरकार और प्रान्त दोनों में ही शासन व्यवस्था के लिए अनेक विभाग थे। प्रत्येक विभाग का एक अध्यक्ष होता था और उसकी सहायता के लिए अनेक विभाग थे। प्रत्येक विभाग का एक अध्यक्ष होता था और उसकी सहायता के लिए अनेक विभागीय कर्मचारी होते थे। विशाल साम्राज्य के कार्यों के सुचारू संचालन के लिये एक अत्यन्त सुसंगठित नौकरशाही की व्यवस्था थी। साम्राज्य के विभिन्न भागों को जोड़ने के लिये सड़के बनी हुई थी, जिनमें से एक सड़क तो भारत की सारी चौड़ाई को पार करती हुई। सिंधु से लेकर गंगा के मुहाने तक थी। सिंचाई की व्यवस्था का कठियावाड़ जैसे साम्राज्य के दूरस्थ प्रांतों में भी की गई थी। शासन प्रायः सुव्यस्थित था। देश में शांति तथा समृद्धि थी और जनता संतुष्ट थी। इस तरह चन्द्रगुप्त मौर्य के काल में नगर की प्रशासन व्यवस्था संतोषजनक थी। कौटिल्य के अनुसार नगर का सबसे बड़ा पदाधिकारी ''नागरिक'' कहलाता था। जो गांव और स्थानीय लोगों की सहायता से गांव का प्रशासन करता था। प्रशासन का यह तरीका संभवतः छोटे नगरों के लिए ही था। राजधानी तथा बड़े नगरों का प्रशासन दूसरे ढंग से होता था, परंतु मेगस्थनीज के अनुसार अन्य बड़े नगर भी इसी प्रणाली में शामिल होते थे। गंगा और सोन पर बसा हुआ पाटलिपुत्र नगर (आधुनिक पटना) का क्षेत्र लगभग 9 मील लम्बा और 1.5 मील चौड़ा था। नगर के चारों ओर आत्मरक्षार्थ 600 फीट चौड़ी और 60 फीट गहरी खाई थी।

साम्राज्य के अन्य नगरों में भी निःसंदेह इसी प्रकार का रक्षा प्रबंध था। मेंगस्थनीज ने पाटलिपुत्र की व्यवस्था का विस्तृत वर्णन किया है, जिससे विदित होता है कि वह एक प्रकार की म्युनिसिपल व्यवस्था थी, जिसकी आज भी म्युनिसिपल कार्य–प्रणाली से तुलना की जा सकती है। उसका कथन है कि पाटलिपुत्र का प्रशासन पाँच–पाँच सदस्यों की 6 समितियों में विभक्त था। संयुक्त रूप से इन छहों समितियों की नगरपालिका पर सार्वजनिक भवनों की मरम्मत, बाजारों, नौकरगृहों और मंदिरों की देख–रेख, मूल्य निर्धारण आदि का उत्तरदायित्व था। यह नहीं कहा जा सकता कि यह म्युनिसिपल समितियां नागरिकों द्वारा निर्वाचित होती थी अथवा इसके सदस्य द्वारा मनोनीत होते थे। माना जाता है कि पाटलिपुत्र नगर की समितियों के निर्माण में नागरिकों का हाथ रहता था किन्तु अन्य नगरों की समितियों के सदस्य संभवतः सरकार द्वारा मनोनीत होते थे।

74 वां संविधान संशोधन अधिनियम :– वर्ष 1992 में 74 वां संविधान संशोधन अधिनियम पूरे देश में प्रभावशील हुआ। इन्ही संशोधनों एवं प्रावधानों के परिपेक्ष्य में मध्यप्रदेश शासन द्वारा लिखित प्रवधानों को समावेश करते हुए मध्यप्रदेश नगरपालिक निगम संशोधन अधिनियम दिनांक 29 मई 1994 को राज्यपाल की अनुमति प्राप्त कर मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण)

दिनांक 30 9 मई 1994 में प्रकाशित कर प्रभावशील किया गया। जिसके अनुसार मध्यप्रदेश में राज्य निर्वाचन आयोग का गठन किया गया। अयोग के माध्यम से निर्वाचन सम्पन्न कराये जाने लगे। रिक्त होने क छः माह के अन्द चुनाव कराया जाना एवं महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग हेतु आरक्षण किया गया तथा आवश्यक आरक्षण नियम पारित किये गये। उक्त संशोधन के तहत मध्यप्रदेश व रीवा जिले में भी महत्वपूर्ण प्रावधान किये गये हैं।

महापौर का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा किया जाता है, इन पदाधिकारियों को केवल अविश्वास प्रस्ताव पारित होने के आधार पर नही हटाया जा सकेगा बल्कि जनता द्वारा निर्णय कराया जाता है। यदि जनता द्वारा मतदान में बहुमत के आधार पर कुर्सी से हटाने के पक्ष में मतदान किया जायेगा तो प्रतिनिधि कुर्सी से हट जायेगा अथवा यथावत बना रहेगा।

मध्यप्रदेश के इस प्रावधान व प्रयोग के तहत मध्यप्रदेश के रीवा संभाग के अनूपपुर नगर पालिका में किया गया व जनता ने अपने अपने अधिकारों का उपयोग कर अध्यक्ष को कुर्सी से हटा दिया। यह प्रदेश की प्रथम ऐतिहासिक लोकतंत्रिक प्रक्रिया व प्रयोग है। मेयर इन कौसिल का गठन प्रत्येक नगर पालिक निगम में मेयर इन कौसिल महापौर और दस सदस्यों से मिलकर बनती है।

सभी सदस्य, महिला वर्ग से दो सदस्य अन्य पिछड़ा वर्ग तथा एक सदस्य अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति वर्ग से सम्मिलित होगा ये सभी सदस्य महापौर के प्रसाद पर्यन्त है। मेयर इन कौंसिल के सदस्य रह सकेंगे। मेयर इन कौंसिल के एक निश्चित सीमा तक वित्तीय व प्रशासकीय अधिकार भी दिये गये हैं। मेयर इन कौसिल को तीन लाख तक की जनसंख्या वाले नगर निगम में 50 हजार से 5 लाख तक व तीन लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगर निगमों में 1 लाख से 10 लाख रूपये तक का अधिकार प्रदान किया गया है।

भारत की संसद द्वारा 1992 में पारित और जून 1953 में प्रवर्तित 74 वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में भाग – 9 अ ''द म्यूनिसिपलिटीज'' शीर्षक से नया जोड़ा गया है। इस भाग के माध्यम से देश में नगरीय निकायों को संवैधानिक मान्यता और संवैधानिक संस्तर प्रदान किया गया है। संविधान संशोधन देशभर में त्रिस्तरीय नगर निकायों की व्यवस्था करता है। इस संविधान संशोधन की संरचना निम्न प्रकार है –

अ) नगर पंचायत – ऐसे क्षेत्रों के लिए जो ग्राम से नगर बनाने की संक्रमणकालीन प्रक्रिया में है उनमें नगर पंचायत का गठन किया जाएगा।

ब) नगर परिषद (म्यूनिसिपल कौंसिल) – नगर परिषद का गठन छोटे नगरों में किया जाना प्रस्तावित किया गया है।

स) नगर निगम का गठन वृहत्तर नगरीय क्षेत्रों अर्थात बड़े नगरों में किया जाना प्रस्तावित किया गया है।

इस प्रावधान के परंतुक में यह स्पष्ट किया गया है कि राज्य के राज्यपाल किसी औद्योगिक क्षेत्र को उपर्युक्त प्रकार के निकाय के गठन से मुक्त कर सकते है। इसी प्रकार अधिनियम में यह भी स्पष्ट किया गया है कि ग्राम से नगर बनाने की संक्रमणकालीन प्रक्रिया, छोटे नगर और बड़े नगर की परिभाषा व उसमें जनसंख्या/धनत्व व आय इत्यादि के विषय में स्पष्टीकरण राज्य के राज्यपाल द्वारा किया जावेगा।

इस संविधान संशोधन में ही सभी राज्यों से यह अपेक्षा की गई थी कि इसके प्रर्वतन की तिथि से एक वर्ष की अवधि के भीतर वे अपने राज्यों में नगर निकायों से संबंधित अधिनियम में इस संविधान संशोधन के प्रावधानों को समायोजित करते हुए आवश्यक संशोधन करेंगे। भारतीय संघ के प्रायः सभी राज्यों ने इस निर्देश का अनुसरण करते हुए या तो अपने पूर्ववर्ती विधान में यथा आवश्यक संशोधन करते हुए 74वें संविधान संशोधन की मूल भावना और विशेषताओं को उसमें सम्मिलित कर लिया।

अध्ययन का विश्लेषण एवं अध्ययन की मुख्य खोजें

महिला नेतृत्व एवं राजनैतिक विकास :– नगर निगम को स्थापित हुए लगभग 26 वर्ष हो चुके हैं एंव इनका प्रभाव समाज रीवा जिले में अनेक प्रकार से पड़ा है, इस तथ्य को अनेक अनुभव अध्ययन अन्य स्थानों के सन्दर्भ में पुष्टि करते हैं वकात्कम आरक्षण पद्धति की शक्ति, वयस्क मताधिकार शैक्षणिक नगर निगम राजनीति शहरी आंचलों में जीवन्त कर दिया है जिसमें जनता में राजनैतिक चेतना की अभिवृद्धि हुई है, यद्यपि इस तथ्य के पीछे विभिन्न समाजों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, यही कारण है कि परिवार आज अपने बेटे–बेटियों और बहुओं को घर से बाहर जाने की इजाजत देने लगे हैं अर्थात् रीति रीवाज का पालन कम

हुआ है। अतः जातीयता के आधार पर सामाजिक कार्य की कमी होती जा रही है, यद्यपि संयोजन का नवीन राजनैतिक रूप नगरीय व्यवस्था के मिलता है जो कि जातीय तौर पर टूट के रूपान्तरित हो जाते है जिससे परिवार व जाति के बन्धन महिला प्रतिनिधियों के सन्दर्भ में और सशक्त हो जाते है। अतः पंचायतीराज में त्रुटीय नेतृत्व में अति प्रभावशाली होता है।

वास्तव में 74वें संवैधानिक संशोधन का प्रभाव के माध्यम से क्षेत्र की राजनैतिक संरचना पर पड़ा जिससे कि राजनैतिक चेतना ग्रामीण आंचलों में जागृति हुई है तथा जातियां एवं उनके नेता धीरे–धीरे उच्च स्तर पर राजनैतिक गठबन्धन करने लगे हैं जिसके परिणाम स्वरूप पंचायतों के स्तर पर ये गठबन्धन शक्तिशाली केन्द्र बन कर ग्रामीण विकास को मूर्त रूप प्रदान कर रहे हैं। लोकतांत्रिक समाज की स्थापना के पूर्व राजनैतिक सम्बन्ध उच्च जातियों एवं आर्थिक शक्तियों पर आधारित थे परंतु 74 वें संवैधानिक संशोधन जनित चक्राणुक्रम आरक्षण के कारण इस जातीय आर्थिक एवं राजनैतिक शक्ति के स्थान पर संख्यात्मक राजनैतिक शक्ति को अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है, परिणामस्वरूप आज नेतृत्व उस वर्ग के पास है जो संख्यात्मक राजनैतिक शक्ति को एकत्रित करने की योग्यता रखता है।

प्रस्तुत अध्याय में यह देखने का प्रयास किया गया है कि पंचायत किस स्तर तक लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण में सफल है तथा ग्रामीण विकास एवं पुनर्निर्माण कराने में, इनकी उपयोगिता क्या है? एवं सामाजिक न्याय के प्रति इनकी कटिबद्धता का स्तर क्या?,जनभागीदारी सुनिश्चित करना, सामाजिक विकास के कार्यक्रमों का परिपालन तथा सामजिक न्याय की ओर अग्रसर होना। इसके अलावा एक ऐसे स्वायत्त शासन की स्थापना जो कि ग्राम स्तर से ही लोकतंत्र का प्रतीक बन सके। शोधकर्ताओं ने नगर निगम को सरकार की एक इकाई के ही रूप में परिभाषित किया है

आरेख क्रमांक 1

महिला नेतृत्व : नगरीय विकास एवं पुनर्निमाण की गति

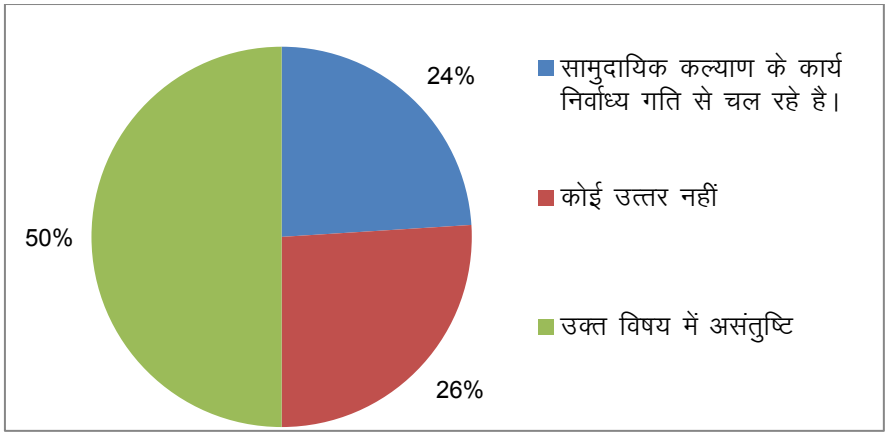

उपरोक्त तथ्य से स्पष्ट है कि नगर निगम अपने कार्य सम्पादन में पूर्ण रूपेण सफल नहीं है, यद्यपि महिला प्रतिनिधियों के दृष्टिकोण से यह व्यक्त नहीं किया गया। यह अभिव्यक्ति उसका दूसरा पहलू भी हो सकता है, इसलिए असफलता के कारकों का जानना जरूरी है चूंकि असन्तुष्टता की दर ऊँची थी।

उक्त सम्बन्ध में अधिकांश महिला प्रतिनिधियों का मत रहा कि सरकारी अधिकारियों व कर्मचारियों के माध्यम से उन्हें उचित सहयोग नहीं प्राप्त होता है उसके अलावा द्वितीय स्तर पर वरिष्ट जनप्रतिनिधियों का उदासीन होना तीसरे स्तर पर स्वयं जनता जिनके लिए ये सारे कार्यक्रम निरूपित हुए है का निरूत्साहित होना, दर्शाया दगया तथा चौथा कारण जो सामने आया है वह वर्ग विशेष की ग्राम सभाओं मे जनसंख्या अधिक होना। प्रथम कारक को स्वीकार करती है 54 प्रतिशत। द्वितीयक कारक को स्वीकारती है 22 प्रतिशत। तृतीय कारक को स्वीकार करती है 15 प्रतिशत एवं बाकी शेष 9 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि अन्तिम कारक को उत्तरदायी ठहराती है।

आरेख क्रमांक 2

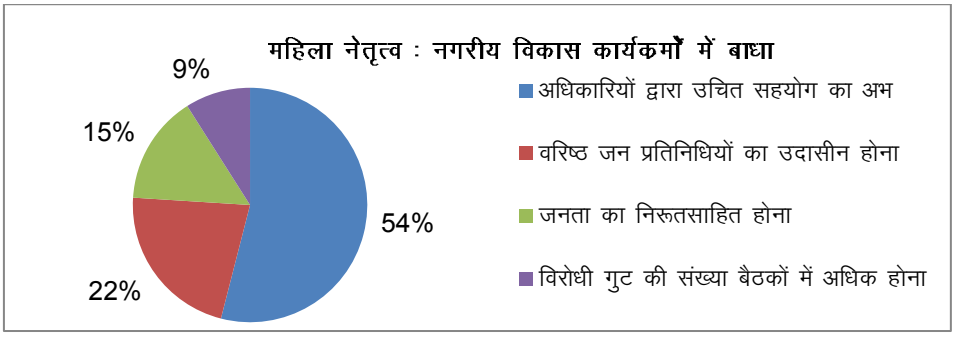

नगरीय सुधार कार्यक्रम :– वास्तव में नगरीय प्रशसन के नीति निर्धारण, नियोजन बजटीकरण कियान्वयन इत्यादि की शक्ति नवीन पंचायतीराज व्यवस्था में प्रदान की गयी है, इस तथ्य से संगठनात्मक व्यवस्था ग्रामीण विकास हेतु तो हो गयी है, परन्तु क्या इस प्रावधान का पंचायतीराज एवं महिला प्रतिनिधि लाभ उठा रहे है, इससे कल्याण राहत के कार्यक्रमों के विकर्षण में पहले से तेजी आये है, प्रति उत्तर में 40 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने व्यक्त किया कि सुधार कार्यक्रमों में तीव्रता आयी है परन्तु यह आशा से बहुत कम है। 45 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने विकास कार्यक्रमों में तीव्रता नहीं बल्कि पर्याप्त मानी है, जबकि 15 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नकारात्मक उत्तर प्रस्तुत किया।

आरेख क्रमांक 3

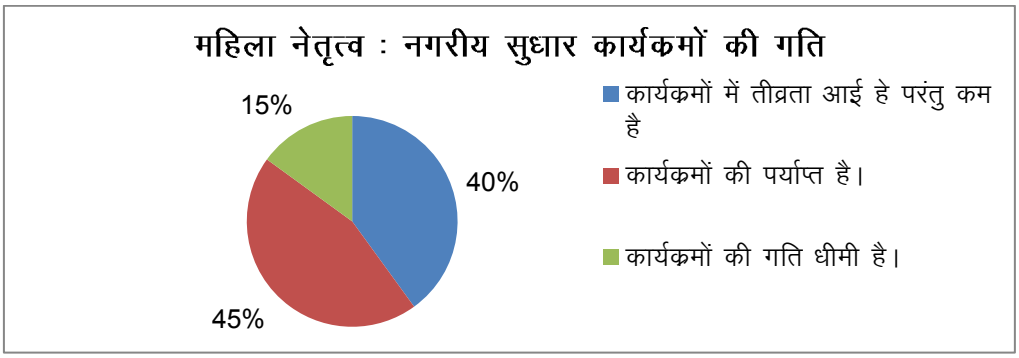

वास्तव में नगरीय विकास में विकास की ढेर सारी गुन्जाइश मौजूद है जिससे व्यक्ति विशेष स्वतः अपने मापदण्ड से नापता है, यह कटुसत्य है कि पिछले 10 वर्षों में नगरीय विकास की धारा खुल गयी है जैसे– सड़क, स्कूल, पुलिया, बांध, जल–ग्रहण, सामुदायिक भवन इत्यादि का निर्माण । परन्तु ग्रामीण निर्धनता में कमी नहीं आयी, आय के संसाधन सीमित है, रोजगार के अवसर सीमित कार्यक्रमों द्वारा ही प्राप्त है जो कि साल दर साल वक्त–बे–वक्त काट दिये जाते हैं

आरेख क्रमांक 4

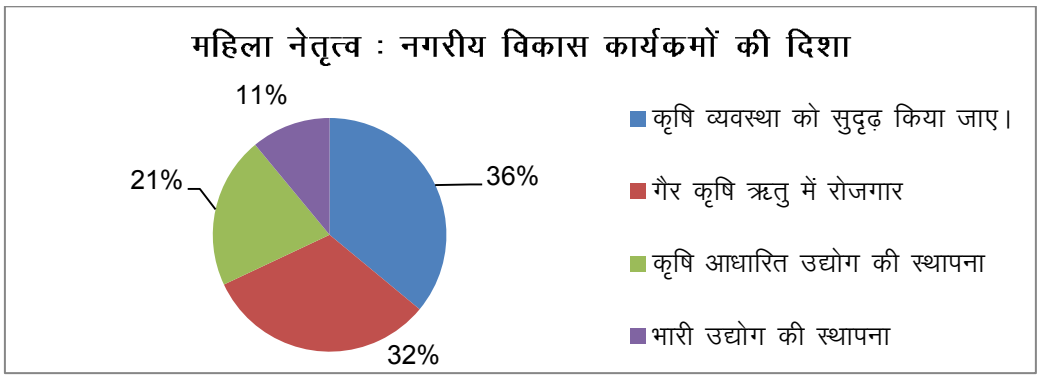

इस प्रश्न पर कि आप के समझ में किस प्रकार की व्यवस्था से आप का क्षेत्र जोड़ा जाये कि साधन सम्पन्नता बढ़े ? 36 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने अपने उत्तर में स्पष्ट किया कि कृषि व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित ताकि बिजली, पानी इत्यादि मुहैया हो सके, जबकि 32 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने गैर कृषि ऋतु में रोजगार मुहैया कराने की बात कही 21 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने लघु उद्योग सम्बन्धी सयंत्र लगाने की बात कहीं जिससे बेरोजगारी खत्म हो सके व उत्पादन बढ़ सके, जबकि 11 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने भारी उद्योग लगाने की बात कही?

वास्तव में उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि महिला प्रतिनिधि अपने नेतृत्वाधीन लोगों की मूल समस्याओं से अवगत ही नहीं भलीभांति परिचित है एवं क्षेत्रीय संसाधन उपलब्धता से अवगत है जिससे कि उन्हें वास्तविक पर्यावरण में उपलब्ध विकास की दिशायें दिख रही हैं क्योंकि भारी उद्योगों की बात उठाना इस क्षेत्र विशेष में मात्र 11 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों द्वारा उठाया जाना यह दर्शाता है कि वर्तमान व्यवस्था में संसाधन विहीन क्षेत्रान्तर्गत भारी उद्योग लगाना असम्भव है, परन्तु बाकी के 80 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नियोजकों को स्पष्ट संकेत दिया है कि इन दिशाओं में उनकी सोच सामाजिक विकास के सन्दर्भ में बेहतर उपलब्धि दिला सकती है।

आरेख क्रमांक – 5

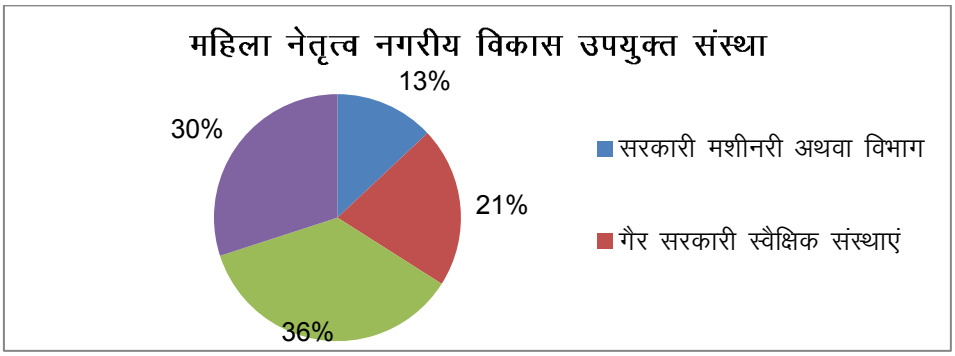

इसी तारतम्य में नगरीय विकास के कार्यक्रमों को कार्यान्वित कने हेतु कौन सी संस्था उपयुक्त मानी जाय का प्रश्न रखा गया। जिसके प्रति–उत्तर में 13 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नगरीय प्रशासन सबसे उपयोगी संस्था, सरकारी मशीनरी के अन्तर्गत सरकारी विभागों को माना, जबकि 21 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने यह विचार व्यक्त किया कि स्वैच्छिक संस्थाऐं विकास कार्यक्रमों का अच्छा संचालन कर सकती हैं। 30 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नगरीय प्रशासन को उचित संस्था ठहराया एवं 36 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नगर निगम को सम्पूर्ण विकास हेतु उपर्युक्त संस्था मानती है। अतः ये आंकड़े स्पष्ट रूप से स्थानीय प्रशासन एवं नगरीय प्रशासन की उपादयेता दर्शाते हैं।

वास्तव में परिस्थितियां इतनी खराब नहीं जितना कि विभिन्न अध्ययन जैसे– Pandey, G.S (2001) मानते है स्थानीय संस्थाऐं स्पष्ट रूप से प्रमुख अभिकर्ता नगरीय विकास की बनी हुई है ये अपने आप में 74 वें संवैधानिक संशोधन की सफलता का परिचायक है।

सामाजिक विकास में बाधक :– एक बात तो स्पष्ट है कि क्षेत्र द्वारा चुने गए नेता क्षेत्र के विकास हेतु तत्पर है इस तथ्य में महिला प्रतिनिधि भी उतने ही अंश में समर्पित है जितना कि पुरूष अन्य अध्ययनों Jain, IIaben (1994) परन्तु फिर भी इन कार्यक्रमों की असफलता का कारक हम पूर्व में भी अध्ययन कर चुके हैं पर इस दृष्टिकोण से अध्ययन करना आवश्यक है कि नगर निगम की आर्थिक सामाजिक एंव सांस्कृतिक वृद्धि को कौन से तत्व फलीभूत नहीं होने देते, इस हेतु महिला प्रतिनिधियों से प्रश्न उठाने पर यह ज्ञात हुआ कि उनके क्षेत्र में सामाजिक आर्थिक, सांस्कृतिक विकास में बाधक तत्व अधिकारियों व कर्मचारियों की लापरवाही का विचार 28 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने व्यक्त किया, 19 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने त्रिस्तरीय पंचायत के विभिन्न पदाधिकारियों एवं वरिष्ठ जन प्रतिनिधियों को दोषी ठहराया, 40 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने प्रशासन के असहयोगी व्यवहार को प्रमुख रूप से सामाजिक विकास में बाधक बनने का श्रेय दिया तथा 23 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने माना की समय पर सूचनाओं के आदान–प्रदान के अभाव के कारण भी असफलता मिलती है।

आरेख क्रमांक 6

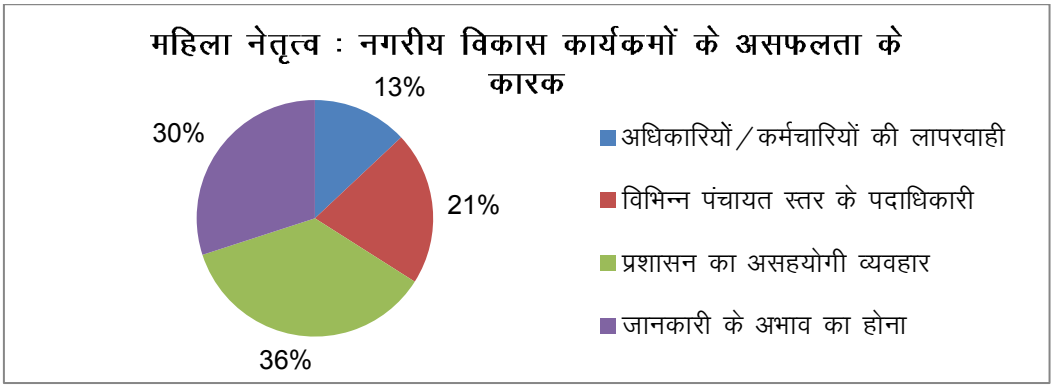

अतः इन आंकड़ों के आधार पर रीवा जिले के सामाजिक आर्थिक विकास में प्रशासकों की भूमिका घटती जा रही है जो कि महिला सशक्तिकरण के लिए शुभ सूचक रहेगा ऐसा कई अध्ययनों ने स्थापित भी किया है Buch, Nirmala (1994) एवं Kumar, Ranjana (2000)[10]।

वास्तव में महिला प्रतिनिधियों का चयन आरक्षण जनित था जो कि किसी भी योग्यता परख पर आधारित नहीं था, यद्यपि महिलाओं के बीच में ही टकराहट की स्थिति कई जगह उत्पन्न हुई। परन्तु सभी माप दण्ड इनके लिए गिरा दिये गये, परन्तु 13 वर्ष बाद इन परिस्थितियों को एक मुद्दा बना कर आज इन्हें ग्रामीण राजनीति में जो स्थान प्राप्त है। उनके लिए अयोग्य ठहराना अपने आप में एक भूल होगी, क्योंकि वे समस्त गुणवादी विशिष्टताओं से युक्त हो गयी है जिन्हें समाज नेतृत्व के लिए आवश्यक मानता है।

आज स्व–विकास का माध्यम नेतृत्व बना है जिससे कि परिवार की प्रतिष्ठा गतिशीलता एवं उपादेयता में वृद्धि हुई है 79 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने यह माना कि उनकी परिवार की प्रतिष्ठा उनके प्रतिनिधि ने परिवार की प्रतिष्ठा में अपना योगदान न्यून माना। 18 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने उत्तर देना उचित नहीं समझा।

महिला नेतृत्व एवं जाति :– जाति प्रथा में खान–पान, उठना–बैठना, मेल–जोल सम्बन्धी रीति–रिवाज समाहित है, ऐसी मान्यता पूर्व में थी कि उच्च जाति वालों को निम्न जाति वालों की कच्ची रसोई नहीं खानी चाहिए तथा कुछ जातियों के साथ खान–पान संबंधी कठोर प्रतिबंध है लेकिन आज के परिवेश में लोकतांत्रिक व्यवस्था के वशीकरण, ग्रामीण एवं परिवारों को इस आधुनिकता को अपनाना पड़ा है, ऐसा महिला प्रतिनिधियों के संबंध में भी परिलक्षित होता है। वास्तव में इस परिवर्तन के विभिन्न स्वरूप दिखाई पड़ते हैं जिसमें प्रमुख रूप से यह देखा गया है कि महिला प्रतिनिधि चाहे जिस भी ऊँची जाति की हो सबके साथ ऊँच–नीच का भेद–भाव छोड़कर भाई–चारे का संबंध रखने का तत्पर है एवं हर स्तर के लोगों के साथ उठना–बैठना, खाना–पीना, उत्सवों में भाग लेना पड़ता है, अतः नेतृत्व के लिए यह आवश्यक हो गया है। वह विभिन्न धर्म व सम्प्रदाय के लोगों को समान महत्व देने का प्रयास करती है यही कारण है कि राजनैतिक जीवन में उनकी सफलता परिलक्षित होती है। अतः हम यह कह सकते हैं कि पारिवारिक आधुनिकीकरण नेतृत्व के माध्यम से प्रभावित होता है।

उपरोक्त आशय को ज्ञात करने हेतु पूछा गया कि उनके नेतृत्व से उच्च जातियों अथवा निम्न जातियों से सम्पर्क बढ़ा है। 42 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने स्वीकार किया कि वे अन्य जातियों के यहां खान–पान का सम्बन्ध चुनाव उपरान्त बना 30 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने पारिवारिक संबंध बनने अन्य जातियों के यहां उत्सवों में सहानुभागिता हेतु अवसर प्राप्त हुए। अतः ये स्पष्ट हुआ कि सामाजिक दूरियां घटी हैं नवीन नगरीय प्रशासन के तत्वाधान में।

शक्ति संरचना का आधार :– परम्परागत शक्ति संरचना की मान्यताऐं धीरे–धीरे खण्डित हो चुकी है एवं नई शक्ति संरचना को वर्तमान में आर्थिक भू–मण्डलीकरण के दवाब में 74 वें संवैधानिक संशोधन ने मार्ग प्रशस्त किया है, जिससे औद्योगिकरण, नगरीकरण, साक्षरता, क्षेत्रीयता, अपराधीकरण इत्यादि प्रभावित करते हैं। इसके विपरीत पितृ–प्रधान व्यवस्था एवं सामान्तवाद भावकारी बिन्दुओं पर प्रकाश डाला है जो कि धरातलीय राजनीति पर हावी होता है। जाति व्यवस्था का प्रभाव कुछ न कुछ तो रहेगा ही

आरेख क्रमांक 7

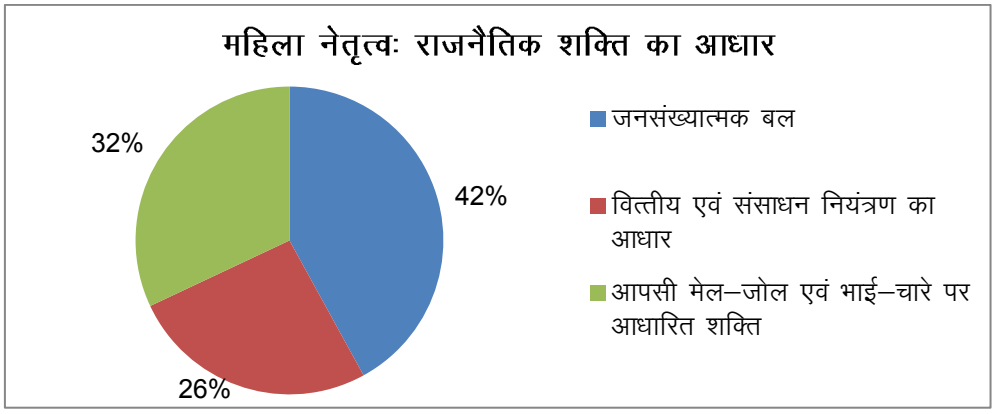

शक्ति सरंचना को प्रभावी करने वाले कारक पर प्रश्न किये जाने पर स्पष्ट रूप से जनसंख्यात्मक रूप से प्राथमिकता दी गयी जिसके अन्तर्गत 42 प्रतिशत महिला प्रतिभागियों ने अपना मत व्यक्त किया। दूसरा मत वित्तीय एवं संसाधन नियन्त्रण का आधार 26 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने व्यक्त किया। जबकि तीसरे मत से आपसी मेल–जोल एवं भाई–चारे पर आधारित शक्ति संरचना की बात कही गयी जिसमें 32 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने अपना मत व्यक्त किया जो कि वास्तव ने सहकारिता एवं सहयोग की माप में जालीतंत्र निर्माण का द्योतक है। उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि धरातलीय परिस्थितियां बदल रही है जो कि अन्य अध्ययनों क निष्कर्षों से भी समर्थित होता है,

सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन का जहां तक एक तरफ पूर्व उल्लेखित कारक जिम्मेदार है, वहीं से दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य इसके लिए सरकारी प्रयास का है। वास्तव में समस्त राष्ट्र के सामाजिक एवं सांस्कृतिक उत्थान हेतु पिछले 60 वर्षों से व्यापक चेष्टा की जा रही है, परन्तु इसकी सफलता या असफलता विवादास्पद ही रही है। अतः इसका मूल्यांकन आवश्यक समझा गया, यह ध्यान में रखते हुए परिवर्तनों को तीन श्रेणी में विभक्त किया गया है– प्रथम श्रेणी अच्छा लेकिन मन्द, द्वितीय श्रेणी अच्छा लेकिन तेज तथा तृतीय श्रेणी परिवर्तन के विरोध में था।

आरेख कमांक 8

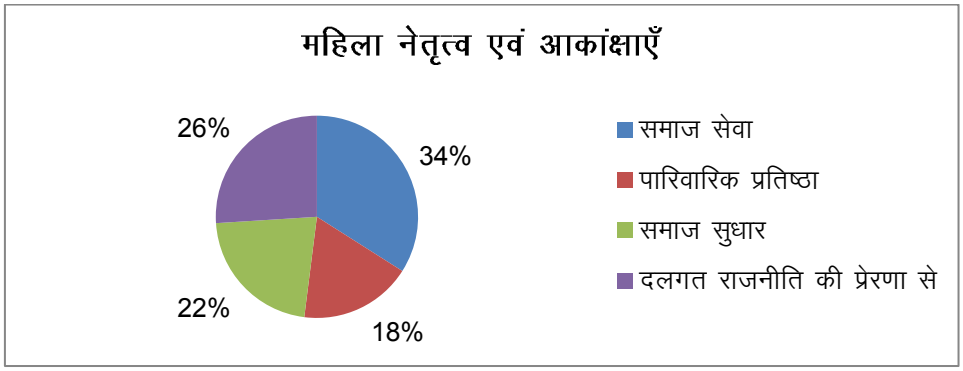

इन महत्वकांक्षाओं के विषय में जानकारी लेने पर ज्ञात हुआ है कि 34 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि समाज सेवा की महत्वाकांक्षा लेकर चुनाव में भागीदारी निभाई थी, 26 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने सामाजिक सुधार लाने हेतु तथा शेष 18 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने दलगत राजनीति के कारण निर्वाचन मे भाग ली जिससे यह स्पष्ट होता है कि 56 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि की भूमिका क्षेत्रीय राजनीति में सकारात्मक प्रतीत होती है, जबकि 44 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि की भूमिका परम्परावादी है जो कि अन्य अध्ययनों से पुष्टि होती है।

निष्कर्ष :– प्रस्तुत शोध प्रबंध ''शोध विषय'' (म. प्र. के रीवा जिले के विशेष संदर्भ में) संबंधित है। प्रस्तुत अध्ययन के लिए म. प्र. के रीवा जिले के रीवा नगर निगम के वार्डों में से 100 चयनित महिलाओं को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि द्वारा अध्ययन हेतु लिया गया

है। शोध संबंधी जानकारी, साक्षात्कार, अनुसूची, व्यक्तिगत साक्षात्कार, स्वनिरीक्षण द्वारा प्राप्त की गई है शोधकर्ता द्वारा महिला उत्तरदाताओं से प्रत्यक्ष संपर्क स्थापित करके उनके जीवन को समझने एवं वास्तविकता की तह तक जाने का प्रयास किया गया है।

सर्वेक्षण के उपरांत जो तथ्य उभरकर आये हैं उनकी व्याख्या करते हुए वास्तविक स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है और उससे जो भी तथ्य हमारे सामने आये उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि रीवा नगर निगम में मलिाओं का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक नेतृत्व का विकास हुआ है।

अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि रीवा नगर निगम में महिलाएं कितनी जागरूक हैं और यह जानने की कोशिश में हमने महिला प्रतिनिधियों से साक्षात्कार किया और प्राप्त जानकारी इस प्रकार है :–

1. राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण दोगली नीतियों से हम संपूर्ण देश के विकास का स्वप्न यदि देखते हैं, तो यह सोचना हमारी बहुत बड़ी भूल होगी। वस्तुतः राजनैतिक हस्तक्षेप के कारण ही अधिकांश जनता निष्क्रिय तथा तटस्थ मानसिकता लिए हुए सबकुछ चुपचाप सह रही है।
2. नगर निगम अपने कार्य सम्पादन में पूर्ण रूपेण सफल नहीं है, यद्यपि महिला प्रतिनिधियों के दृष्टिकोण से यह व्यक्त नहीं किया गया। यह अभिव्यक्ति उसका दूसरा पहलू भी हो सकता है, इसलिए असफलता के कारकों का जानना जरूरी है चूंकि असन्तुष्टता की दर ऊँची थी।
3. अधिकांश महिला प्रतिनिधियों का मत रहा कि सरकारी अधिकारियों व कर्मचारियों के माध्यम से उन्हें उचित सहयोग नहीं प्राप्त होता है उसके अलावा द्वितीय स्तर पर वरिष्ट जनप्रतिनिधियों का उदासीन होना तीसरे स्तर पर स्वयं जनता जिनके लिए ये सारे कार्यक्रम निरूपित हुए है का निरूत्साहित होना, दर्शाया गया तथा चौथा कारण जो सामने आया है वह वर्ग विशेष की ग्राम सभाओं मे जनसंख्या अधिक होना। प्रथम कारक को स्वीकार करती है 54 प्रतिशत। द्वितीयक कारक को स्वीकारती है 22 प्रतिशत। तृतीय कारक को स्वीकार करती है 15 प्रतिशत एवं बाकी शेष 9 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि अन्तिम कारक को उत्तरदायी ठहराती है।
4. वास्तव में नगरीय प्रशसन के नीति निर्धारण, नियोजन बजटीकरण कियान्वयन इत्यादि की शक्ति नवीन नगरीय व्यवस्था में प्रदान की गयी है, इस तथ्य से संगठनात्मक व्यवस्था नगरीय विकास हेतु तो हो गयी है,
5. परन्तु क्या इस प्रावधान का नगरीय विकास एवं महिला प्रतिनिधि लाभ उठा रहे है, इससे कल्याण राहत के कार्यक्रमों के विकर्षण में पहले से तेजी आयी है, प्रति उत्तर में 40 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने व्यक्त किया कि सुधार कार्यक्रमों में तीव्रता आयी है परन्तु यह आशा से बहुत कम है। 45 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने विकास कार्यक्रमों में तीव्रता नहीं बल्कि पर्याप्त मानी है, जबकि 15 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नकारात्मक उत्तर प्रस्तुत किया।
6. वास्तव में नगरीय विकास में विकास की ढेर सारी गुन्जाइश मौजूद है जिससे व्यक्ति विशेष स्वतः अपने मापदण्ड से नापता है, यह कटुसत्य है कि पिछले 10 वर्षों में नगरीय विकास की धारा खुल गयी है जैसे– सड़क, स्कूल, पुलिया, बांध, जल–ग्रहण, सामुदायिक भवन इत्यादि का निर्माण। परन्तु ग्रामीण निर्धनता में कमी नहीं आयी, आय के संसाधन सीमित है, रोजगार के अवसर सीमित कार्यक्रमों द्वारा ही प्राप्त है जो कि साल दर साल वक्त–वे–वक्त काट दिये जाते हैं।
7. इस प्रश्न पर कि आप के समझ में किस प्रकार की व्यवस्था से आप का क्षेत्र जोड़ा जाये कि साधन सम्पन्नता बढ़े ?
8. 36 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने अपने उत्तर में स्पष्ट किया कि कृषि व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित हो ताकि बिजली, पानी इत्यादि मुहैया हो सके, जबकि 32 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने गैर कृषि ऋतु में रोजगार मुहैया कराने की बात कही 21 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने लघु उद्योग सम्बन्धी सयंत्र लगाने की बात कहीं जिससे बेरोजगारी खत्म हो सके व उत्पादन बढ़ सके, जबकि 11 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने भारी उद्योग लगाने की बात कही?
9. वास्तव में महिला प्रतिनिधि अपने नेतृत्वाधीन लोगों की मूल समस्याओं से अवगत ही नहीं भलीभांति परिचित है एवं क्षेत्रीय संसाधन उपलब्धता से अवगत है जिससे कि उन्हें वास्तविक पर्यावरण में उपलब्ध विकास की दिशायें दिख रही हैं क्योंकि भारी उद्योगों की बात उठाना इस क्षेत्र विशेष में मात्र 11 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों द्वारा उठाया जाना यह दर्शाता है कि वर्तमान व्यवस्था में

संसाधन विहीन क्षेत्रान्तर्गत भारी उद्योग लगाना असम्भव है, परन्तु बाकी के 80 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नियोजकों को स्पष्ट संकेत दिया है कि इन दिशाओं में उनकी सोच सामाजिक विकास के सन्दर्भ में बेहतर उपलब्धि दिला सकती है।

इसी तारतम्य में नगरीय विकास के कार्यक्रमों को कार्यान्वित कने हेतु कौन सी संस्था उपयुक्त मानी जाय का प्रश्न रखा गया। जिसके प्रति–उत्तर में 13 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नगरीय प्रशासन सबसे उपयोगी संस्था, सरकारी मशीनरी के अन्तर्गत सरकारी विभागों को माना, जबकि 21 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने यह विचार व्यक्त किया कि स्वैच्छिक संस्थाएं विकास कार्यक्रमों का अच्छा संचालन कर सकती हैं। 30 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नगरीय प्रशासन को उचित संस्था ठहराया एवं 36 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि नगर निगम को सम्पूर्ण विकास हेतु उपर्युक्त संस्था मानती है। अतः ये आंकड़े स्पष्ट रूप से स्थानीय प्रशासन एवं नगरीय प्रशासन की उपादयेता दर्शाते हैं। ये अपने आप में 74 वें संवैधानिक संशोधन की सफलता का परिचायक है।

10. एक बात तो स्पष्ट है कि क्षेत्र द्वारा चुने गए नेता क्षेत्र के विकास हेतु तत्पर है इस तथ्य में महिला प्रतिनिधि भी उतने ही अंश में समर्पित है जितना कि पुरूष, परन्तु फिर भी इन कार्यक्रमों की असफलता का कारक हम पूर्व में भी अध्ययन कर चुके हैं पर इस दृष्टिकोण से अध्ययन करना आवश्यक है कि नगर निगम की आर्थिक सामाजिक एंव सांस्कृतिक वृद्धि को कौन से तत्व फलीभूत नहीं होने देते, इस हेतु महिला प्रतिनिधियों से प्रश्न उठाने पर यह ज्ञात हुआ कि उनके क्षेत्र में सामाजिक आर्थिक, सांस्कृतिक विकास में बाधक तत्व अधिकारियों व कर्मचारियों की लापरवाही का विचार 28 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने व्यक्त किया, 19 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने नगरीय प्रशासन के विभिन्न पदाधिकारियों एवं वरिष्ठ जन प्रतिनिधियों को दोषी ठहराया, 40 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने प्रशासन के असहयोगी व्यवहार को प्रमुख रूप से सामाजिक विकास में बाधक बनने का श्रेय दिया तथा 23 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने माना की समय पर सूचनाओं के आदान–प्रदान के अभाव के कारण भी असफलता मिलती है।
11. आंकड़ों के आधार पर रीवा जिले के सामाजिक आर्थिक विकास में प्रशासकों की भूमिका घटती जा रही है जो कि महिला सशक्तिकरण के लिए शुभ सूचक रहेगा ऐसा कई अध्ययनों ने स्थापित भी किया है।
12. वास्तव में महिला प्रतिनिधियों का चयन आरक्षण जनित था जो कि किसी भी योग्यता परख पर आधारित नहीं था, यद्यपि महिलाओं के बीच में ही टकराहट की स्थिति कई जगह उत्पन्न हुई। परन्तु सभी माप दण्ड इनके लिए गिरा दिये गये, परन्तु 13 वर्ष बाद इन परिस्थितियों को एक मुद्दा बना कर आज इन्हें ग्रामीण राजनीति में जो स्थान प्राप्त है। उनके लिए अयोग्य ठहराना अपने आप में एक भूल होगी, क्योंकि वे समस्त गुणवादी विशिष्टताओं से युक्त हो गयी है जिन्हें समाज नेतृत्व के लिए आवश्यक मानता है।
13. आज स्व–विकास का माध्यम नेतृत्व बना है जिससे कि परिवार की प्रतिष्ठा गतिशीलता एवं उपादेयता में वृद्धि हुई है 79 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने यह माना कि उनकी परिवार की प्रतिष्ठा उनके प्रतिनिधि ने परिवार की प्रतिष्ठा में अपना योगदान न्यून माना। 18 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने उत्तर देना उचित नहीं समझा।
14. इसी तरह परिवार की गतिशीलता पर प्रश्न किया गया कि क्या आप के नेतृत्व से परिवार की गतिशीलता को प्रोत्साहन मिलता है? जिसका उत्तर 72 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने सहमति में दिया 10 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने असहमति में दिया एंव 18 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने उत्तर देने से इन्कार किया।
15. परिवारों की उपादेयता के संबंध में महिला प्रतिनिधियों का दृष्टिकोण जानने का प्रयास किया गया, क्योंकि यह मान्यता जन–मानस के मन में बनी हुई थी कि महिलाएं बिना परिवार के सुरक्षा कवच के क्षेत्र विशेष के सन्दर्भ में नही रह सकती तथा यह तथ्य तो पहले से स्थापित हो चुका है कि संयुक्त परिवार ही नगरीय विकास हेतु उपयुक्त है, इसी दृष्टिकोण के साथ यह पूछा गया कि क्या पारिवारिक उपयोगिता आप अपने कार्य क्षेत्र में समझती है?

जिसके प्रति उत्तर में 72 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने इसकी उपयुक्तता ही नहीं इसकी उपादेयता गिनाने में कमी नहीं की। वास्तव मे 28 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने अपना मत इस हेतु व्यक्त ही नहीं किया क्योंकि वे शादी–शुदा नहीं थी अथवा विधवा थी इत्यादि पर परिवार व्यवसाय के विरोध

में किसी भी महिला ने कहना उचित नहीं समझा इस निष्कर्ष पर वास्तव में कई अन्य अध्ययनों ने भी समर्थन किया है जिन में प्रमुख है महिला नेतृत्व एवं जातिः।

16. जाति प्रथा में खान–पान, उठना–बैठना, मेल–जोल सम्बन्धी रीति–रिवाज समाहित है, ऐसी मान्यता पूर्व में थी कि उच्च जाति वालों को निम्न जाति वालों की कच्ची रसोई नहीं खानी चाहिए तथा कुछ जातियों के साथ खान–पान संबंधी कठोर प्रतिबंध थे लेकिन आज के परिवेश में लोकतांत्रिक व्यवस्था के वशीकरण, ग्रामीण एवं परिवारों को इस आधुनिकता को अपनाना पड़ा है, ऐसा महिला प्रतिनिधियों के संबंध में भी परिलक्षित होता है। वास्तव में इस परिवर्तन के विभिन्न स्वरूप दिखाई पड़ते हैं जिसमें प्रमुख रूप से यह देखा गया है कि महिला प्रतिनिधि चाहे जिस भी ऊँची जाति की हो सबके साथ ऊँच–नीच का भेद–भाव छोड़कर भाई–चारे का संबंध रखने का तत्पर है एवं हर स्तर के लोगों के साथ उठना–बैठना, खाना–पीना, उत्सवों में भाग लेना पड़ता है, अतः नेतृत्व के लिए यह आवश्यक हो गया है। वह विभिन्न धर्म व सम्प्रदाय के लोगों को समान महत्व देने का प्रयास करती है यही कारण है कि राजनैतिक जीवन में उनकी सफलता परिलक्षित होती है। अतः हम यह कह सकते हैं कि पारिवारिक आधुनिकीकरण नेतृत्व के माध्यम से प्रभावित होता है।

उपरोक्त आशय को ज्ञात करने हेतु पूछा गया कि उनके नेतृत्व से उच्च जातियों अथवा निम्न जातियों से सम्पर्क बढ़ा है। 42 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने स्वीकार किया कि वे अन्य जातियों के यहां खान–पान का सम्बन्ध चुनाव उपरान्त बना 30 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने पारिवारिक संबंध बनने अन्य जातियों के यहां उत्सवों में सहभागिता हेतु अवसर प्राप्त हुए। अतः ये स्पष्ट हुआ कि सामाजिक दूरियां घटी हैं नवीन नगरीय प्रशासन के तत्वाधान में।

17. 74वें संवैधानिक संशोधन ने मार्ग प्रशस्त किया है, जिससे औद्योगीकरण, नगरीकरण, साक्षरता, क्षेत्रीयता, अपराधीकरण इत्यादि प्रभावित करते हैं। इसके विपरीत पितृ–प्रधान व्यवस्था एवं सामान्तवादी जाति व्यवस्था का प्रभाव कुछ न कुछ तो रहेगा ही।

शक्ति संरचना को प्रभावी करने वाले कारक पर प्रश्न किये जाने पर स्पष्ट रूप से जनसंख्यात्मक रूप से प्राथमिकता दी गयी जिसके अन्तर्गत 42 प्रतिशत महिला प्रतिभागियों ने अपना मत व्यक्त किया। दूसरा मत वित्तीय एंव संसाधन नियन्त्रण का आधार 26 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने व्यक्त किया। जबकि तीसरे मत से आपसी मेल–जोल एवं भाई–चारे पर आधारित शक्ति संरचना की बात कही गयी जिसमें 32 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने अपना मत व्यक्त किया जो कि वास्तव ने सहकारिता एवं सहयोग की माप में जालीतंत्र निर्माण का द्योतक है। उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि धरातलीय परिस्थितियां बदल रही है जो कि अन्य अध्ययनों के निष्कर्षों से भी समर्थित होता है।

18. सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन का जहां तक एक तरफ पूर्व उल्लेखित कारक जिम्मेदार है, वहीं से दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य इसके लिए सरकारी प्रयास का है। वास्तव में समस्त राष्ट्र के सामाजिक एवं सांस्कृतिक उत्थान हेतु पिछले 60 वर्षो से व्यापक चेष्टा की जा रही है, परन्तु इसकी सफलता या असफलता विवादास्पद ही रही है। अतः इसका मूल्यांकन आवश्यक समझा गया, यह ध्यान में रखते हुए परिवर्तनों को तीन श्रेणी में विभक्त किया गया है– प्रथम श्रेणी अच्छा लेकिन मन्द, द्वितीय श्रेणी अच्छा लेकिन तेज तथा तृतीय श्रेणी परिवर्तन के विरोध में था।

महिला प्रतिनिधियों से प्राप्त मतों से स्पष्ट हुआ है कि क्षेत्र विशेष में हो रहे सामाजिक परिवर्तन के विरोध में उत्तरदाताओं का प्रतिशत 42 था। परिवर्तनों को अच्छा मानते हुए मन्दगति वाले मत में 26 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने प्रकट किया। 32 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने परिवर्तन को अच्छा परन्तु तीव्र माना। अतः उक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि महिला प्रतिनिधियों ने अपने आपको बदलती हुई परिस्थितियों से आत्मसात किया है, परन्तु सामाजिक परिवर्तन से 42 प्रतिशत असन्तुष्ट है। यह निष्कर्ष भी अन्य शोध कार्यों द्वारा समर्थित ही रहा।

19. महिला प्रतिनिधियों की महत्वकांक्षाऐं उनकी सामाजिक सांस्कृतिक एंव आर्थिक पृष्ठिभूमि से निर्धारित होती है जिस तरह के परिवार में रहकर उनका सामाजीकरण हुआ होगा उसी तरह के सामाजिक प्रतिमानों एंव आदर्श व्यवहारों को वे प्रतिबिम्बित करेगी और उसी तरह का व्यक्तित्व विकसित होगा। महत्वकांक्षाओं के विषय में जानकारी लेने पर ज्ञात हुआ है कि 34 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि समाज सेवा की महत्वाकांक्षा लेकर चुनाव में भागीदारी निभाई थी, 26 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने सामाजिक सुधार लाने हेतु तथा शेष 18 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों ने दलगत राजनीति के कारण निर्वाचन मे भाग ली

जिससे यह स्पष्ट होता है कि 56 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि की भूमिका क्षेत्रीय राजनीति में सकारात्मक प्रतीत होती है, जबकि 44 प्रतिशत महिला प्रतिनिधि की भूमिका परम्परावादी है जो कि अन्य अध्ययनों से पुष्टि होती है,

सुझाव :–

1. जनतांत्रिक समाज में कार्य व्यक्तिगत आदेश से नहीं बल्कि संविधान, विधान, नियमों और कार्य प्रणालियों से होता है इन्हें जाने बिना राजनीतिक प्रक्रिया में सहयोगी नहीं बनाया जा सकता है। इसी दृष्टि से नगरीय निकायों के कार्यों में महिलाओं की सफल भागीदारी के लिए उनका शिक्षित होना आवश्यक है।
2. मीडिया का उपयोग कर महिलाओं में राजनीतिक अभिरूचि और अभिप्रेरणाओं को विकसित किया जा सकता है।
3. शासकीय एजेंसियों के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रों में अतीत व वर्तमान में सफल रही महिलाओं के विषय में व्यापक प्रचार कर महिलाओं में स्त्री शक्ति चेतना उत्पन्न करनी चाहिए।
4. महिलाओं में आत्मविश्वास उत्पन्न कर राजनीति में उनकी सहभागिता में सुधार किया जा सकता है।
5. महिलाओं में नेतृत्व के गुणों का विकास होना आवश्यक है जिसके माध्यम में राजनेत्री के रूप में वे जनता का प्रतिनिधित्व कर सकेगी।
6. नगर निगम में महिलाओं को स्थानीय निकायों में राजनीतिक पद ग्रहण करने के पश्चात् उनके पद संबंधी उनके ज्ञान को विकसित करने के लिए उन्हें प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
7. रीवा नगर निगम के अंतर्गत शहरी क्षेत्र में महिलाओं को नुक्कड़ – नाटक के माध्यम से उनके अधिकारों के प्रति जागृत करना चाहिए।
8. नगरीय निकायों तक सीमित न रखकर महिलाओं को विधानसभा व लोकसभा चुनाव में भी भाग लेना चाहिए।
9. महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक एवं राजनीतिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए सरकार द्वारा प्रत्यन किये जाने चाहिए जिससे इनका पिछड़ापन समाप्त हो सके।
10. समाज कल्याण विभाग द्वारा कियान्वित योजना का लाभ महिलाओं को भी मिलना चाहिए।
11. समाज में व्याप्त रूढ़िवदिता महिलाओं को आत्मनिर्भर बनने एवं स्वतंत्रतापूर्वक जीवन यापन करने से रोकती है उसे समाप्त करने के लिए प्रयास किये जाने चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

- डॉ. राधेशरण – 2000, मध्यकालीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
- डॉ. राजीव कुमार – 2012, नगरीय समाजशास्त्र, सुमित एन्टरप्राईजेस, नई दिल्ली।
- डॉ. रमनसिंघ – 2012, नगरीय समाजशास्त्र, सुमित एन्टरप्राईजेस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण।
- डी.पी. माथुर – 2011, ग्रामीण समाजशास्त्र, वर्ल्ड बुक्स दीपविला, जयपुर राजस्थान– 2011।
- अमित अग्रवाल – 2010, भारत में नगरीय समाज, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली–7।
- सिसोदिया, यतीन्द्र (2003), मध्यप्रदेश की ग्राम पंचायतों में अनुसूचित जाति महिला नेतृत्व, पूर्व देवा सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका, उज्जैन, पृष्ठ 20।
- मध्यप्रदेश राज्य निर्वाचन आयोग, पंचायत आम निर्वाचन 2014–2015।
- भदौरिया, जितेन्द्र सिंह एवं गौतम राकेश (2019), मध्यप्रदेश एक परिचय, एम.सी.ग्रेव हिल एजूकेशन (इंडिया) प्राईवेट लिमिटेड, चेन्नई, पृष्ठ 19.5।
- सक्सेना, आलोक (2015), मध्यप्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम, इण्डिया पब्लिशिंग कम्पनी, इन्दौर, पृष्ठ–22।
- भदौरिया, जितेन्द्र सिंह एवं गौतम, राकेश (2019), वही. पृष्ठ संख्या 195।
- मिश्र, यतीश (2015), ग्रामीण स्थानीय प्रशासन, यादव, सुषमा एवं गौतम, बलवान (संपा.), लोक प्रशासन सिद्धांत एवं व्यवहार, ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पृष्ठ 446।
- महीपाल (2015), पंचायती राज चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, नई दिल्ली, पृष्ठ 14–22।
- भारत का संविधान, 9 नवम्बर, 2015 को यथाविद्यमान, भारत सरकार विधि एवं न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), राज भाषा खण्ड, नई दिल्ली, पृष्ठ 147–148।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

महिला सशक्तिकरण तथा शैक्षिक जागरूकता अनुशीलन

राजश्री साहू
डॉ. मंजू शर्मा

ज्योति विद्यापीठ वूमेन्स विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

जनजाति क्षेत्रों में महिला सशक्तिकरण तथा उनकी शैक्षणिक में जागरूकता के लिए महिला सशक्तिकरण के माध्यम से महिलाओं के विकासशील अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदानकर्ता हैं और बच्चे भविष्य की पूँजी हैं। आज लगभग पचास प्रतिशत जनसंख्या जनजाति क्षेत्रों की महिलाओं की है जबकि 42 प्रतिशत 18 वर्ष की आयु से कम की हैं। जनजाति क्षेत्रों में महिला सशक्तिकरण व शैक्षणिक विकास को सच्चे मायने में सर्व–समावेशी होने के लिए इनकी सुरक्षा, कल्याण, विकास, सशक्तिकरण और भागीदारी को सुनिश्चित किया गया है।

भारत सहस्राब्दि के विकास लक्ष्यों को पूरा करने के लिए वचनबद्ध है और यह महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति संबंधी अभिसमय और बाल अधिकारों संबंधी अभिसमय समेत अनेक अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों का हस्ताक्षरकर्ता है। फिर भी ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारंभ में, महिलाएं, हिंसा, उपेक्षा और अन्याय के शिकार बने हुए हैं। ग्यारहवीं योजना लिंग को एक अन्य मूल विषय के रूप में देखते हुए इन समस्याओं का समाधान करने का प्रयास किया गया है। इसमें महिला शक्ति और महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता को मान्यता दी गई है। साथ ही, इसमें सभी आयु, समुदायों और आर्थिक समूहों के जीवित रह सकने, उनकी सुरक्षा और समग्र विकास को सुनिश्चित किया गया है।

पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य महिलाओं के साथ किए जाने वाले अनेक प्रकार के बहिष्कारों और भेदभावों को समाप्त करना प्रमुख लक्ष्य है, यह सुनिश्चित करना है कि देश की प्रत्येक महिला अपनी पूरी क्षमता तक विकसित होने में सक्षम हो और आर्थिक विकास और समृद्धि का लाभ उठा सके। सफल भागीदारीपूर्ण दृष्टिकोण से महिलाओं का सशक्तिकरण होना जो स्वयं के विकास में भागीदार बनते हैं, अपनाने की हमारी योग्यता पर निर्भर करती है। इसके लिए रूपरेखा राष्ट्रीय महिला नीति 2001 बनाई जा चुकी है।

सभी महिलाएं सजातीय श्रेणियों के नहीं है, वे विभिन्न जातियों, वर्गों, समुदायों, आर्थिक समूहों से संबंधित होते हैं, और भौगोलिक और विकास क्षेत्रों के एक दायरे में रहते हैं, परिणाम स्वरूप, कुछ समूह अन्य की अपेक्षा अधिक कमजोर होते हैं। मानचित्रण और इन बहुविविध स्थानों से उत्पन्न होने वाली विशिष्ट कमियों को समाप्त करना नियोजित हस्तक्षेपों की सफलता के लिए आवश्यक है। सामान्य कार्यक्रमगत हस्तक्षेपों के अलावा इन समूहों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विशेष लक्ष्य पूर्ण भी किए जाने पर बल दिया गया है।

सामाजिक संरचना के स्थायित्व के साथ ही अनेक खामियाँ भी आने लगी, अहं की भावना के प्रादुर्भाव ने सामाजिक व्यवस्था को छिन्न–भिन्न करने में महती भूमिका का निर्वाह किया ओर इस स्थिति के जन्म से सर्वाधिक हानि जिसे पहुँची थी वह है भारतीय नारी जिसे समाज ने द्वितीय दर्जा दे दिया गया। तदुपरान्त एक मानसिक भ्रांति का उद्भव हुआ और महिलाओं की महत्ता स्वीकार की जाने लगी है।

आदिकालीन अर्थव्यवस्था प्रत्यक्ष रूप से जनजातीय क्षेत्रों की जीविका पालन या जीवन धारणा से संबंधित है। जीवन धारण के लिए आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन करना उनका वितरण तथा उपभोग करना ही उनकी आर्थिक क्रियाओं का आधार और लक्ष्य होता है और वे क्रियाएँ एक आदिम समाज की संपूर्ण पर्यावरण विशेषकर भौगोलिक पर्यावरण के द्वारा बहुत प्रभावित होती है इसीलिए जीवन यापन या जीवित रहने के साधनों को बिताने के लिए आदिम लोगों को कठोर परिश्रम करना पड़ता है। आर्थिक जीवन अत्यधिक संघर्षमय तथा कठिन होने के कारण आर्थिक क्षेत्र में अन्य क्षेत्र की भाँति, प्रगति की गति बहुत धीमी होती हैं।

संक्षेप में आदिकालीन अर्थव्यवस्था एक ओर प्रकृति की शक्तियों और प्राकृतिक साधनों फल–फूल, पशु–पक्षी, पहाड़ और घाटी नदी तथा जंगलों आदि पर निर्भर है और दूसरी ओर परिवार से घनिष्ठ रूप से

संयुक्त है। आदिकालीन मानव प्रकृति द्वारा प्रदत्त सामग्री से अपने उपकरणों का निर्माण करता है और उनकी सहायता से परिवार के सब लोग उदर पूर्ति के लिए कठोर परिश्रम करते है। इस परिश्रम का जो फल उन्हें प्राप्त होता है, उससे आर्थिक आवश्यकताओं तथा प्राकृतिक शक्तियों और साधनों के बीच केवल एक संतुलन स्थापित हो सकता है। धन को इकट्ठा करने या उत्पादन के साधनों पर एकाधिकार प्राप्त करने और उनके बल पर दूसरों पर अपनी प्रभुता स्थापित करने की बात शायद ही कोई सोचता हो। परिवार का आर्थिक स्वार्थ प्रायः सामूहिक स्वार्थ के साथ इतना अधिक घुलमिल जाता है कि इन दोनों को पृथक करना कठिन होता है।

जनजाति क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर है। कृषि उपकरणों से लगाकर जमीन की विशेषताओं तक आँका जा सकता है। किसी के पास सबसे अधिक उपजाऊ जमीनें है तो किसी के पास नाम मात्र के लिए ही खेती का टुकड़ा उपलब्ध है। कोई ढलानी या पहाड़ी जमीन पर ही अपने श्रम को सार्थक करता दिखाई देता है तो कोई मैदानी काली मिट्टी में सर्वाधिक अन्न उपजाकर पटेल का खिताब अर्जित किए हुए हैं, जो खेती मुख्य व्यवसाय है और इसी के माध्यम से इनका जीवन निर्वाह भी हो रहा हैं।

रोजनदारी खेती मजदूरी जनजाति महिलाओं की वह मजदूरी है जो मुद्रा अथवा अनाज के रूप में श्रम के द्वारा कृशक से प्राप्त करता है। जिन लोगों के पास खेती उपलब्ध नहीं है अथवा कम है वे लोग अपने ही समाज के पटेल के यहाँ अन्य कृषकों की निंदाई, गुड़ाई और बोआई के लिए दाड़की (मजदूरी) पर पहुँचते है। मूंगफली तोड़ने, कपास चुनने तथा पानी डालने का काम महिलाएँ बड़ी कुशलता से सम्पन्न करती है। इसके अतिरिक्त ज्वार काटने या गन्ना छिलने के लिए काम के लिए भी आवश्यकतानुसार पूर्व सूचना मिलने पर महिलाएँ ही खेतों में काम करने के लिए पहुँचती हैं।

यह कार्य वर्ष–भर तक नहीं चलता केवल दो या तीन माह तक फसलें कटने तक इन्हें यह मजदूरी प्राप्त होती रहती है। रोजनदारी मजदूरी के लिए कभी–कभी कृषक आदिवासी भी खेती में काम करते देखे गये हैं। किन्तु महिलाओं की अपेक्षा पुरूषों की संख्या कम है। कृषक के पास मुद्रा न होने के कारण उन्हें अनाज या अन्य उपलब्ध वस्तुएँ गुड़, चावल, मक्का, ज्वार, बाजरा कपास आदि पूर्व अनुबंध के हिसाब से मजदूरी के रूप में दी जाती है।

कमदारी या वरसूदिया खेती मजदूरी इस क्षेत्र के जनजाति महिलाओं की आर्थिक व्यवस्था का प्रमुख साधन है। यह मजदूरी वह मजदूरी है, जिसमें व्यक्ति किसी बड़े काश्तकार द्वारा वर्ष–भर के लिए अथवा उससे अधिक समय के लिए निश्चित मुद्रा अथवा अनाज के बदले अनुबन्धित कर लिया जाता है। निश्चित अवधि के पूर्व स्वयं के द्वारा कार्य छोड़ने पर उसे अपने श्रम का कटोत्रा भी चुकाना पड़ता हैं।

महिला सशक्तिकरण का अर्थ एवं परिभाषा :– इसका सामान्य अर्थ यही है कि महिलाओं को अधिकार सम्पन्न बनाया जाये। उनको मानवाधिकार प्रदान कर, उसके अनुकूल सामाजिक परिस्थितियाँ उत्पन्न की जायें ताकि महिला प्रवर्ग अपना समुचित विकास कर सके। परिभाषा–

1. महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य है कि महिला अपने अस्वित्व की स्थापना करके अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके।

2. महिला सशक्तिकरण का अर्थ है नारी अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर सर्वांगीण विकास कर सकें जिससे उसका सशक्त स्थायित्व समाज में स्थापित हो और इसका तात्पर्य उसकी स्वतंत्रता आत्मनिर्भरता महत्ता से है। अर्थात् महिला की पहचान होना, पहली शर्त है। वर्तमान कालीन सामाजिक परिवेश में अधिकांश महिलाओं की अपनी पहचान है ही नहीं। वह तो मात्र किसी की पत्नी या किसी की माँ है। बस यही उनकी पहचान है। उनके 'नाम' से उन्हें बहुत कम लोग जानते हैं। ऐसी महिलाओं का समस्त जीवन, परिवार एवं समाज की सेवा करते–करते ही बेनामी की धुंध में गुम हो जाता हैं इन्होंने अपने व्यक्तित्व के विकास की ओर कभी ध्यान ही नहीं दिया।

वस्तुतः जब अस्तित्व ही नहीं होगा तो व्यक्तित्व के विकास की बात करना व्यर्थ है। भारत की अनेक महिलाओं का जीवन स्तर मानवीय श्रेणी के मापदण्डों से काफी भिन्न है। दरअसल इन महिलाओं का मानव माना ही नहीं जाता। यदि माना जाता तो उनके साथ समानता का न्यायोचित व्यवहार किया जाता, ना कि मारपीट, प्रताड़ना, उपेक्षा एवं अवहेलना।

इसी तारतम्य में भारत में प्रथम प्रधानमंत्री

श्री जवारलाल नेहरू जी 1958 में फारवर्ड वोमेन ऑफ इंडिया में लिखा था कि ''फ्रांस के किसी आदमी ने लिखा था कि किसी भी देश की स्थिति को देखने का सर्वश्रेष्ठ तरीका है, उस देश की स्त्रियों की स्थिति का पता लगाना। मेरे विचार से यह ठीक है। भूतकाल के कई प्रसिद्ध उदाहरणों के बाद भी यह कहना सत्य होगा कि भारत में पिछले वर्षों से महिलाओं की स्थति, कानूनी या सार्वजनिक जीवन में किसी भी दृष्टिकोण से अच्छी नहीं रही है। हाल ही के कुछ वर्षों में राजनीतिक एवं मानवीय गतिविधियों के अन्य क्षेत्रों में उन्होंने प्रगति की है। मुझे प्रसन्नता है कि हमारी संसद ने भी हाल ही में कुछ विधान पारित किये हैं। जिन्होंने महिलाओं को कानूनी रूप से कई बंधनों से मुक्ति दे दी है। इस प्रकार स्त्रियों की स्थिति को अच्छा बनाने में मदद पहुंचाई है फिर भी अभी कई बाधाएं हैं जिन्हें दूर करना है।'' 1930 में महात्मा गांधीजी ने कहा था कि– ''महिलाओं को कमजोर कहना उनका अपमान है। पुरूषों के प्रति अन्याय है।''

संबंधित साहित्य का पुनर्रावलोकन :–

जे.के. मिश्रा ने अपने अध्ययन ''जनांकिकीय के सिद्धांत'' में जनसंख्या का वितरण क्षेत्रीय विभिन्नताएँ, जनसंख्या के विविध पक्ष जैसे जीवन प्रत्याशा, साक्षरता, लिंगानुपात का आवर्जन, प्रवर्जन जैसी समस्याओं पर प्रकाश डाला है।

पुष्पलता मिश्रा (2003) ने अपने अध्ययन ''देवास जिले में जनांकिकीय परिवर्तनों का अध्ययन'' में जनसंख्या के आकार, संरचना एवं वितरण के विभिन्न पहलुओं में जो परिवर्तन होते हैं तथा परिवर्तन के पश्चात् जो परिणाम उभर कर आते हैं तथा औद्योगिकीकरण तथा जनसंख्या नीति के प्रभाव के कारण आर्थिक परिवर्तन को केन्द्रित किया है।

संजय पाण्डेय (1993) ने अपने अध्ययन ''दक्षिण पश्चिम मध्यप्रदेश के आदिवासियों का सामाजिक–आर्थिक शोषण'' में जनजातियों का आर्थिक–सामाजिक शोषण के कारण आर्थिक उत्थान नहीं हुआ है तथा सरकार की नीति तथा राजनैतिक प्रभाव के कारण जनजातीय वर्ग समाज की मुख्य धारा में शामिल होने से वंचित हुआ है।

एम.एस. कृष्णा रेड्डी (1991) ने अपने अध्ययन में ''जनसंख्या की दर को नियंत्रित करने में साक्षरता'' में विशेष रूप से महिला साक्षरता का विशिष्ट योगदान है। शिक्षा को प्राथमिक स्तर से बढ़ाकर माध्यमिक व उसके ऊपर के स्तरों तक ले जाने से जनसंख्या नियंत्रण में काफी मदद मिलेगी।

शिरीन जे. (1995) ने अपने अध्ययन में महिलाओं की शिक्षा को महत्वपूर्ण माना है।

चिरंजीव गुप्ता (2001) ने अपने अध्ययन में बताया की महिला साक्षरता से प्रजनन दर में कमी आती है।

नाथ (1991) में अपने अध्ययन में बताया की लिंगानुपात के पतन की प्रवृत्ति को समझने के लिए आर्थिक व सांस्कृतिक तत्व महत्वपूर्ण होते है।

प्रीति रस्तौगी (2000) ने अपने अध्ययन में लैंगिक अनुपात में गिरावट औरतों की संख्या में कमी हुई है जिसमें स्त्रीभ्रूण का गर्भपात, जन्मोपरांत स्त्री शिशुओं की हत्या इत्यादि के कारण रहे हैं।

प्रो. सच्चिदानन्द ने अपने एक अन्य आनुभविक अध्ययन के आधार पर अन्य निष्कर्ष दिया है कि भारतीय समाज के अन्य विभागों की तरह जनजातियों के अन्तर्गत भी परम्परागत एवं आधुनिक निरपेक्ष दोनों प्रकार के मूल्यों का समन्वय है। इनकी व्याख्या संस्कृतिकरण या पश्चिमीकरण किसी एक के द्वारा नहीं की जा सकती। यद्यपि इन दोनों में पश्चिमीकरण का अधिक महत्व है। निम्नतम सोपान पर आसीन हरिजनों के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए पश्चिमीकरण का धर्मनिरपेक्ष मूल्यों पर अधिक बल दिया जा रहा है। आपके अनुसार अनुसूचित जातियों में शिक्षा, व्यावसायिक, गतिशीलता, महत्वपूर्ण सरकार पदों पर नियुक्ति और नौकरियों में संरक्षण एवं आरक्षण की नीति से उनमें पनपी राजनैतिक जागरूकता और उभरी राजनैतिक चेतना के कारण काफी परिवर्तन हुए है और निश्चित रूप से उनकी सामाजिक, आर्थिक, और राजनैतिक स्थितियाँ पहले से बेहतर हुई है और इन्ही कारणों से अनुसूचित जातियों में राजनीतिकरण भी हुआ है। जिससे उनकी प्रतिष्ठा तथा सामाजिक परिस्थिति भी सकरात्मक दिशा में बढ़ी है।

मेहता पी.ए. (इमजिंग पैटर्न्स ऑफ रूरल लीडरशीप 1972:5) ने अपने अपने अनुसंधान कार्य के निष्कर्षो को उद्घाटित करने हुए लिखा है कि–(1) महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता बढ़ी है। (2) युवाओं का राजनीति में प्रतिनिधित्व बढ़ा है। (3)

परम्परागत नेतृत्व में बदलाव आया है। (4) मूल्य रहित राजनीति को प्रोत्साहन मिला है। (5) राजनीति में आक्रमण तेवर तथा दलबदल शैली बलवती हुई है। (6) मतदान व्यवहार के सन्दर्भ में मतदान से पूर्व एवं पश्चात् की परिस्थितियों में बदलाव हुआ है कि मतदान अपने मताधिकार का प्रयोग खुलकर नही करता। (7) मतदान केन्द्रो पर अराजकता, लूटपाट तथा अधिकार कर लेना, बूथ कैप्चरिंग तथा मतदान पेटी को उठा ले जाने आदि जैसी प्रवृत्तियों में बेतहांशा वृद्धि हुई है, इत्यादि ऐसे नवीन प्रतिमान है जो स्वच्छ पारदर्शी तथा निष्पक्ष राजनीति के मार्ग में बाधक है।''

प्रो. मेगार्ड पी. (ग्रामीण सामाजिक संरचना एवं गुटबन्दी राजनीतिक सन्दर्भ में 1974:103) का कहना है कि वर्तमान समय में राजनीति में गुटबन्दी हावी है, जिसके मूल में ग्रामीण परम्परागत समुदाय के निम्न वर्गो की रोजी रोटी का मूल प्रश्न, बदलते राजनीति परिदृश्य मे निहित है। इस चेतना को जागृत करने में आरक्षण, पंचायतीराज की त्रिस्तरीय व्यवस्था, वर्तमान शिक्षा, बेरोजगारी, राजनीति घटनाक्रमों तथा जनसंचार साधनो की बढ़ती भूमिकाएं प्रमुख है। आज समूचे राष्ट्रीय सोच का इस सन्दर्भ में राजनीतिकरण हो गया है। यहां तक कि अशिक्षित तथा शिक्षित बेरोजगार युवक राजनीति करने के प्रति विशेष रूप से आकर्षित एवं उन्मेशित है। बदलते परिवेश में उत्तरदायी कारक के रूप में उनका आर्थिक व सामाजिक समृद्धि के प्रति निहित आकर्षण, उन्हें राजनीति करने के लिए मुख्य प्रेरक है जिससे अनुसूचित जातियों के लोगों की राजनीतिक रूचि तथा राजनीतिक जागरूकता में वृद्धि हुई है।

त्रिपाठी बंशीधर (अनुसूचित जाति व आदिवासी में मतदान व्यवहार एवं राजनीति का परिवर्ती परिवेश 1976 : 95) ने लिखा है कि बदलते परिवेश में भय व आतंक के कारण कमजोर वर्गो के लोग मतदान करने तक नहीं जाते; यहां तक कि मतदान के दिन मतों का खुलकर क्रय विक्रय होता है। मतदान के प्रति उदासीनता भी भारतीय मतदाताओं की अपनी विशेषता है। ऐसे व्यक्तियों के कारण भारतीय लोकतंत्र में जनहित उजड़ रहा है, मतदान केन्द्रो पर कब्जा/अधिकार कर लेना, वोट न डालने देना, अनुसूचित तथा निर्बल वर्गो के मतदाताओं के मताधिकार का प्रयोग स्वयं तथा डरा धमका कर जबरन उनके वोट डाल लेना, उनके साथ मारपीट कर डालना, उन्हें आतंकित करना आदि स्पष्ट उदाहरण है, जो भारतीय लोकतांत्रिक प्रक्रिया में विशेष रूप से बाधक है, तथा दूसरे के अधिकारों को छीन लेना हैं। इस रूप में भारतीय लोकतंत्र असफल कहा जा सकता है।

संदर्भ सूची :–

1) शर्मा ललिता 1990 मुरादाबाद मंडल में अनुसूचित जातियों के छात्र–छात्राओं के जीवन प्रतिमानों में हो रहे परिवर्तन व गतिशीलता के अध्ययन, कष्णा प्रिंटिंग प्रेस, बरेली, उ.प्र. पृ0–141

2) सर्वश्री श्यामलाल 1981 दलित समाज का अध्ययन; हिन्दी प्रकाशन बॉम्बे पृ0 : 30

3) समाजशास्त्री प्रो. लिंच 1969दि पॉलिटिक्स ऑफ अनटचेबिलिट, कोलम्बिया युनिवर्सिटी, प्रेस कोलम्बिया, पृ0–130

4) सच्चिदानन्द 1977 द हरिजन इलीट पापुलर प्रकाशन बॉम्बे पृ0 : 65

5) सक्सेना ज्योत्सना 1999 पंचायतीराज में महिलाओं की भागीदारी, ''सामाजिक सहयोग'' राष्ट्रीय शोध पत्रिका, उज्जैन अंक 23, पृ0 10

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

महिला सशक्तिकरण के माध्यम से गरीब महिलाओं की स्थिति का अध्ययन

रितु वैश्य (शोधार्थी)
डॉ. मिनी अमित अरवतिया
निदेशक, अनुसंधान और विकास निदेशालय, ज्योति विद्यापीठ वूमेन्स विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

महिला सशक्तिकरण के माध्यम से गरीब महिलाओं को उद्योगों से जोड़ने के लिए विकासात्मक आयोजन की प्रक्रिया अपनाई जा रही हैं। जयपुर में गरीबी के नीचे जीवन यापन करने वाली जनसंख्या का प्रतिशत बहुत ऊँचा हैं। जयपुर शहर भारत के सर्वाधिक पिछड़े हुए क्षेत्रों में से एक हैं। इस क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों की बहुलता हैं। कुटीर लघु उद्योगों द्वारा अप्रयुक्त संसाधनों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है और गरीबी के नीचे जीवन–यापन करने वाली जनसंख्या को ऊपर उठाया जा सकता हैं। बेरोजगारी व अल्पबेरोजगारी सबसे घृणित रूप में इन क्षेत्र को तबाह किये हुए हैं। इसका बड़ा समाधान कुटीर लघु उद्योगों का प्रसार हैं।

यह सामान्य विश्वास की बात हैं कि कुटीर लघु उद्योग राज्य के विभिन्न भागों में आसानी से खोले जा सकते है, जिससे कुटीर उद्योगों का विकेन्द्रीकरण एवं संतुलित आर्थिक विकास सुनिश्चित होगा। कुटीर लघु उद्योगो में अधिक पूँजी व उच्च प्रशिक्षण प्राप्त श्रमिकों की कम आवश्यकता पड़ती हैं। कुटीर लघु उद्योगों के बहुत से लाभों के बावजूद भी ऐसा माना जाता हैं, कि ये कुटीर उद्योग आर्थिक रूप से बहुत लाभदायक नहीं होते। इनके कार्य चालन की लागत तुलनात्मक रूप से अधिक होती हैं।

इन कुटीर उद्योगों में पूँजी तथा श्रम दोनों की कार्यक्षमता कम होती है, पर विभिन्न शोधकर्ताओं के विभिन्न जगहों के अध्ययन में यह प्रकाश में आया हैं कि उपरोक्त बाते सही नहीं हैं। जयपुर जिले में लघु उद्योगों के बहुआयामी अध्ययन नहीं किये गये। वर्तमान अध्ययन में कुटीर लघु उद्योगों के सही स्थिति एवं उनकी संभावित्ता के बारे में गहराई से अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

ऐसे कुटीर लघु उद्योग जिनका उत्पादन सरकारी संस्थाओं के आदेशों पर निर्भर करता है। उनके उत्पाद के मांग में तीव्र दर से वृद्धि संभव नहीं हैं, क्योंकि कुटीर लघु उद्योगों द्वारा उत्पादित माल की जनता में मांग कुछ निश्चित आर्थिक दशाओं पर निर्भर करती हैं। कुटीर लघु उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं के बाजार में वृद्धि के लिये उत्पाद के मदों में परिवर्तन आवश्यक हैं। इंजीनियरिंग एवं तत्संबंधी उद्योगों को छोड़कर और किसी भी कुटीर उद्योग में वाराणसी में सहायक उद्योगों का विकास नहीं हो पाया हैं। सहायक कुटीर उद्योगों के न होने से बड़े उद्योग अपनी आवश्यकता की वस्तुऐं क्षेत्र के बाहर से लेते है। सहायक कुटीर उद्योगों को विकास कुटीर लघु उद्योगों का उत्पादन में निरंतरता को बढ़ायेगा क्योंकि सहायक उद्योग अपनी आवश्यकता की वस्तुऐं लघु उद्योगों से ही प्राप्त करती हैं।

विभिन्न चरों के उत्पादन पर प्रभाव के अध्ययन में यह पाया गया हैं कि पूँजी का उत्पादन पर बहुत ही कम प्रभाव पड़ा। स्थिर पूँजी पर हुए विनियोग का ठीक से उपयोग नहीं हो पा रहा हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता हैं कि कुटीर लघु उद्योगों में क्षमता का कम उपयोग हो रहा हैं। यदि पूँजी को कम कर दिया जाये तो शायद इसका उत्पादन पर कोई प्रभाव न हो। श्रम इंजीनियरिंग एवं तत्संबंधित उद्योगों में सार्थक रहा हैं, पर ज्यादातर दशाओं में यह बहुत कम रहा, जो यह प्रदर्शित कर रहा हैं कि कुटीर लघु उद्योगों में श्रम को अतिरोजगार प्राप्त हैं। अन्य कुटीर उद्योगों को छोड़कर लगभग सभी उद्योगों में कच्चामाल लघु उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि हेतु महत्वपूर्ण चर हैं।

कच्चे माल की आपूर्ति में बाधा कुटीर लघु उद्योगों के उत्पादन को बुरी तरह प्रभावित करती हैं। कुटीर लघु उद्योगों की वित्तीय स्थिति अत्यंत दयनीय हैं, जिससे कभी–कभी ये अभ्यंशित कच्चे माल का भी उपयोग नहीं कर पाते, केवल कुछ इकाईयाँ ही अभ्यंशित कच्चे माल का उपयोग कर पाती हैं। बहुत सी इकाईयाँ इस सुविधा को अस्वीकार कर देती हैं। कच्चे माल के अभ्यंश के वितरण में भी बहुत से कुप्रबंध हैं, जो कुटीर लघु उद्योग के कार्यचालन व अन्तः लाभ प्रदत्ता को बहुत बुरी तरह प्रभावित करते हैं।

विभिन्न स्थानों पर कच्चे माल का भण्डारण करके भी इनकी आपूर्ति को नियमित किया जा सकता

हैं। विकल्प रूप में एक सुझाव यह हो सकता है कि उद्योगपतियों के बीच सहकारिता का निर्माण हो जो कच्चे माल की समस्या को कुछ हद तक शायद दूर कर सके। अभ्यंश एवं लाइसेंस हेतु उद्योग निर्देशालय में बार–बार दौड़ने से जो समय व ऊँर्जा की बर्बादी होती हैं, उसका भी उद्योगपतियों के आत्मविश्वास पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता हैं। अभ्यंश वितरण की वर्तमान प्रणाली की जगह कच्चे माल की सहकारी खरीद इसकी समस्या को कम कर सकती हैं।

कुटीर उद्योगों की पूँजी संरचना में यह देखा गया हैं कि इसमें विभिन्न वर्षो में कार्यशील पूँजी का कुल पूँजी से अनुपात 40 प्रतिशत हैं तथा स्थिर पूँजी का कुल पूँजी से अनुपात 60 प्रतिशत हैं। कार्यशील पूँजी का अनुपात वस्त्र उद्योगो, इंजीनियरिंग एवं तत्संबंधी उद्योगों तथा भवन निर्माण सामग्री उद्योगों में अधिक हैं। विभिन्न उद्योगों में कार्यशील पूँजी की गणना उनके वास्तविक क्षमता उपयोग के आधार पर की गयी हैं। यदि उत्पादन पूर्ण क्षमता उपयोग पर हो तो कुल पूँजी संरचना में कार्यशील पूँजी का अधिक अनुपात यह बताता हैं, कि इन उद्योगों को प्रारंभ करना इनके कार्यचालन से आसान हैं।

यह बहुत ही आवश्यक हैं कि कुटीर लघु उद्योगों को अत्याधिक मात्रा में संस्थागत वित्त की आपूर्ति करायी जाये। वाणिज्यिक बैंक जो कुल आपूर्ति वित्त का लगभग 41 प्रतिशत भाग प्रदान करते हैं, वह बहुत कठिनाई से कुटीर उद्योगों की आवश्यकता हेतु पूरा पड़ता हैं। नीची विनियोग स्तर की इकाईयां जमानत के अभाव में वाणिज्यिक बैंकों से ऋण लेने में असमर्थ रहती हैं। उनकी कार्यशील पूँजी हेतु ऋणों के आवेदन को अनार्थिक तथा ऋण वापसी में असमर्थ कहकर निरस्त कर दिया जाता है। ऐसा अनुभव किया गया हैं कि कुटीर लघु औद्योगिक इकाईयों को उनके कार्यचालन के तत्कालिक स्थिति के आधार पर साख हेतु अयोग्य माना जाता है। बैंकों को ऋण के अनुमोदन में और उदार तरीका नहीं अपनाता। वर्तमान में बहुत से कुटीर लघु उद्योग कर्ज लेने के बाद अपने को बीमार घोषित करने में जरा सी विलम्ब नहीं करते। बहुत से कुटीर लघु उद्योग इस क्षेत्र में केवल सुविधाओं की ही वजह से हैं। कर्ज के प्रार्थना पत्रों को बहु बारीकी से जांचने की आवश्यकता हैं। कर्ज के अनुमोदन के समय यह बहुत ही आवश्यक हैं कि इकाईयों के साख की आवश्यकता को बैंक कर्मचारियों द्वारा बहुत बारीकी से देखा जाये तथा यह सुनिश्चित किया जाय कि जमानत के अभाव में इकाई की वित्तीय आवश्यकता प्रभावित न हो तथा साथ ही बैंकों का हित भी सुरक्षित रहे।

कुटीर उद्योगों में उत्पादित रोजगार दक्ष व अदक्ष दोनों तरह का हैं। कुल रोजगार में दक्ष श्रमिकों का हिस्सा सभी उद्योगों में अधिक रहा, जो प्रशिक्षण केन्द्रों की लघु उद्योगों के संवर्धन में भूमिका को बताता हैं। कुटीर लघु उद्योगों में लगे श्रमिकों में भाड़े के श्रमिकों का प्रतिशत सबसे अधिक हैं, तथा स्वामी श्रमिकों का प्रतिशत सबसे कम हैं। उद्योगों का उत्पादन ज्यादातर आदेशों पर निर्भर करता है ये आदेश वर्ष भर निरंतर नहीं प्राप्त होते। अंतः इनमें रोजगार सृजन कभी कम तो कभी अधिक होता हैं। रोजगार सृजन भिन्न–भिन्न उद्योगों में भिन्न–भिन्न होता हैं।

केवल सरकारी खरीद ही कुटीर लघु उद्योगों के विपणन की समस्या का समाधान नहीं कर सकती क्योंकि अधिकांश लघु उद्योग ऐसी वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। जिनकी सरकारी संस्थाओं को आवश्यकता नहीं होती। विपणन के फैलाव में माल की गुणवत्ता और उनका आकर्षक आकार बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं। कुटीर लघु उद्योगों में गुणवत्ता की तरफ आयी चेतना तथा आकर्षक पैकिंग उनके बाजार को फैला सकती हैं। कुटीर लघु उद्योगों के संवर्धन में सरकार बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। सरकार लघु उद्योगों द्वारा उत्पादित माल के प्रसार हेतु विभिन्न समयों एवं विभिन्न जगहों पर व्यापार मेलों का आयोजन करती हैं। कुटीर लघु उद्योगों में सहकारिता का विकास भी इसके विपणन की समस्या को कुछ हद तक दूर कर सकता हैं। कुटीर लघु उद्योगों के विपणन की रणनीति ऐसी हो जिससे उनकी बिक्री बढ़ सके, वे उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को समझ सके। एवं अपना उत्पादन उसी के अनुरूप कर सके। दूसरे विपणन की व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए, जिसमें उपभोक्ताओं को अधिमान्यता मिले। व्यावसायिक, गतिविधियाँ ऐसी हो जिससे उपभोक्ताओं की आवश्यकता को पहचाना जा सके, तथा उसको पूरा किया जा सकते।

विभिन्न कुटीर लघु उद्योगों के उत्पादन की बिक्री में अंत इकाई प्रतियोगिता सबसे बाधक तत्व हैं। बेरोजगार युवक बेरोजगारी के दर्द से इतने पीड़ित रहते है कि बिना उद्योग के भविष्य की संभावनाओं को समझे, एक इकाई खोल लेते हैं। यद्यपि सरकारी मशीनरी इस बात को सदैव प्रयास करती है कि स्थापित इकाईयां

अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सकें, फिर भी कुछ क्षेत्रों में लघु उद्योगों का इतना संघनन हो गया कि इनमें गला काट प्रतियोगिता हो रही हैं।

केवल उद्योगों की स्थापना ही औद्योगीकरण में सहायक नहीं होगी, जब तक की स्थापना के बाद उनका कार्यचालन सुनिश्चित न हो। कार्यचालन के अभाव में शुरू की गयी इकाईयाँ कुछ ही समय बाद बीमार हो जाती हैं। इकाईयों की नियमित जांच अत्यंत आवश्यक हैं, जिससे यह जाना जा सके कि इकाईयाँ कैसी चल रही हैं। यदि वे उस गति से नहीं चल रही हैं, तो वे उस गति का पता लगाया जाये, तथा उसके समाधान का उपाय खोजा जाय। नियमित जांच के साथ–साथ उद्योगों के उत्पादन गुणवत्ता नियंत्रण पर भी ध्यान दिया जाये जिससे प्रतियोगी बाजार में उद्योगों के लिए समस्या न आये।

कुटीर लघु उद्योगों में निष्क्रिय क्षमता के लिए बहुत से कारण उत्तरदायी है, जिस गति से चलनी चाहिए तो उत्पन्न व्यवधान कासर्वेक्षित इकाईयों में 20 प्रतिशत इकाईयों ने निष्क्रिय क्षमता हेतु केवल एक कारण बताया, तथा 80 प्रतिशत इकाईयों ने एक से अधिक कारण बताये। निष्क्रिय क्षमता हेतु सबसे महत्वपूर्ण एकत्र कारण तत्व मांग की कमी रही है। बड़े उद्योगों से प्रतिस्पर्धा, मौसमी उच्चावचन हीन गुणवत्ता इत्यादि ऐसे तत्व है जो मांग को कम करती है। लघु क्षेत्र में वर्तमान उत्पादन क्षमता और उत्पाद की भविष्य की मांग के बारे में न तो सरकार के पास, और नहीं किसी व्यापारिक संस्था के पास कोई सूचना हैं। संगत सूचनाओं के अभाव में कभी–कभी किसी–किसी उद्योग में अतिरिक्त संकेन्द्रिण हो जाता हैं, जो अन्तः मांग की कमी को जन्म देता हैं। इस समस्या का समाधान सरकार द्वारा एक निश्चित समय अंतराल पर बाजार की संभावनाओं के बारे में सूचनाओं का प्रकाशन करना होगा। इसके अतिरिक्त उद्योगपतियों द्वारा उत्पाद की आकर्षकता में वृद्धि करके भी मांग को बढ़ाया जा सकता है। इस हेतु गुणवत्ता पर ध्यान तथा रंग पैकिंग एवं प्रचार को अपनाया जा सकता है।

सही समय पर सही गुणवत्ता का सस्ता कच्चा माल उपलब्ध न होना भी उद्योगों के निष्क्रिय क्षमता हेतु उत्तरदायी है। कच्चे माल के अभाव में लघु उद्योग पूरे वर्ष भर नहीं चल पाते। सरकार की अभ्यंश के आधार पर कच्चे माल की आपूर्ति के तरीके में बहुत से दोष हैं। इनमें बहुत ही अनियमिततायें हैं तथा अभ्यंशित कच्चा माल भी मात्रा में कम पड़ता हैं। कुछ कच्चे माल जैसे–रेशम, स्टील, ब्रास, कॉपर, रसायन इत्यादि के उपलब्धि की बहुत ही समस्या हैं। जो उद्योग दुर्लभ कच्चे माल पर आधारित होते हैं, कच्चे माल की समयबद्ध आपूर्ति हेतु विभिन्न क्षेत्रों में कच्चा माल बैंक बनाने पर बल दिया जाता हैं। ये बैंक ऐसे हो जिनके पास कच्चे माल का पर्याप्त भण्डार हो, तथा इन बैंकों से कच्चा माल कर्ज के रूप में लिया जा सके, जिसे बाद में सरकारी अभ्यंश से प्राप्त होने पर लौटाया जा सके। सरकारी क्रय समितियों का निर्माण भी इस संबंध में मददगार होगा।

कुटीर लघु एवं कुटीर औद्योगिक क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के एक मजबूत और गतिशील क्षेत्र के रूप में उभरा हैं, जो कुल औद्योगिक उत्पादन के लगभग 40 प्रतिशत तथा राष्ट्रीय निर्यात के 34 प्रतिशत से अधिक का योगदान देता हैं। वर्तमान में 250 लाख से अधिक व्यक्तियों को प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान कर रहा हैं। इस कारण जीविकापार्जन की प्राथमिक आवश्यकता मानकर किये गये शासकीय प्रयासों के फलस्वरूप शासकीय अभिकरणों एवं विभागों की स्थापना की गई, जिससे कुटीर एवं लघु उद्योगों को प्रोत्साहित किया जा सकें। इसके लिये 1977 में भारत ने औद्योगिकीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया। इस नीति के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे कस्बों में कुटीर और लघु उद्योग केन्द्र की अवधारणा सामने लाई गई ताकि एक छत के नीचे कुटीर और लघु उद्योग को सभी आर्थिक सेवायें उपलब्ध कराई जा सके। इसी परिकल्पना को साकार करते हुए 1978 में एकल खिड़की योजना लागू होने के बाद नया औद्योगिक वातावरण निर्मित हुआ। जिला उद्योग केन्द्रों के माध्यम से औद्योगिक लक्ष्य को पूरा करने के लिये न्यूनतम पूँजी से औद्योगिक इकाईयों की स्थापना क्षेत्रीय संसाधनों एवं उपलब्ध कच्चे माल का परिपूर्ण दोहन कर औद्योगिक उत्पादन में अभिवृद्धि करता रहा हैं। 1980 की औद्योगिक नीति में विकास के लिये सहायता देने और छोटी इकाईयाँ बनने का मार्ग प्रशस्त किया, जबकि 1980 की औद्योगिक नीति में निर्यात तथा ग्रामीण रोजगार सृजन करने पर बल दिया गया हैं।

उद्योग क्षेत्र की परिभाषा (विकास और विनिमय) अधिनियम 1951 के अंतर्गत आती हैं। क्षेत्र को संयंत्र और मशीनरी में निवेश सीमा (मूल लागत) की शर्तो के अनुसार एक निर्धारित मूल्य तक परिभाषित किया गया हैं। इसमें उद्योगों का व्यापक परिवेश

शामिल हैं, जो कि सूक्ष्म और ग्रामीण उद्योगों तक फैला हुआ हैं और जिसमें आधुनिक लघु उद्योगों में एक ओर तो प्रारम्भिक प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया गया हैं और दूसरी ओर परिष्कृत प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया गया हैं।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. राठौड़, मधु, पंचायती राज और महिला विकास, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर 2002, पृ. 405
2. बुच, निर्मला, महिलाओं हेतु नियोजन की चुनौतियाँ, योजना, वर्ष–56 अंक–8 अगस्त 2012 पृ 9–12
3. कुमार, शशि, महिला सशक्तिकरण एवं दलित महिलाओं की स्थिति – चुनौतियाँ एवं समाधान, मानव अधिकार : नई दिशाए, वार्षिक, अंक – 10 पृ. 502
4. प्रतिभा, महिला सशक्तिकरण, में कुटीर उद्योग के क्षेत्र में योगदान जयपुर के संबंध में पृ. 413
5. राव, एन.आर. पंचायती राज ए स्टडी ऑफ रूरल लोकल गवनमेंट इन इण्डिया, 1994 पृ.52

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

ग्राम पंचायत में बदलता स्वरूप : सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक

डॉ. अरविन्द्र कुमार चौरसिया (निर्देशक)
प्राध्यापक, शासकीय पी. जी. कॉलेज सिवनी (म.प्र.)
मनेन्द्र सिंह सिहोसे (शोधार्थी)

प्राचीन समय से भारतीय ग्रामीण समाजों के नेतृत्व का स्वरूप परम्परागत था। इसमें धर्म, जाति, आयु, एवं वंश का विशेष महत्व था। स्वतंत्रता के पश्चात् पंचायतीराज की स्थापना, वयस्क मताधिकार शिक्षा का प्रसार, यातायात एवं संचार के साधनों के विस्तार, लोकतंत्रिकरण, नगरीय संपर्क तथा समुदायिक विकास योजनाओं में भारतीय ग्रामीण संरचना को प्रभावित किया है। ग्रामीण जनता में राजनैतिक जागरूकता जागृत हो रही है। चुनाव के प्रति उनकी अभिरूची बढ़ रही है। आज गांव की राजनीति जिला, प्रदेश एवं देश की राजनैतिक अंग बन गई है। भारतीय ग्रामीण संरचना में नवीन परिवर्तनों के फलस्वरूप समाज का युवा वर्ग, वृद्ध से भिन्न विचार, मान्यताऐं, आदर्श एवं रहन–सहन आदि से संबंधित जीवन के नये प्रतिमानों को अपना रहा है। पिछड़ी एवं निम्न जातियों में नई जागृति विकसित हो रही है। आज सभी वर्गो में सत्ता संघर्ष अधिक सक्रिय हो रहा है। समाज में पारिवारिक आधारों से भिन्न सत्ता के नवीन आधार पनप रहे हैं।

राज्य सरकार ने पंचायत राज व्यवस्था को स्थानीय स्व–शासन की स्वतंत्र इकाई के रूप में स्थापित करने हेतु गंभीर राजनीतिक इच्छा शक्ति का प्रदर्शन किया। राज्य विधान में व्यवहारिक कठिनाईयों का दृष्टिगत रखते हुए अनेक संशोधन किए गए। बड़े बदलाओं के बीच जिला सरकार एवं ग्राम स्वराज व्यवस्था मध्यप्रदेश में लाई गई।

जिला सरकार में जिला योजना समिति संशोधन स्वरूप था जिसमें जिला के स्तर पर ही नियोजन एवं क्रियान्वयन की व्यवस्था की गई तथा पंचायतों एवं नगरीय निकायों के जनप्रतिनिधियों को सदस्यों के रूप में सम्मिलित किया गया। जिले का प्रभारी मंत्री अध्यक्ष एवं कलेक्टर के सचिव होने से ये व्यवस्था अपने लोकतांत्रिक स्वरूप में उस तरह से कार्य नही कर पायी जैसे इससे अपेक्षा की गई थी एवं यह व्यवस्था वर्तमान सरकार के आते ही समाप्त कर दी गई।

ग्राम स्वराज व्यवस्था की पृष्ठभूमि में पंचायतों की स्थापना के आरम्भिक वर्षो में सरपंच की केन्द्रीय भूमिका होना रहा था तथा संरपच द्वारा पंचायतों की सभी गतिविधियों को केन्द्रीयकृत करते हुए निर्णय निर्माण में आम व्यक्ति की भागीदारी को कम किया। इसी को ध्यान में रखते हुए ग्राम स्वराज लाया गया जिसने पंचायतों की निर्णय निर्माण प्रक्रिया में आम व्यक्ति की भागीदारी को सुनिश्चित किया।

वर्तमान समय में पंचायतीराज की जो व्यवस्था है उसका निर्धारण मध्यप्रदेश विधान सभा द्वारा 30 दिसम्बर 1990 को अधिनियमित कर 24 जनवरी 1994 को अनुमति प्राप्त हुई और इसे मध्यप्रदेश राजपत्र में 25 जनवरी 1994 को प्रकाशित कर दिया गया। इस अधिनियम के अंतर्गत पंचायतों का स्वरूप एवं ढांचा वही है जो पूर्व के अधिनियम में निर्धारित किया गया था अर्थात् अब भी पंचायत राज व्यवस्था के तीन प्रशासनिक स्तर जिला पंचायत जनपद पंचायत तथा ग्राम पंचायत है। इन नइ संस्थाओ को इस नए अधिनियम के द्वारा व्यापक प्रशासनिक एवं आर्थिक अधिकार तथा कर्तव्य सौपे गये है।

इस अधिनियम के अंतर्गत पंचायत राज व्यवस्था की स्थापना के लिए 1994 में मध्यप्रदेश में स्वतंत्र राज्य निर्वाचन आयोग की निगरानी में तीन चरणों में पंचायत राज संस्थाओं के चुनाव संपन्न कराये गये। चुनाव परिणामों के पश्चात् 5 जुलाई 1994 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री पी.बी. नरसिम्हा राव ने पंचायत प्रतिनिधियों के हाथों में औपचारिक रूप से संपूर्ण व्यवस्था सौपी। जो पहली बार अधिकारों और सत्ता के विकेन्द्रीकरण को वास्तविक रूप मिला।

पंचायत राज अधिनियम में यह प्रावधान किया गया है कि सद्भावना पूर्वक कार्यो में पंचायत उसकी समितियां पदाधिकारी अथवा इससे संबंधित व्यक्ति के विरूद्ध इस अधिनियम या किसी उपविधि के अधीन कोई वाद नही चलाया जायेगा। इस अधिनियम में चार अनुसूचियां शामिल हैं। जिनमें प्रथम में ग्राम पंचायतों द्वारा अधिरोपित किये जाने वाले अनिवार्य कर, द्वितीय में ग्राम पंचायत द्वारा अधिरोपित किये जाने वाले वैकिल्पक कर, फीस आदि का समावेश किया गया है, तृतीय में ग्राम पंचायतों द्वारा आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय के लिए योजना की तैयारी एवं क्रियान्वयन का उल्लेख है।

मध्य प्रदेश पंचायतराज अधिनियम 1993 के प्रमुख प्रावधान, इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए राज्यपाल द्वारा अधिसूचना जारी कर ग्राम या ग्राम के समूह को एक ग्राम के रूप से परिलक्षित किया जायेगा। जिसके लिए एक ग्राम सभा होगी। इसका सदस्य वह व्यक्ति होगा जिसका नाम इस ग्राम की मतदाता सूची में हो। ग्राम सभा का वर्ष में कम से कम एक सम्मेलन हो जाना आव यक है। ग्राम के लिए ग्राम पंचायत, खण्ड के लिये जनपद पंचायत और जिले के लिये जिला पंचायत का गठन किया गया है। पंचायत की कार्याविधि उससे पहले सम्मेलन की तारीख से पांच वर्ष की होगी। जब तक कि उसे समय से पूर्व कानूनी रूप से निर्धारित न किया जाये। यह अवधि समाप्त होने के छः माह के अंदर चुनाव कराया जाना आवश्यक है। पंचायतों के चुनाव निष्पक्ष ढंग से हो सके इसके लिये राज्य चुनाव आयोग का गठन किया गया है। ग्राम पंचायत के प्रत्येक वार्ड से एक पंच होगा जो एक से अधिक वार्डो या निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व नहीं करेगा। प्रत्येक ग्राम पंचायत में एक सरपंच तथा एक उपसरपंच होगा इसी प्रकार जनपद तथा जिला पंचायत में अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष के पदों की व्यवस्था की गई है। इसी प्रकार हर एक खंड के क्षेत्र की ग्राम पंचायत में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों की कुल जनसंख्या मे जो अनुपात है उसी अनुपात में अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए ग्राम पंचायत के सरपंचों के पद आरक्षित किये गये है। और जिस खंड में अजजा की सम्मिलित जनसंख्या आधे से कम हो वहां खंड के भीतर ग्राम पंचायतों में सरपंच के कुल पदों के 25 प्रतिशत सामान्य के लिए आरक्षित करने का प्रावधान किया गया है। खंड के ही भीतर सरपंचों के कुल पदों की संख्या के कम से कम एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित की गई है। ग्राम पंचायत का सरपंच यदि अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या सामान्य वर्गो का नहीं है तो उपसरपंच ऐसी जातियों जनजातियों अथवा पिछड़े वर्गो के पंचो में से निर्वाचित किया जायेगा। ग्राम पंचायत के पंच एवं सरपंच, जनपद के सदस्यों एवं जिला पंचायत के सदस्यों का चुनाव सीधे जनता द्वारा होगा। जनपद एवं जिला पंचायत के निर्वाचित सदस्य अपने अपने अध्यक्ष का चुनाव करेंगे। प्रत्येक ग्राम पंचायत में सरपंच एवं उपसरपंच यदि लोकसभा विधानसभा या राज्य सभा का सदस्य अथवा सहकारी समिति का सभापति या उपसभापति निर्वाचित हो जाता है तो वह सरपंच अथवा उपसरपंच के पद पर नही हो सकेगा।

ग्राम पंचायत जनपद पंचायत तथा जिला पंचायत के निर्वाचनों का प्रावधान होने के बाद प्रकाशन की तिथि से तीस दिन की अवधि के भीतर इनका सम्मेलन आयोजित किया जायेगा। इस सम्मेलन को विहित अधिकारी द्वारा बुलाया जायेगा।

इस तरह से वित्तीय प्रबंधन में जनप्रतिनिधियों एवं शासन की भूमिका कई तरह से सराहनीय हैं। जिसके बदौलत से आज ग्राम पंचायत की नया शक्ल देखने को मिल रहा हैं। जिसके द्वारा आज कई सारी योजनाओं के माध्यम से गांव का नया विकास संभव हो पाया हैं और आज ग्राम पंचायत के लिए सरकार के द्वारा निर्वाचित जनप्रतिनिधियों के द्वारा समय–समय पर ध्यान दिया जाता हैं। वे अक्सर गांव में जाकर वहॉ की समस्याओं को सुनते हैं और उनका निराकरण भी किया जाता हैं।

संदर्भ सूची :–

1. चराटे भारती (2009) : ''पंचायत कर्मी मार्गदर्शिका'' ईशा लॉ हाऊस इन्दौर (म0प्र0) तृतीय संस्करण।
2. आहुजा राम (2009) : ''सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान'' रावत पब्लिकेशन, जयपुर, नई दिल्ली।
3. मुकर्जी रवीन्द्र नाथ (2009) : ''सामाजिक शोध व सांख्यिकी'' प्रकाशन विभाग सूचना भवन सी.जी.ओ. काम्पलेक्स नई दिल्ली।
4. म.प्र. के आर्थिक सर्वेक्षण सांख्यिकीय संचालनालय म.प्र.।
5. म.प्र. की पंचवर्षीय योजनाऍ– आर्थिक योजनाएं एवं सांख्यिकी विभाग म.प्र. भोपाल।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

ग्राम स्तर पर सूक्ष्म सिंचाई योजनाओं का लाभ

डॉ. ओ.पी. टपा (निर्देशक)
प्राध्यापक, शा. रानी दुर्गावती स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंडला (म.प्र.)
मुकेश कारतिके (शोधार्थी)

सिंचाई वह साधन हैं जिसके द्वारा फसल को कृत्रिम ढंग से जल पहुंचाकर जल की कमी को पूरी किया जाता है। सिंचाई कृषि को विशेष प्रभावित करती है सिंचाई कृषि रूपान्तरण एवं कृषि परिवर्तन के लिए आवश्यक है हरित क्रांति के प्रभाव से रासायनिक एवं मशीनीकरण को बढ़ावा मिला है जो कि सिंचाई के साधनों का समुचित विकास संभव हो सका है। सिंचाई का कृषि स्वरूप पर स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है एवं सिंचाई के द्वारा वर्षा की अनिश्चितता को कम किया जा सकता है तथा सिंचाई के द्वारा सूखा रोकने एवं फसल उत्पादन व्यवसायिक फसलों को बढ़ाया जा सकता है। ग्राम स्तर पर सूक्ष्म सिंचाई योजनाओं के लाभ के अंतर्गत सिंचाई का भूमि स्वरूप पर प्रभाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। सिंचाई से उन्नत किस्म की बीज उर्वरकों को प्रयोग मिट्टी परीक्षण एवं आधुनिक कृषि संयंत्रों का उपयोग संभव हुआ सिंचाई से शस्य प्रतिरूप में परिवर्तन, उत्पादकता में वृद्धि एवं कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार संभव हो सकता हैं।

कपिलधारा योजना कृषि उत्पादन में सुनिश्चितता कृषकों की आजीविका में गुणात्मक सुधार हेतु निजी कृषि भूमि पर सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराने के लिए कपिलधारा उपयोजना का क्रियान्वयन प्रदेश में किया जा रहा है इस उपयोजना में बीपीएल हितग्राही के साथ ही अन्य चिन्हित वर्ग के हितग्राही परिवारों की जमीनी स्तर सिंचाई के साधनों जैसे कुओं, खेत–तालाब, मैसेनरी, चेक डेम, स्टॉप डेम, छोटे तालाब बनवाकर इन परिवारों को लाभावित्त किया जाता हैं।

इस उपयोजना में हितग्राही अपनी भूमि पर उपरोक्त में से कोई भी उपयुक्त काम चुन सकता है चुने जाने वाले काम के बारे में तकनीकि अधिकारियों द्वारा हितग्राहियों को इस उपयोजना का लाभार्थी बनाने का लक्ष्य तय किया गया है। जिसमें प्राथमिकता के आधार पर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के परिवारों, गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों, भूमि सुधार कार्यक्रम के हितग्राहीयों, इंदिरा आवास योजना के हितग्राहीयों को, कपिलधारा उपयोजना का हितग्राही बनाया जाता है। जिस परिवार में सिंचाई के साधन तैयार हो रहे हैं वह उनकी आजीविका के साधन के रूप में उपयोग कर सके इसके लिए पांचवी कक्षा उत्तीर्ण सदस्य वाले परिवारों को प्राथमिकता पर उपयोजना का लाभ दिया जा रहा हैं।

प्रस्तुत शोध अध्ययन कपिलधारा योजना का ग्रामीण विकास पर प्रभाव : मंडला जिले के विशेष संदर्भ में, ग्राम स्तर पर सूक्ष्म सिंचाई योजनाओं के लाभ पर कार्य किया जायेगा। इस अध्याय में मंडला जिले के चयनित ग्रामों में सिंचाई योजनाओं के बारे में शोधार्थी के द्वारा यह जानने का प्रयास किया गया की म.प्र. सरकार द्वारा ग्रामीण स्तर पर सिंचाई की कौन–कौन सी योजनाओं का संचालन किया जा रहा हैं, जिससे की मंडला जिले में निवासरत किसानों का इस योजना का लाभ मिल रहा हैं। ऐसी कौन–कौन सी योजनाऐं जो राज्य सरकार के द्वारा संचालित हो रही हैं और ऐसी कौन–कौन सी योजनाऐं हैं जो कि केन्द्र सरकार के द्वारा संचालित हो रही हैं। जिसका उपयोग खेतों में सिंचाई के रूप में हो रहा हैं। सूक्ष्म सिंचाई की योजना के अंतर्गत शोधार्थी का यह मुख्य कार्य कपिलधारा योजना से संबंधित रहेगा। कपिलधारा योजना के प्रयोग से ऐसे 320 परिवारों का चयन शोधार्थी ने इस शोध को पूर्ण करने के लिए किया हैं। शोधार्थी के द्वारा यह भी जानने का प्रयास किया गया हैं कि कपिलधारा योजना के द्वारा लोगों को फायदा हो रहा हैं या नहीं, कहीं ऐसा तो नहीं हो रहा हैं कि लोगों के द्वारा कपिलधारा योजना में सरकार के द्वारा दिये जा रहे अनुदान को लेकर वे उस अनुदान का दुरूप्रयोग कर रहे हैं, या जिस उद्देश्य से सरकार से अनुदान लिया हैं उस उद्देश्य को पूर्ण नहीं किया जा रहा हैं, अगर उपयोगकर्ता के कपिलधारा योजना का उपयोग किस स्तर पर किया जा रहा हैं। इस योजना के अंतर्गत कृषकों को लाभ का व्यवसाय बनाने का प्रयास किया जा रहा है। कपिलधारा योजना के अंतर्गत कृषि उत्पादन में सुनिश्चितता बनाए रखने व कृषकों की आजीविका में सुधार के उद्देश्य से संचालित की गयी हैं, कृषि भूमि में जल का स्त्रोत उपलब्ध नहीं होता इस योजना में नवीन कुओं के निर्माण भू–जल पुनर्भरण,

खेत–तालाब, स्टाप डेम, मैसेनरी डेम, लघु–तालाब निर्माण आदिके द्वारा कृषकों को लाभ मिल रहा हैं आदि बातों को ध्यान में रखकर इस अध्याय को पूर्ण किया जायेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में नीति निर्माण, क्रियान्वयन एवं निर्णयन महत्वपूर्ण तत्व हैं। संवैधानिक प्रावधान केन्द्र सरकार, योजना आयोग, राज्य सरकार, पंचायतीराज एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय एवं विभाग, जिला परिषद एवं जिला विकास अभिकरण, पंचायत समिति तथा ग्राम पंचायत आदि स्तरों पर राजनैतिक एवं प्रशासनिक प्रयास ग्रामीण विकास की दिशा निर्धारित करते हैं। राजनीतिज्ञ ग्रामीण विकास से संबंधित विविध पहलुओं पर कितना गहन चिन्तन करते हैं और किस तत्परता से सकारात्मक हस्तक्षेप कर उसको दिशा देने के लिए प्रशासन को आवश्यक दिशा–निर्देश देते है, इससे विकास का पता चल सकता हैं। नीति निर्माण के पश्चात् प्रशासन तंत्र कहाँ तक ईमानदारी एवं कर्त्तव्यनिष्ठा से उनका क्रियान्वयन करता हैं, इससे विकास का अनुमान लगाया जा सकता हैं। विकास के लिए राजनीतिज्ञों एवं प्रशासन तंत्र में नैतिकता का पुट होना चाहिए तथा कार्य करने की दृढ़ इच्छा शक्ति होनी चाहिए।

ग्रामीण जनता को आधुनिक प्रौद्योगिक एवं विज्ञान के विकास से परिचित कराने, विविध तकनीकी ज्ञान का लाभ पहुँचाने तथा सरल एवं शीघ्रता से सुविधाएँ उपलब्ध कराने की दिशा में प्रयत्न किये जाने चाहिए। गाँवों की अधिकांश जनसंख्या कृषि एवं पशुपालन से संबंधित व्यवसायों में लगी हुई हैं। इन्हें कृषि से संबंधित आधुनिक तकनीकों एवं उपकरणों की जानकारी देकर, उपलब्ध कराकर लाभ पहुँचाया जा सकता हैं। आधुनिक प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान की गाँवों में कहाँ तक पहुँच है? इस पर ग्रामीण विकास काफी हद तक निर्भर करता हैं। जनता में साक्षरता दर एवं संचार सुविधाओं का विस्तार ग्रामीण जनता के विकास का द्योतक हैं। इसी से जनचेतना एवं जनसहभागिता को बढ़ावा मिलता हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में संसाधनों की उपलब्धता वहाँ के विकास का निर्धारण करती हैं। जहाँ संसाधनों की उपलब्धता पर्याप्त हैं जैसे कृषि हेतु सिंचाई सुविधा, पशुओं हेतु चारा, दुग्ध डेयरी एवं अन्य सुविधाएं तो वहाँ विकास उसी अनुरूप होगा। संसाधनों के अनुसार ही प्रायः व्यवसाय किया जाता हैं जैसे कहीं कृषि योग्य भूमि नहीं है परन्तु जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होने पर मत्स्य उत्पादन किया जा सकता हैं। ग्रामीण पर्यावरण में आधारभूत सुविधाओं की स्थिति यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, विद्युत, सड़क एवं परिवहन आदि सुविधाएँ विकास को दिशा देती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए दबाव समूहों की सक्रियता एवं स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका विकास को नये आयाम देती हैं। अतः ग्रामीण विकास के लिए विविध कारक वहाँ की पारिस्थिति पर निर्भर करते हैं। ये कारक न केवल प्रभावित होते है, बल्कि प्रभावित भी करते हैं।

ग्रामीण विकास की पारिस्थिति को समझना अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है, क्योंकि प्रत्येक राज्य, जिले, खण्ड, ग्राम पंचायत एवं गाँव में एक समान परिस्थितियाँ नहीं होती वहाँ अनेक विविधताएँ पायी जाती हैं। अतः आवश्यतानुसार विभिन्न परियोजनाओं/कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने के लिए वहाँ अनुकूल परिस्थितियाँ होना आवश्यक हैं। राजस्थान में इसी आधार पर विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं जैसे– डांग क्षेत्र विकास कार्यक्रम, मेवाड़ क्षेत्र विकास कार्यक्रम, मरू विकास कार्यक्रम, सहरिया एवं कथौड़ी जनजाति के परिवारों हेतू विशेष रोजगार योजना आदि। किसी राज्य, जिले या पंचायत समिति हेतु विभिन्न ग्रामीण विकास की योजनाओं/कार्यक्रमों के निर्धारण में परिस्थिति ही महत्वपूर्ण दिशा निर्देशन का कार्य करती हैं। विभिन्न विकास योजनाओं/कार्यक्रमों के निर्माण एवं क्रियान्वयन से पूर्व उनके पर्यावरणीय प्रभावों एवं मूलभूत आवश्यकताओं का अध्ययन एवं ज्ञान आवश्यक हैं तभी ये विकास कार्यक्रम भविष्योन्मुखी, उद्देश्योन्मुखी एवं परिणामोन्मुखी साबित होंगे।

इस प्रकार कृषि के विकास के साथ ही साथ सभ्यता का आरंभ हुआ। ऐतिहासिक दृष्टि से इसी समय ग्रामों का जन्म हुआ, जो सामूहिक मानवीय निवास का प्रथम स्थिर रूप तथा कृषि–अर्थव्यवस्था की उन्नति का प्रथम परिणाम था। ग्रामों ने अपनी भोजन सामग्री की प्रचुरता के द्वारा नगरों का भरण–पोषण किया और विकास के लिए एक सुदृढ़ आधार प्रस्तुत किया।

ग्रामीण समुदाय अनेक प्रकार की समस्याओं से घिरे हैं; जिनके कारण ग्रामीण जीवन की स्वाभाविकता समाप्त हो गई हैं और उनकी प्रगति के पथ पर अनेक बाधाये उत्पन्न हुई हैं, साथ ही ग्रामीण जीवन पर बाहरी शक्तियाँ अपना–अपना प्रभाव डाल रही हैं। इनकी

क्रियाशीलता के फलस्वरूप जो नवीन परिस्थितियां उत्पन्न हुई हैं, उनसे अनुकूलन करना ग्रामवासियों के लिए संभव नहीं हुआ हैं। वर्तमान समय में सामाजिक परिवर्तन की गति भी बहुत तीव्र है। इससे असन्तुलन की स्थिति उत्पन्न हो जाती हैं। वैज्ञानिक तकनीक मानव प्रगति में सहायक हो रही हैं, परन्तु बहुसंख्यक लोग उसका उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। ग्रामीण समुदायों में अनेक समस्याएँ विकास को चुनौती देती है। ''ग्रामीण जनजीवन में व्याप्त आर्थिक, सामाजिक एवं अन्य समस्याओं को दूर करते हुए संपूर्ण ग्रामीण व्यवस्था को पुनः संगठित और व्यवस्थित करके उन्हें प्रगति के मार्ग पर प्रवृत्त करना ही ग्रामीण विकास हैं, ताकि ग्रामीण जनजीवन के सभी पहलुओं का सन्तुलित विकास हो और उन्हें भी सुखी जीवन व्यतीत करने के अवसर मिले।'' इस प्रकार ग्रामीण विकास का उद्देश्य उपस्थित विघटित व्यवस्थाओं को सुधार कर एक उच्चतर तथा अधिक कार्यशील जीवन का विकास करना हैं, ताकि गाँवों की जनता सक्षम एवं आत्मनिर्भर हो जाये जिससे वे अपनी उन्नति में ही नहीं बल्कि राष्ट्र की प्रगति से संबंधित समस्त कार्यो में हांथ बटा सके।

इसका उद्देश्य कृषि उत्पादन में सुनिश्चिता और किसानों की आजीविका में गुणात्मक सुधार लाना है। इसके तहत हितग्राही परिवार को कृषि भूमि में सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई जाती हैं। इससे नवीन कुँआ–भूजल पुनर्भरण की व्यवस्था के साथ खेत–तालाब, चेक डेम, स्टॉप डेम, आर.एम.एस. और लघु तालाब निर्माण का प्रावधान हैं। हितग्राही परिवार वे होते हैं जिसके लिए स्वामित्व वाली कृषि भूमि में जल का स्त्रोत उपलब्ध नहीं होता।

योजना से अब तक 34 हजार 366 पम्प सिंचाई के लिये उपलब्ध कराये गये हैं। अब तक 3 लाख 60 हजार 80 कूपों की स्वीकृति दी गई हैं। इनमें से एक लाख 66 हजार 416 कूपों का कार्य पूर्ण किया गया है और शेष का कार्य प्रगति पर हैं।

इससे कृषि उत्पादन में अनिश्चिता काफी हद तक समाप्त हुई हैं, और किसानों की आजीविका में गुणनात्मक सुधार आया हैं। सिंचाई सुविधा मिलने से कृषि उत्पादन भी बढ़ा हैं।

खेत तालाब योजना :– इस योजना का उद्देश्य कृषि के समग्र विकास के लिए सतही तथा भूमिगत जल की उपलब्धता को बढ़ाना हैं। सभी वर्गो के किसानों को इसका लाभ दिया जाता हैं। किसान स्वेच्छा से तालाब के तीन मॉडलों में से एक चयन कर सकता है। सभी वर्गो के किसानों को लागत का 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाता हैं, जिसकी अधिकतम सीमा 16 हजार 350 रूपये हैं।

खेत तालाब बारिश का पानी रोक कर उसे सिंचाई में उपयोग के लिए काफी कारगर सिद्ध हुए हैं। पहले बारिश का पानी बेकार बह जाता था। एक तालाब से काफी बड़े क्षेत्र में पानी की सुविधा हो जाती हैं।

बलराम ताल योजना :– योजना का उद्देश्य वर्शा के बह जाने वाले पानी के अधिकतम मात्रा खेतों में रोककर उससे सिंचाई करना हैं। खेतों में बलराम ताल निर्माण के लिए 25 प्रतिशत अनुदान दिया जाता हैं। जिसकी अधिकतम सीमा 50 हजार रूपये है। इसका लाभ 25 मई 2007 के बाद पंजीबद्ध प्रकरणों में दिया जाता हैं।

अभी तक 7518 बलराम तालों का निर्माण किया जा चुका हैं। कुल 47 करोड़ रूपए का अनुदान दिया गया हैं।

बलराम तालाब बड़े होते हैं और इनसे पचास हेक्टेयर तक सिंचाई सुविधा मिल जाती हैं।

सहभागी वाटरशेड पद्धति के जरिए वर्षा सिंचित/अवक्रमित क्षेत्रों को विकसित करना सरकार की प्राथमिकता वाला क्षेत्र है। राष्ट्रीय वर्षा सिंचित क्षेत्र प्राधिकरण (एनआरएए) ने सभी मंत्रालयों/विभागों के वाटरशेड कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए योजना आयोग, संबंधित मंत्रालयों और राज्यों के परामर्श से वाटरशेड विकास परियोजनाओं कें संबंध में समान मार्गदर्शी सिद्धान्त 2008 तैयार किया। समान मार्गदर्शी सिद्धान्तों के प्रावधानों और पार्थसारथी समिति की टिप्पणियों के कारण भूमि संसाधन विभाग की वाटरशेड योजनाओं में संशोधन किया जाना आवश्यक हो गया।

तदनुसार, भूमि संसाधन विकास के सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (डीपीएपी), मरूभूमि विकास कार्यक्रम (डीडीपी) और समेकित बंजरभूमि विकास कार्यक्रम (आई.डब्ल्यू.डी.पी.) की समेकित वाटरशेड प्रबंधन कार्यक्रम (आई.डब्ल्यू.एम.पी.) नामक एकल कार्यक्रम में एगीकृत किया गया। यह समेकन संसाधनों

के इष्टतम उपयोग, सतत् परिणामों तथा समेकित आयोजन के लिए किया गया है। इस योजना को सरकार द्वारा 26.2.2009 को अनुमोदित किया गया।

संदर्भ सूची :–

1) अबुलफजल, आइन, ए अकबरी, एच.एस. जैरेट, द्वारा कपिल धारा के संदर्भ में एक लेख अनूदित जिल्द, दो पृष्ठ 211
2) जी.डी. पाठक, दी एन्शियन्ट हिस्ट्री आफ गढ़ा–मण्डला, विभिन्न योजनाओं के माध्यम कपिल धारा के बारे में संक्षिप्त लेख पृष्ठ 23–24
3) मासिर–उल–उमरा, जिल्द तीन, पृष्ठ 587–88
4) खफी खान मुन्सखाब–उल–लुबाब, जिल्द 2, पृष्ठ 461
5) आर.एम. सिन्हा, शेंसलाज आफ नागपुर दी लास्ट फेज, पृष्ठ 30–31

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

मध्यप्रदेश में अनैतिक देह व्यापार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन

सपना जामेनर

भारत ही नहीं वरन् संपूर्ण विश्व में अनैतिक व्यापार एक महत्वपूर्ण सामाजिक समस्या के रूप में विद्यमान है। अनैतिक व्यापार के आशय मुख्य रूप से वेश्यावृत्ति से है। अत्यधिक प्राचीन काल से वेशावृत्ति का प्रचलन एक व्यवसाय के रूप में रहा है। इसे विश्व का प्राचीनतम पेशा कहा जाता है। भारतीय समाज में एक परम्परागत संस्कृति की देन के रूप में यह पनप रही है। विश्व की सभी प्राचीन सभ्यताओं जैसे यूनान, रोम, मिस्त्र, चीन, बेबीलोन, फारस आदि में वेश्यावृत्ति के अनेकों देशों में विभिन देवियों की पूजा तथा धार्मिक कर्मकाण्डों को वेश्यावृत्ति से इस प्रकार जोड़ दिया गया था कि वेश्यावृत्ति को धर्म के ही एक अंग के रूप में देखा जाने लगा था।

पूर्व ऐतिहासिक वैदिक काल में "गणिका" का वर्णन मिलता है। यह वह सुन्दरियाँ थीं जो प्राचीन सम्राटों को मनोविनोद नृत्य और संगीत के माध्यम से एक हजार पन्ना लेकर किया करती थी। इनके कुछ निर्धारित कार्य भी होते थे और इनकी प्रायः निंदा नहीं की जाती थी। वेदों से पुराणों तक, वाल्मीकि रामायण से महाभारत तक और कामसूत्रों से तांत्रिक साहित्य तक सभी रचनाओं में गणिका, रूपजीवी भोग्या, स्वैरिणी, देवदासी तथा कितनी ही दूसरे नामों से वेश्यावृत्ति करने वाली स्त्रियों को सम्बोधित किया गया है। विष्णु संहिता में विशेष अवसरों पर वेश्याओं की उपादेयता का वर्णन मिलता है। मत्स्य पुराण में भी वेश्या को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था और उसे शुभ माना जाता था। भारत में वेश्याओं की विधमानता तथा उनके महत्व का स्पष्टीकरण इस तथ्य से ही हो जाता है कि राम की शोभायात्रा में रूपजीवाएँ भी साथ–साथ चल रहीं थीं। महाभारत में अनेक स्थलों पर अप्सराओं, किन्नरियों तथा देवांगनाओं की यौन क्रीड़ाओं का उन्मुक्त वर्णन किया गया है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में रूपजीवी और गणिकाओं का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। उन्होंने वेश्याओं पर नियन्त्रण के लिये गणिकाध्यक्ष कर्मचारी की नियुक्ति का आदेश दिया है। उन्होंने वेश्याओं के कनिष्ठ, मध्यम तथा उत्तम तीन प्रकार भी बतलाये हैं। दक्षिण भारत में आज भी विवाह के अवसरों पर मंगलसूत्र धारण करने का कार्य वेश्याएँ ही करती है। उत्तरपूर्व भारत में दुर्गापूजा तथा विवाह के समय वेश्या द्वारा अपने घर के द्वार से एक मुट्ठी मिट्टी फेंका जाना आवश्यक समझा जाता है। देवदासी प्रथा भारत में वेश्यावृत्ति के इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। देवदासी वे लड़कियाँ होती हैं जो पुराणों में कही गयी मान्यताओं के आधार पर धार्मिक योग्यता या महत्व प्राप्त करने के लिए लोगों द्वारा मन्दिरों को सौंप दी जाती थीं। जो मंदिर और देवस्थानों में नाचने, गाने का कार्य करती थीं। यह देवदासियाँ ईश्वर के सेवकों के रूप में मानी जाती थी परंतु कालान्तर में बहुत–सी देवदासियाँ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से वेश्याओं की भांति अपना जीवन व्यतीत करने लगीं। इन देवदासी बालाओं का उपयोग धर्मगुरु अथवा मठाधीश अपनी कामवासना की पूर्ति में करते थे। यह प्रथा भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात समाप्त हुई।

वेश्यावृत्ति की यह परम्परा हिन्दू तथा मुस्लिम सम्राटों के शासन काल में पूरे जोर–शोर से चलती रही। सौन्दर्य उपासना तथा संगीत कला के प्रोत्साहन के जाम में जवान लड़कियां सम्राटो तथा उनके मुसाहिबों को दिन–रात के अंधेरे में बदलती रहीं। अंग्रेजों के शासन काल में भी इसमें काफी बढ़ोत्तरी हुई। परिणामतः प्रत्येक नगर में एक ऐसा मोहल्ला बन गया जहाँ वे याएँ और उनके दलाल रहते थे और जहाँ खुलकर शरीर का व्यापार होता था।

अनैतिक व्यापार (वेश्यावृत्ति) क्या है?

वेश्याएँ एवं वेश्यावृत्ति भारतीय समाज में प्राचीन समय से रही है। वेश्यावृत्ति का मुख्य उद्देश्य आर्थिक लाभ होता है। कुछ स्त्रियों ने विवशता के कारण तथा कुछ ने आर्थिक लाभ के लिए इस व्यवसाय को अपनाया है। जब से हमारे देश में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव है तब से अनैतिक व्यापार की प्रवृत्ति को भी अधिक बढ़ावा मिला है। वेश्यावृत्ति एक अनैतिक एवं घृणित कार्य के साथ ही समाज का नैतिक पतन एवं उसकी व्यवस्था को समाप्त करने वाला अपराध भी है।

वेश्यावृत्ति की परिभाषा – विभिन्न विद्वानों ने वेश्यावृत्ति को कई परिभाषाएँ दी हैं जिनमें कुछ निम्नलिखित हैं –

"वेश्यावृत्ति अभ्यासगत कम या अधिक मात्रा में बिना किसी भेदभाव के यौन सम्बन्ध का व्यवसाय है जो धन के लोभ में किया जाता है।"

"वेश्यावृत्ति एक स्त्री के शरीर समर्पण तथा लैंगिक सम्बन्ध स्थापना का वह कार्य है जो अनेक व्यक्तियों के साथ धन अथवा अन्य सामग्री की उपलब्धि के हेतु करती है।"

"वेश्यावृत्ति स्वच्छन्द सम्भोगी तथा धनलोलुप आधार पर होने वाला अनुचित यौन सम्बन्ध है जिसमें संवेगात्मक उदासीनता निहित रहती है।"

"वेश्या वह स्त्री है जो बिना किसी पसन्द के, पैसों के लिए अपने शरीर को निःसंकोच कई पुरुषों को समर्पित करती है।"

"वेश्यावृत्ति स्वभाव से या कभी–कभी होने वाले लैंगिक सहवास की उस यौन सम्बन्धी क्रिया को कहते हैं जो एक से अधिक लोगों के आर्थिक लाभों की प्राप्ति के लोभ में की जाती है।"

"वेश्यावृत्ति धन के बदले में की गयी वह भेदभाव रहित व्यापारिक लेन–देन की क्रिया हैं जिसमें शरीर को काम भावना की समन्तुष्टि के लिए समर्पित किया जाता है।

"कोई भी व्यक्ति जो किसी भी प्रकार के निजी सन्तोष के लिए जब तक पूर्णकालिक अथवा अंशकालिक व्यवसाय के रूप में भिन्न–भिन्न लिंगी अथवा विषम लिंगी व्यक्तियों के साथ सामान्य अथवा असामान्य यौन सम्बन्ध स्थापित करता है तब उसे एक वेश्या कहा जाता है।" अर्थात केवल यौन सम्बन्धी की स्थापना मात्र ही वेश्यावृत्ति नहीं है बल्कि जब तक यह सम्बन्ध किसी भी स्त्री अथवा पुरुष द्वारा व्यवसाय के रूप में स्थापित किये जाते हैं तभी हम इसे वेश्यावृत्ति कहते हैं।

वेश्यावृत्ति के कारण निम्नलिखित हैं – आधुनिक युग में स्त्रियों को वेश्यावृत्ति की ओर प्रेरित करने वाले प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

1) आर्थिक कारण :– अनेक स्त्रियाँ अपनी एवं आश्रितों की क्षुधा की ज्वाला शांत करने के लिए विवश हो इस वृत्ति को अपनाती हैं। जीविकोपार्जन के अन्य साधनों के अभाव तथा अन्य कार्यों के अत्यंत श्रमसाध्य एवं अल्वैतनिक होने के कारण वेश्यावृत्ति की ओर आकर्षित होती हैं। घनीवर्ग द्वारा प्रस्तु विलासिता, आत्मनिरति तथा छिछोरेपन के अन्यान्य उदाहरण भी प्रोत्साहन के कारण बनते हैं। कानपुर के एक अध्ययन के अनुसार लगभग 65 प्रतिशत वेश्याएँ आर्थिक आर्थिक कारणवश इस वृत्ति को अपनाती हैं।

2) **सामाजिक कारण** – समाज ने अपनी मान्यताओं, रूढ़ियों और त्रुटिपूर्ण नीतियों द्वारा इस समस्या को और जटिल बना दिया है। विवाह संस्कार के कठोर नियम, दहेजप्रथा, विधवाविवाह पर प्रतिबंध, सामान्य चारित्रिक भूल के लिए सामाजिक बहिष्कार, अनमेल विवाह, तलाकप्रथा का अभाव आदि अनेक कारण इस घृणित वृत्ति को अपनाने में सहायक होते हैं। इस वृत्ति को त्यागने के पश्चात् अन्य कोई विकल्प नहीं होता। ऐसी स्त्रियों के लिए समाज के द्वारा सर्वदा के लिए बंद हो जाते हैं। वेश्याओं की कन्याएँ समाज द्वारा सर्वथा त्याज्य होने के कारण अपनी माँ की ही वृत्ति अपनाने के लिए बाध्य होती हैं। समाज में स्त्रियों की संख्या पुरुषों की अपेक्षा अधिक होने तथा शारीरिक, सामाजिक एवं आर्थिक रूप से बाधाग्रस्त होने के कारण अनेक पुरुषों के लिए विवाहसंबंध स्थापित करना संभव नहीं हो पाता। इनकी कामतृप्ति का एकमात्र स्थल वेश्यालय होता है। वेश्याएँ तथा स्त्री व्यापार में संलग्न अनेक व्यक्ति भोली भाली बालिकाओं की विषम आर्थिक स्थिति का लाभ उठाकर तथा सुखमय भविष्य का प्रलोभन देकर उन्हें इस व्यवसाय में प्रविष्ट कराते हैं। चरित्रहीन माता–पिता अथवा साथियों का संपर्क, अश्लील, साहित्य, वासनात्मक मनोविनोद और चलचित्रों में कामोत्तेजक प्रसंगों का बाहुल्य आदि वेश्यावृत्ति के पोषक प्रमाणित होते हैं।

3) **मनोवैज्ञानिक कारण** – वेश्यावृत्ति का एक प्रमुख आधार मनोवैज्ञानिक है। कतिपय स्त्री पुरुषों में कामकाज प्रवृत्ति इतनी प्रबल होती है कि इसकी तृप्ति, मात्र वैवाहिक संबंध द्वारा संभव नहीं होती। उनकी कामवासना की स्वतंत्र प्रवृत्ति उन्मुक्त यौनसंबंध द्वारा पुष्ट होती है। विवाहित पुरुषों के वेश्यागमन तथा विवाहित स्त्रियों के विवाहेतर संबंध में यही प्रवृत्ति क्रियाशील रहती है।

भारत में वेश्यावृत्ति – भारत में वेश्यावृत्ति या देहव्यापार अभी भी अनैतिक देहव्यापार कानून के तहत आते हैं। समय–समय पर इसके कानूनी मान्यता को लेकर चर्चायें गर्म होती रहती हैं। सेक्सवर्कर्रों तथा कुछ स्वयंसेवी संगठनों के द्वारा इस तरह की मांग उठती रहती है। कुछ वर्ष पहले महिला यौनकर्मियों का कोलकाता में एक अधिवेशन हुआ जिसमें यौनकर्मियों के संगठन नेशनल नेटवर्क ऑफ सेक्सवर्कर्स ने अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ने का फैसला किया।

लेकिन बगैर कानूनी मान्यता के भी पूरे देश में यह कारोबार धरल्ले से चल रहा है। देश में आज कुल ग्यारह सौ सत्तर रेड लाईट एरिया है। इसमें व्यापारिक दृष्टिकोण से सबसे ज्यादा धंधा वाला एरिया है कोलकात्ता और मुम्बई। एक आकड़े के अनुसार करोड़ों

रूपयो का साप्ताहिक बाजार है अकेले मुम्बई का रेडलाईट एरिया। राजस्थान, उत्तर प्रदेश और उड़ीसा एक ऐसा क्षेत्र है जहां देह व्यापार की प्रथा का एक लम्बा इतिहास है। इतिहास के पन्नों को पलट कर देखें तो पहले जो मुजरा तथा नाच–गानों के केन्द्र के रूप में जाने जाते थे वही बाद में वेश्यावृत्ति के अड्डों के रूप में मशहूर हो गए।

एक अध्ययन रिपोर्ट में कहा गया है कि देश में यौनकर्मियों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही हैं। 1997 में यौनकर्मियों की संख्या 20 लाख थी जो 2003–04 तक बढ़कर 30 लाख हो गई। 2006 में महिला और बाल विकास विभाग द्वारा तैयार रिपोर्ट में यह भी पाया गया था कि देश में 90 फीसदी यौनकर्मियों की उम्र 15 से 35 साल के बीच है।

ऐसे भी मामले देखने में आए हैं जिसमें झारखण्ड, उत्तर प्रदेश, राजस्थान और उत्तरांचल में 12 से 15 वर्ष की कम उम्र की लड़कियों को भी वेश्यावृत्ति में धकेल दिया जाता है। पश्चिम बंगाल की राजधानी कोलकात्ता से सटा दक्षिण 24–परगना जिले के मधुसूदन गांव में तो वेश्यावृत्ति को जिन्दगी का हिस्सा माना जाता है। सबसे दिलचस्प बात यह है कि वहां के लोग इसे कोई बदनामी नहीं मानते। उनके अनुसार यह सब उनकी जीवनशैली का हिस्सा है और उन्हें इस पर कोई शर्मिन्दगी नहीं है। इस पूरे गांव की अर्थव्यवस्था इसी धंधे पर टिकी है।

देश में रोजाना 2000 लाख रूपये का देह व्यापार होता है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के एक अध्ययन के मुताबिक भारत में 68 प्रतिशत लड़कियों को रोजगार के झांसे में फंसाकर वेश्यालयों तक पहुंचाया जाता है। 17 प्रतिशत शादी के वायदे में फंसकर आती हैं। वेश्यावृत्ति में लगी लड़कियों और महिलाओं की तादाद 30 लाख है। मुम्बई और ठाणे के वेश्यावृत्ति के अड्डों से तो खण्डित रूस और मध्य एशियाई देशों की युवतियों को पकड़ा गया है। भारत में वेश्यावृत्ति के बाजार को देखते हुए अनेक देशों की युवतियां वेश्यावृत्ति के जरिए कमाई करने के लिए भारत की ओर रूख कर रही हैं।

मुम्बई पुलिस के दस्तावेजों के मुताबिक बाहर से आकर यहां वेश्यावृत्ति में लिप्त युवतियों में उज्बेकिस्तान की युवतियाँ सबसे ज्यादा हैं। गृह मंत्रालय के वर्ष 2007 के आंकड़े के अनुसार भारत में तमिलनाडु और कर्नाटक देहव्यापार में शीर्ष पर हैं। 2007 के आंकड़े के अनुसार वेश्यावृत्ति के 1199 मामले तमिलनाडु में और 612 मामले कर्नाटक में दर्ज किए गए। ये मामले वेश्यावृत्ति निवारण कानून के तहत दर्ज किए गए हैं।

वेश्यावृत्ति और कानून (भारत) – भारतवर्ष में वैवाहिक संबंध के बाहर यौनसंबंध अच्छा नहीं समझा जाता है। वेश्यावृत्ति भी इसके अंतर्गत है। लेकिन दो वयस्कों के यौनसंबंध को, यदि वह जनशिष्टाचार के विपरीत न हो, कानून व्यक्तिगत मानता है, जो दंडनीय नहीं है। 'भारतीय दंडविधान' 1860 से 'वेश्यावृत्ति उन्मूलन विधेयक' 1956 तक सभी कानून सामान्यतया वेश्यालयों के कार्यव्यापार को संयत एवं नियंत्रित रखने तक ही प्रभावी रहे हैं। वेश्यावृत्ति का उन्मूलन सरल नहीं है, पर ऐसे सभी संभव प्रयास किए जाने चाहिए जिससे इस व्यवसाय को प्रोत्साहन न मिले, समाज की नैतिकता का ह्रास न हो और जनस्वास्थ्य पर रतिज रोगों का दुष्प्रभाव न पड़े। कानून स्त्रीव्यापार में संलग्न अपराधियों को कठोरतम दंड देने में सक्षम हो। यह समस्या समाज की है। समाज समय की गति को पहचाने और अपनी उन मान्यताओं और रूढ़ियों का परित्याग करे, जो वेश्यावृत्ति को प्रोत्साहन प्रदान करती हैं। समाज के अपेक्षित योगदान के अभाव में इस समस्या का समाधान संभव नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ :–

1) ठाकुर डॉ. आद्यदत्त, देव वेदों में भारतीय नारी, पृष्ठ 104
2) डॉ. मता चंद्रशेखर, मानवाधिकार और महिलाएं पृष्ठ 43
3) तेजस्कर पाण्डे, ओजस्कर पाण्डे, समाज कार्य (महिलाओं के संदर्भ में)
4) मालवीय रश्मि, (10 जुलाई, 1997) "नारी उत्पीड़न"
5) डॉ. फरहत खान, महिलायें एवं आपराधिक विधि, पृष्ठ 135

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

भारत में जल की स्थिति के संदर्भ में विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. बी.एल. शर्मा (निर्देशक)
पूर्व. सहा. प्राध्यापक, विधि शास. विधि महाविद्यालय, उज्जैन
बीरेन्द्र कुमार बड़गईयाँ (शोध छात्र)
विधि विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

भारत का कुल क्षेत्रफल 32, 87, 263 वर्ग किमी है। समूचे विश्व में जल उपभोग में भारत का स्थान दूसरा है। पहले स्थान पर चीन है। भारत के लोग जल उपभोग के लिए वर्षा जल, भू–गर्भीय जल, नदियों तथा जल अन्य परम्परागत स्रोतों पर निर्भर करते हैं। वर्षा जल और हिमपात भारत में जल के प्रमुख स्रोत हैं। सालाना सकल वर्षा जल 4000 अरब घन मीटर है। वार्षिक वर्षा औसतन 1,170 मिमी. है। हालांकि क्षेत्रवार इसमें काफी असमानता भी है। जहाँ चेरापूंजी में 11,000 किमी., वार्षिक वर्षा होती है, वहीं राजस्थान के जैसलमेर जैसे क्षेत्रों में वर्षा का वार्षिक औसत मात्र 100 से 120 मिमी. के बीच ही रहता है। यह सच है कि मेघ वर्षा के रूप में हमें अच्छी मात्रा में जलराशि प्रदान करते हैं। हमारे यहाँ अमेरिका की औसत वर्षा से छह गुना अधिक वर्षा होती है, तथापि इसके अनिश्चित वितरण और सही प्रबन्धन न हो पाने के कारण हमें जल संकट से जूझना पड़ता है। जो जलराशि हमें एक वर्श में वर्षा से मिलती है, उसका मात्र 28 प्रतिशत ही हम इस्तेमाल कर पाते हैं। भारत में नदियाँ भी जल की प्रमुख स्रोत हैं, किन्तु देश की 90 प्रतिशत से भी अधिक नदियाँ ऐसी हैं, जिनमें बहाव रूपी जल की उपलब्धता मात्र चार महीनों तक ही रहती है। देश के 15 मुख्य बेसिनों में जल के अप्रवाह का क्षेत्रफल 20,000 वर्ग किमी. से भी ज्यादा है। 45 मध्यम और 120 से भी ज्यादा ऐसे लघु नदी क्षेत्र हैं, जिनका जल अप्रवाह क्षेत्रफल 2000 से 20,000 वर्ग किमी. है। देश की 12 प्रमुख नदियों के जल ग्रहण क्षेत्र को यदि मिला लिया जाए, तो यह लगभग 2528 लाख हेक्टेयर हे। केन्द्रीय जल आयोग के आँकड़ों के अनुसार, भारत में प्राकृतिक जल संसाधन के रूप में नदियों का वार्षिक अप्रवाह लगभग 1869 घन किमी. है। इसमें से 690 घन किमी. जल का ही उपयोग हम कर पाते हैं। परम्परागत जल स्रोतों की उपेक्षा एवं उचित रख–रखाव न होने के कारण इनका भी दायरा सिकुड़ा है। इसके बावजूद आज देश की 18.2 प्रतिशत जनसंख्या जल के लिए कुँओं पर निर्भर करती है। इसके अलावा देश की 1.2 प्रतिशत जनसंख्या अन्य पारम्परिक जल स्रोतों पर निर्भर करती है। भारत में 19. 2 करोड़ परिवारों में से मात्र 7.5 करोड़ परिवार (39 प्रतिशत) ही ऐसे हैं, जिन्हें घर के भीतर पेयजल उपलब्ध है। 8.5 करोड़ परिवारों (44.3 प्रतिशत) को परिसर के निकट तथा 3.2 करोड़ परिवारों (16.7 प्रतिशत) को दूर से पानी लाना पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ यह दूरी 500 मीटर से भी अधिक है, वहीं शहरी क्षेत्रों में 100 मीटर या उससे अधिक है।

भू–जल की बात करें, तो हमारे देश में 170 करोड़ घन मीटर भू–जल का भण्डार है। भू–जल पर हमारी निर्भरता कितनी अधिक बढ़ चुकी है, इसका पता इसी से चलता है कि देश में 80 प्रतिशत से भी ज्यादा घरेलू पानी की आपूर्ति इसी स्रोत से होती है। कृषि कार्यों में भी यह खूब प्रयुक्त होता है। केन्द्रीय भू–जल बोर्ड के मुताबिक 265 लाख हेक्टेयर मीटर भू–जल का दोहन हम प्रतिवर्ष कर सकते हैं। पूरे देश में उपलब्ध कुल भू–जल की मात्रा 931.88 बिलियन क्यूबिक मीटर जल सिंचाई कार्यों के लिए सुरक्षित है तथा 70.93 बिलियन क्यूबिक मीटर जल औद्योगिक तथा घरेलू उपयोगों के लिए सुरक्षित है। अधिक दोहन का यह नतीजा है कि भू–जल का स्तर तेजी से नीचे जा रहा है। औसतन एक से तीन मीटर जल स्तर सालाना नीचे जा रहा है। पुनर्भरण का प्रतिशत दोहन की तुलना में बहुत कम है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में पुनर्भरण का प्रतिशत 20 के भीतर ही है। इससे स्थिति और बिगड़ी है। जल संकट से जूझ रहे चीन जैसे कई विकासशील देशों की तुलना में हमारे देश में भू–जल के लिए कोई विशेष कानून नहीं है। कोई भी भू–जल का तब तक दोहन कर सकता है, जब तक कि उसकी जमीन के नीचे से पानी निकलता रहे।

एक भारतीय नागरिक एक वर्ष में औसतन 470 घन मीटर जल का उपयोग करता है। वर्ष 1955 में मीठे पानी की प्रतिव्यक्ति वार्षिक उपलब्धता 5,277 घन मीटर थी, जो कि वर्ष 1990 में घटकर 2,464 घन मीटर रह गई। वर्तमान में यह प्रतिव्यक्ति, प्रतिवर्ष 2000 घन मीटर हो चुकी है। वर्ष 2025 तक हमारे देश में

प्रतिव्यक्ति, प्रतिवर्ष जल की उपलब्धता घटकर 1000 घन मीटर होने की सम्भावना है, जिसे वैज्ञानिक भीषण जल संकट की स्थिति मान रहे हैं। विदित हो कि भारत में कृषि, औद्योगिक व घरेलू क्षेत्रों में प्रतिवर्ष कुल 829 अरब घन मीटर पानी का उपयोग किया जाता है। वर्ष 2025 तक इसमें 40 प्रतिशत वृद्धि सम्भावित है। चूंकि भारत एक कृषि प्रधान देश है, अत एव यहाँ कृशि कार्यों में शुद्ध पानी की खपत सबसे ज्यादा होती है। भारत विश्व का सबसे बड़ा सिंचाई तन्त्र है। विभिन्न राज्यो में जहाँ सिंचाई में 95 प्रतिशत शुद्ध जल की खपत होती है, वहीं राष्ट्रीय स्तर पर इस खपत का प्रतिशत 80 है।

रेखाचित्र क्र. 1.1

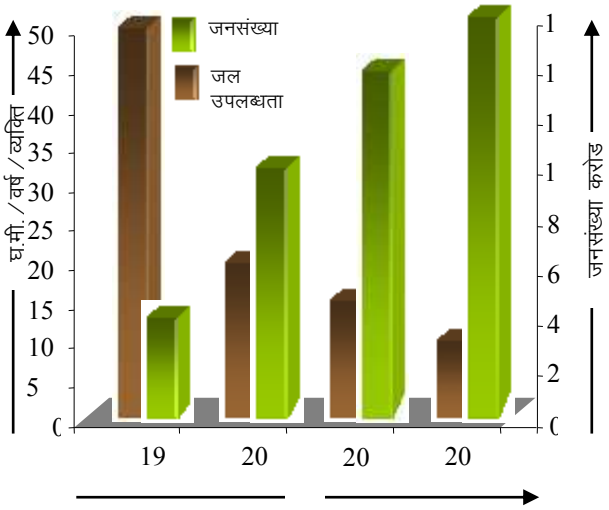

भारत में ऊर्जा की बढ़ती माँग एवं तीव्र औद्योगिकीकरण ने भी पानी की खपत की बढ़ाया है। औद्योगिक क्षेत्र में जल उपभोग की वार्षिक मात्रा 4.2 प्रतिशत की दर से बढ़ सकती है। यह भी कम दुःखद नहीं है कि देश के 90 प्रतिशत जल संसाधन अनुपचारित घरेलू व औद्योगिक कचरे, रासायनिक कीटनाशकों व खाद के भारत में जल की खपत तो बढ़ रही है, किन्तु इसकी उपलब्धता निरन्तर घट रही है। दिल्ली को ही लें, तो यहाँ प्रतिदिन 650 करोड़ गैलन पानी की आवश्यकता है, किन्तु 400 करोड़ गैलन पानी ही उपलब्ध हो पाता है। इसी प्रकार मुम्बई को रोजाना 750 करोड़ गैलन पानी की आवश्यकता है, किन्तु 530 करोड़ गैलन पानी ही उपलब्ध हो पाता है। कमोबेश सभी महानगरों की स्थिति ऐसी ही है। उन्हें जरूरत के मुताबिक पानी नहीं मिल पाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता हैं कि आधुनिक युग में जल न्यूनता से चाहे वह विश्व या भारतीय राज्य हो सभी में शुद्ध जल की कमी आई है और जल की उपयोगिता में वृद्धि हुई हैं और जिसे देखते हुवे आने वाले पीढ़ी के भविष्य के लिए स्वच्छ जल की आवश्यकता रहेगी।

जल संसाधन :– पृथ्वी के लगभग तीन चौथाई हिस्से पर विश्व के महासागरों का अधिकार है। संयुक्त राष्ट्र के अनुमानों के अनुसार पृथ्वी पर जल की कुल मात्रा लगभग 1400 मिलियन घन किलोमीटर है जो कि पृथ्वी पर 3000 मीटर गहरी परत बिछा देने के लिए काफी है। तथापि जल की इस विशाल मात्रा में स्वच्छ जल का अनुपात बहुत कम है। पृथ्वी पर उपलब्ध समग्र जल में से लगभग 2.7 प्रतिशत जल स्वच्छ है जिसमें से लगभग 75.2 प्रतिशत जल ध्रुवीय क्षेत्रों में जमा रहता है और 22.6 प्रतिशत भूजल के रूप में विद्यमान है। शेष जल झीलों, नदियों, वायुमण्डल, नमी, मृदा और वनस्पति में मौजूद है। जल की जो मात्रा उपभोग और अन्य प्रयोगों के लिए वस्तुतः उपलब्ध है, वह नदियों, झीलों और भूजल में उपलब्ध मात्रा का छोटा–सा हिस्सा है। इसलिए जल संसाधन विकास और प्रबन्ध की बाबत संकट इसलिए उत्पन्न होता है क्योंकि अधिकांश जल उपभोग के लिए उपलब्ध नहीं हो पाता और दूसरे इसका विषमतापूर्ण स्थानिक वितरण इसकी एक अन्य विशिष्टता है। फलतः जल का महत्व स्वीकार किया गया है और इसके किफायती प्रयोग तथा प्रबन्ध पर अधिक बल दिया गया है।

पृथ्वी पर उपलब्ध जल जल–वैज्ञानिक चक्र के माध्यम से चलायमान है। अधिकांश उपभोक्ताओं जैसे कि मनुष्यों, पशुओं अथवा पौधों के लिए जल के संचलन की जरूरत होती है। जल संसाधनों की गतिशील और नवीकरणीय प्रकृति और इसके प्रयोग की बारम्बार जरूरत को दृष्टिगत रखते हुए यह जरूरी है कि जल संसाधनों को उनकी प्रवाह दरों के अनुसार मापा जाए। इस प्रकार जल संसाधनों के दो पहलू हैं। अधिकांश विकासात्मक जरूरतों के लिए प्रवाह के रूप में मापित गतिशील संसाधन अधिक प्रासंगिक हैं। आरक्षित भण्डार की स्थिर अथवा नियत प्रकृति और साथ ही जल की मात्रा तथा जल निकायों के क्षेत्र की लम्बाई व मत्स्यपालन, नौ संचालन आदि जैसे कुछेक क्रियाकलापों

के लिए भी प्रासंगिक है। इन दोनों पक्षों पर नीचे चर्चा की गई।

संदर्भ सूची :–

1. डॉ. अनिरूद्ध प्रसाद, पर्यावरण एवं पर्यावरणीय संरक्षण विधि की रूपरेखा, सप्तम संस्करण, 2013 सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स
2. आर्मिन रोजेनक्रेन्ज आदि, इनवायरन्मेण्टल लॉ एंड पालिसी इन इंडिया 1995
3. राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद् 2012
4. पर्यावरण ऊर्जा टाइम : मार्च–2008 (रायपुर संस्करण), पृ.–11.
5. वी. वी. एस. कपूर (2002), भारतीय संस्कृति, धर्म एवं पर्यावरण, पृ.–67.
6. एच. एल. शर्मा (2003), पर्यावरण के बदलते आयाम, पृ.–9.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

कृषि विकास में तकनीक और संचार माध्यमों की भूमिका और प्रभावों का विश्लेषात्मक अध्ययन

लक्ष्मी कुमार श्रीवास्तव (शोधार्थी)
(जनसंचार और पत्रकारिता), महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विवि, चित्रकूट, जिला–सतना
डॉ वीरेद्र कुमार व्यास (शोध निर्देशक)
एसोसिएट प्रोफेसर, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विवि, चित्रकूट, जिला–सतना

प्रस्तावना :– कृषि मानव की सबसे महत्वपूर्ण पहली आर्थिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह भारत के नवनिर्माण की आधार शिला है। कृषि के अंतर्गत चाहे रबी या खरीफ की फसलों का उत्पादन हो या फिर पशुपालन हो, सब इसके नवनिर्माण में सहायक सिद्ध होते है।प्रस्तुत शोध अध्ययन में तकनीक आधारित कृषि और उनमें संचार माध्यमों की भूमिका का अध्ययन किया गया है। भारत जैसे विविधता वाले देश में प्राकृतिक और और मानवीय दशाओं में विविधता के परिणामस्वरूप विभिन्न भागों के कृषि स्वरूप में विविधता पाया जाना स्वाभाविक है। कृषि उत्पादन के क्षेत्रीय पक्ष और उसके उत्पादन प्रतिरूप पर भौगौलिक दृष्टिकोण, मानवीय दशाओं और मानवीय परिस्थितियों के प्रभाव को अध्ययन किया गया है। क्षेत्रीय विकास के भावी नियोजन के लिये सरकारों के प्रयासों और खेतीहरों की मेहनत के चलते ही कृषि के रकबे में लगातार इजाफा हो रहा है। यह तकनीक के माध्यम से ही सफल हो पाया कि प्रदेश और देश में उत्पादन लगातार बढ़ रहा है, लेकिन इस प्रगृति के दुष्परिणाम भी लगातार सामने आ रहे है। अत्यधिक मात्रा में तकनीक और रसायनों के प्रयोगों से उत्पादन में उत्तरोतर बढ़ाात्ततरी हो रही है, लेकिन कृषि भूमि में खराबी एक कारण आ रहा है। अब कृषि भूमि में इतनी शक्ति नहीं बची कि वह प्राकृतिक रूप से खरपतवार और कीटाणुओं से लड़ सके। किसान धीरे–धीरे सिर्फ कीटनाशकों पर निर्भर होता जा रहा है।रबी फसलों हो फिर खरीफ की फसल वह सिर्फ रयासनों पर निर्भर होता जा रहा है। मध्यप्रदेश के सतना जिले की बात करें तो सतना जिले का कुल भौगौलिक क्षेत्र 637.68 वर्ग किलोमीटर है,जिसमें 8.24 प्रतिशत वन भाग है। इसके अलावा बाकी क्षेत्र तीन टीलों में बसा हुआ है। जनसंख्या का दबाब,आसपास के क्षेत्रों में तेजी से होता औधोगिकरण और कृषि भूमि में लगातार हो रहा रसायनों के प्रयोग ने कृषि भूमि की उत्पादकता को सीधे तौर पर प्रभावित किया है। यहां पर कृषि भूमि में कमी होती जा रही है।

वर्तमान समय में विकास का मुख्य पैमाना तकनीकी विकास बन गया है। तकनीकी विकास का मुख्य आधार संचार माध्यमों का विकास है। संचार माध्यमों के विकास और कृषि का तकनीकी से सुसजज्जित होने से कृषि और किसानों को सीधे तौर पर लाभ तो हुआ है, लेकिन इसके दुष्परिणामों से भी इंकार नहीं किया जा सकता है। ई–कम्यूनिकेशन, ई–कामर्स और ई–गवर्नेंस ने तेज रफ्तार की कार्यप्रणाली को विकसित करने का काम किया है। सूचना संचार तकनीक की ग्लोबल गांव की परिकल्पना को एक छोटे से बटन या क्लिक में सीमित कर दिया है। आज कृषि काम ही नहीं, कृषि से संबंधित योजनाये, मौसम की जानकारी, मंडी में खरीदी ब्रिकी के टोकन, मंडी के रोज भावों के उतार–चढ़ाव, शॉपिग, बैकिग, ई–टिकिट, बिल पेमेंट सभी आनलाइन हो गये है। अब दूसरे चरण में डिजिटल इंडिया एंव ई–क्रांति जैसी योजनायें को लागू करने के लिये इंटरनेट की सुविधायें प्रदेश समेत देश के गावों में पहुंचाने के कार्य में जुटी है। ऐसे में कृषि के समावेशी विकास में संचार और सूचना तकनीक के प्रयोग और उसका महत्व प्रतिपादित होने लगा है, बल्कि इसकी सख्त जरूरत महसूस की जा रही है। इसी क्रम में बहुत सी कृषि आधारित योजनाओं का डिजिटलाइजेशन किया जा रहा है। साथ ही साथ कृषि संबंधी जानकारियों को मुहैया कराने के लिये तेजी से आनलाइन पोर्टल और मोबाइल एप तैयार किये जा रहे है। इतना ही नहीं किसानों को कृषि से संबंधित सभी प्रकार की जानकारियां मुहैया कराने के लिये पूरे प्रदेश यहां तक की देश के स्तर पर टोल फ्री कांल सेंटर बनाये गये है। बाजार भाव से जुड़ी जानकारियों के लिये समार्ट फोन का तेजी से उपयोग किया जा रहा है। मंडी के भाव, अनाज की खरीदी के भाव,फलों की बिक्री के भाव और फूल का आवक की जानकारी सभी मोबाइल पर मुहैया करायी जा रही है,और यह जानकारी मोबाइल की लोकेशन से 50 से 70 किलोमीटर के दायरे में मुहैया करायी जा रही है.ताकि किसानों के अपने पास की मंडी या ब्रिकी सेंटर की जानकारी मुहैया हो सकें।

कृषि विकास और संचार क्रांति :– भारत एक ऐसा देश है, जहां की लगभग 60 फीसदी के आसपास

जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रो में अपना जीवन यापन करती है। दस साल पहले भारत की लगभग 70 फीसदी आबादी ग्रामीणों क्षेत्रों पर निर्भर थी। 2015 में भारत में 35 करोड़ से ज्यादा इंटरनेट प्रयोगकर्ता थे, जो पूरे देश की आबादी के 30 फीसदी के आसपास थी। लेकिन 2018 में बढ़कर यह संख्या 60 फीसदी को पार कर गयी।

अब यदि ग्रामीण क्षेत्रो की बात करे तो ग्रमीण क्षेत्रों में इंटरनेट की सुविधायें मुहैया कराने का प्रतिशत लगभग आधा है। देश की सरकार के सामने यह चुनौती है कि ग्रामीण क्षेत्रों में तेजी गति से इंटरनेट की सुविधायें मुहैया करायी जाये। वैसे डिजिटल इंडिया का नारा देनी वाली सरकार का प्रयास है कि तेजी गति से ग्रामीण क्षेत्रों तो इंटरनेट सेवा से जोड़ा जाये। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली अधिकतर जनसंख्या कृषि पर या कृषि आधारित कामों पर निर्भर करती है। ऐसे में इस बात की जरूरत महसूस की जा रही है कि नई तकनीक और तकनीक के विकास के जरिए कृषि सेवाओं का विकास किया जाये। कृषि को तकनीक से जोड़कर उन्नत फसल की पैदावार करने के लिये किसानों को न केवल प्रोत्साहित किया जाये, बल्कि ग्रामीण रहवासियों को जागरूकता के लिये भी योजनाओं का संचालन किया जाये। हालांकि इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि केद्र की सरकार हो या फिर राज्यों की सरकारें, कृषि की उन्नत पैदावार के लिये कई योजनाओं का क्रियान्वयन कर रही है। सबसे पहले ग्यारवीं पंचवर्षीय योजना 2010–11 में मिशन मोड़ प्रोजेक्ट शुरू किया, जिसमें देश के 7 राज्यों को शामिल किया था। 2014.15 में केद्र सरकार ने इस योजना का विस्तार किया और 22 राज्यों और 7 केद्र शासित प्रदेशों में इस योजना को लागू कर दिया।

इस योजना के अंतर्गत कृषि विज्ञान केंद्र, टच स्क्रीन कोयस्क,कांमन सर्विस सेंटर, किसान कांल सेंटर,एग्री क्लीनिक जैसी सुविधायें ग्रामीण क्षेत्रों और किसानों को मुहैया करायी गयी। इन सुविधायों को जन–जन तक पहुंचाने में संचार माध्यमों की भूमिका से इंकार नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा तकनीक आधारित ही अन्य योजनायें जैसे एम–किसान, फार्मर्स पोर्टल, बीमा पोर्टल, सूचना पद्धित, किसान ज्ञान मैनेंजमेंट प्रणाली आदि कृषि को उन्नत बनाने में अपनी सहभागिता भी निभा रही है। कृषि विभाग ने अकेले किसानों से संबंधित 80 से ज्यादा पोर्टल न केवल विकसित किये है, बल्कि इन पोर्टल के जरिये कृषि रूपी रोजगार से जुड़े किसानों के लिये फसलों के संबंध में विश्वस्तरीय जानकारी मुहैया करायी जा रही है। मृदा परीक्षण, जल परीक्षण, विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों की जानकारी, उन्नत बीजों की जानकारी, सरकार की विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत दी जाने वाली सब्सिडी की जानकारी और योजनाओं की जानकारियों के संबंध में जागरूकता फैलाने के लिये सूचना और संचार तकनीक का कारगर उपयोग किया जा रहा है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि कृषि कल्याणकारी योजनाओं का तेजी से डिजिटलिजेशन हो रहा है। कृषि पुनर्वास में डिजिटल तकनीक के बढ़ते प्रयोग से योजनाओं के क्रियान्वयन में बढ़ती पारदर्शिता से भी इंकार नहीं किया जा सकता है। वर्तमान में विभिन्न प्रकार की सब्सिडी के भुगतान बैंकों के माध्यम से ही किये जा रहे है। किसानों की फसलों के दाम सीधे किसानों के बैंक खाते में आ रहे है। तकनीक और सूचना क्रांति का यह परिणाम है कि किसानों को अब दलालों से मुक्ति मिल पायी है। किसानों को मंडी में सही दाम मिल रहे है, किसानों को यह स्वंत्रतता है कि किसान अपनी उपज सही दाम पर बेचे और उसका भुगतान सीधे बैंक खाते में हो। कृषि पुर्नवास के क्षेत्र में डिजिटल तकनीक के बढ़ते प्रयोग से योजनाओं के क्रियान्वयन में बढ़ रही पारदर्शिता से भी इंकार नहीं किया जा सकता है। सभी प्रकार के भूगतान बैंक खातों में होने से किसानों को न पैसे मिलने में देरी हो रही है, साथ ही किसानों को पैसे मिलने में लेटलतीफी पर भी रोक लगी है। कृषि पुनर्वास में डिजिटल तकनीक के बढ़ते प्रयोग से योजनाओं को जमीनी स्तर तक पहुंचाने में पारदर्शिता में भी वृद्धि होगी।

निष्कर्ष :– वैश्वीकरण के इस दौर में भारतीय अर्थव्यवस्था को सदृण बनाये रखने के लिये कृषि का समावेशी विकास करना किसी चुनौती से कम नहीं है। इसके पीछे के कारण भी है कि देश की लगभग 60 फीसदी आबादी प्रत्यक्ष या फिर अप्रत्यक्ष रूप से कृषि या फिर कृषि से संबंधित रोजगार से जुड़ी हुई है। सूचना संचार तकनीक की विभिन्न विधायें भी इनको सशक्त करने की दिशा में आगे बढ़ रही है। यही कारण कहा जा सकता है कि कृषि में उन्नत फसल की पैदावार और कृषि संबंधी समस्याओं को हल करने में इस तकनीक का प्रयोग तेजी से किया जा रहा है। वर्तमान में देश में 50 फीसदी से ज्यादा इंटरनेट उपभोक्ता देश में है, यह संख्या साल दर साल बढ़ती जा रही है। इस बात से इंकार भी नहीं किया जा

सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट का प्रयोग भी तेजी से बढ़ रहा है। डिजिटल इंडिया और ई–क्रांति सूचना और संचार क्रांति के बढ़ते स्वरूप है। इन तकनीकों के विकास से किसानों को काफी राहत और मदद मिल रही है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के दौरान इन तकनीकों के विकास, डिजिटल इंडिया, ई–क्रांति और सूचना संचार प्रौद्योगिकी की भूमिका की जांच करने का प्रयास किया गया है। विषय विशेषज्ञों से लगातार मंथन करने और द्रितीयक आकड़ो का विश्लेषण करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि कृषि विकास दर में सूचना संचार तकनीक के प्रयोग से सकारात्मक दृष्टिकोण सामने आ रहा है, और इसका लाभ भी लक्षित समूह वर्ग को मिल रहा है। इसी दिशा में एक कदम आगे बढ़ाने को फसल बीमा योजना के रूप में भी देखा जा सकता है। अतिवृष्टि, औलावृष्टि या फिर बैमौसम बारिश होने से किसानों को लगातार फसलें चौपट होने का खतरा मंडराता रहता था, अब सरकार ने रबी की फसल के लिये 2 फीसदी, खरीफ की फसल के लिये 1.5 फीसदी और बागबानी के लिये 5 फीसदी प्रीमियम पर बीमा किसानों को मुहैया कराया गया है। बीमा कराने के लिये सरकार ने अलग से एप की सुविधा भी किसानों को मुहैया करायी है, लेकिन इसका फायदा सिर्फ 55 फीसदी किसान ही ले पा रहे है। मोबाइल एप पर किसानों को मंडी के भाव मुहैया कराये जा रहे है। इतना ही नहीं स्थानीय भाषाओं में किसानों को जानकारी मुहैया कराने के प्रयास भी तेजी से किये जा रहे है। कांल सेंटर के माध्यम से किसानों के निशुल्क विशेषज्ञों से सलाह मुहैया कराने का प्रयास किया जा रहा है।

किसान ज्ञान मैनेजमैंट पोर्टल के जरिये किसानों को कृषि से सबंधित जानकारियों को देने का प्रयास किया जा रहा है। कृषि विज्ञान में हो रहे नये प्रयोगो, नये शोध के तैयार किये गये उन्नत किस्म के बीज, जैविक उर्वरक बाजार में पहुंच रहे है। आधुनिक कृषि उपकरणों का विकास किया जा रहा है, और इनकी जानकारी संचार के माध्यमों से मुहैया करायी जा रही है। यह जानकारी सिर्फ कृषि क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है, बल्कि मधुमक्खी पालन, मुर्गी पालन, मछली पालन और बागवानी फसलों के जरिये अतिरिक्त आय बढ़ाने के भी प्रयास किये जा रहे है। इन तमाम उदाहरणों के बाद स्पष्ठ है कि वर्तमान में सूचना और संचार की तकनीक में लगातार हो रहे प्रयोगों का लाभ सीधे तौर पर किसानों और खेती को मील रहा है। सरकार द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं और उनके हितग्राहियों की संख्या का आकलन करें तो स्पष्ठ है कि सूचना संचार और डिजिटल मीडिया आने वाले समय में कृषि गवर्नेंस का मुख्य आधार होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पटेरिया, मोहन (2001) – विज्ञान संचार, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली
2. पंत, एन.सी (2002) – पत्रकारिता का इतिहास, तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली।
3. पटैरिया, एम (2007) – विज्ञान पत्रकारिता, वाणी प्रकाशन, दिल्ली।
4. वैदिक, वेद प्रकाशन (2006) – हिंदी पत्रकारिता के विविधि आयाम, हिंदी बुक प्रकाशन सेंटर, दिल्ली।
5. चतुर्वेदी, ज्ञानेश्वर (2013) – मीडिया समग्र–ज्ञान क्रांति और सायबर संस्कृति, स्वराज प्रकाशन।
6. निसरता,वी (2014) – कृषि एवं ग्रामीण पत्रकारिता, रावत प्रकाशन।
7. Gagan, G- (2012) - Social Media Networking and concept of International Citizenship- Issue of communication development and society pp- 163&167- New Delhi: Kanishka Publisher] Distributors.
8. Kumar-D- (2014) - Educational Journalisms- Delhi: R-K Publishers and Distributer.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

अधिवक्ताओं के विधिक अधिकारों के संरक्षण की प्रासंगिकता

श्रीमति रीता दुबे
कार्यकारी प्राचार्य श्री नीलकंठ विधि महाविद्यालय, जबलपुर (म. प्र.)
शोधार्थी – बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म. प्र.)

सारांश :– विधि व्यवसाय एक आदर्श व्यवसाय है। इस व्यवसाय को अधिवक्ताओं द्वारा किया जाता है अधिवक्ता से आशय ऐसे व्यक्ति से है जो कि राज्य विधिज्ञ परिषद् में नामांकित होता है और वह किसी भी अन्य व्यक्ति की ओर से न्यायालय में पैरवी कर सकता है। बार से आशय अधिवक्ताओं के समूह से होता है।

अधिवक्ता को न्याय प्रणाली का एक अभिन्न अंग माना जाता है क्योंकि अधिवक्ता ही न्यायालय के समक्ष अपने पक्षकारों का पक्ष रखते है और न्यायालय को वाद के तथ्यों व विधि के सिद्धांतों से अवगत कराते हैं तब उसके आधार पर न्यायालय अपना निर्णय देता है इसके अतिरिक्त अधिवक्ता न्यायालय को व्यवसायिक सलाह भी देते है ये नागरिकों के अधिकार व स्वतंत्रता की रक्षा करते है आज अधिवक्ता केवल विधि विशेषज्ञ नहीं है बल्कि समाज के निर्देशक भी हैं क्योंकि अधिवक्ता समाज में शांति तथा व्यवस्था बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है क्योंकि इनका कार्य विवादों को बढ़ावा देना नहीं हैं बल्कि उन विवादों का उचित समाधान ढूंढ़ना है साथ ही अधिवक्ता विधि के सुधार में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है सबसे पहले ब्रिटिश भारत में जब 26 मार्च 1974 को ब्रिटिश सम्राट ने एक चार्टर द्वारा कलकत्ते में एक सुप्रीम कोर्ट की स्थापना की तब उन्होंने इस चार्टर के खण्ड 11 में अधिवक्ता के नामांकन व प्रवेश के लिए प्रावधान किया परन्तु उस समय केवल ब्रिटिश अधिवक्ता ही सुप्रीम कोर्ट के समक्ष पैरवी कर सकते थे भारतीय अधिवक्ता नहीं परन्तु सन् 1861 में जब भारत में इण्ड़ियन हाई कोर्ट एक्ट,1861 पारित हुआ तब भारतीय अधिवक्ताओं को भी पैरवी करने का अधिकार दे दिया गया और सन् 1923 में स्त्रियों को अधिवक्ता होने का अधिकार दिया गया।

इस प्रकार वैयक्तिक सुविधा और विधि के प्राविधिक स्वरूप ने **अधिवक्ता को जन्म** दिया और हमारी विधि शिक्षा का उद्देश्य भी अधिवक्ताओं का निर्माण करना है।

मुख्य शब्दावली :– अधिवक्ता, विधि व्यवसाय, राज्य विधिज्ञ परिषद्, विधि शासन, विधि विशेषज्ञ, विधिक वृत्ति, न्यायप्रणाली, अधिवक्ता संघ, बार, न्यायप्रशासन

प्रस्तावना :– प्रारम्भ में विधिक वृत्ति न्यायालय में विधि के गूढ़ार्थ को स्पष्ट करने में सहायक थी, आज भी विधिक वृत्ति का मुख्य कार्य यही है –

''विधि के गूढ़ार्थ को स्पष्ट करना''

आधुनिक समाज का स्वरूप व प्रगति विधि के द्वारा नियंत्रित होती है परंतु विधान सभा द्वारा जो विधि निर्मित की जाती है वो विधि तो केवल सैद्धांतिक मूल नियम होती है इस विधि के शब्दजाल को व्यवस्थित करके व्यवहारिक रूप तो अधिवक्ताओं द्वारा ही निर्मित किया जाता है, जिसके सहारे समाज प्रगति करता हैं। इस प्रकार अधिवक्ता आधुनिक समाज का मुख्य आधार स्तंभ होता है।

हरिशंकर रस्तोगी बनाम गिरधारी शर्मा (1978) 2, एस.सी.सी. 165 के वाद में यह कहा गया कि अधिवक्ता वर्ग न्याय प्रणाली का एक विस्तृत भाग होता है, और अधिवक्ता न्यायालय का एक अधिकारी होता है वह विशेषज्ञ का मास्टर होता है परन्तु वह

न्यायालय के प्रति जबावदेह होता है, और उच्च नैतिकता द्वारा शासित होता है न्यायिक प्रक्रिया की सफलता भी विधि व्यवसाय की सेवा पर निर्भर करती है।

चीफ एक्जीक्यूटीव ऑफीसर गुजरात मेरिटाइम बोर्ड बनाम पटेल गंज बाबा के वाद में गुजरात उच्च न्यायालय के न्यायाधीश एन.एन.माथुर का कहना है कि ''अधिवक्ता का न्याय प्रशासन में एक विशिष्ट स्थान है, वह जन साधारण को न्याय प्रदान करने में न्यायालय की सहायता करने वाला सर्वाधिक सक्षम व्यक्ति है वकालत करने का उसका अधिकार एकाधिकार है, सहज ही में उसका स्थान अन्य व्यक्ति द्वारा नहीं जा सकता है''।

अधिवक्ता अपने अधिकारों की पैरवी अच्छी तरह से कर सके तथा वे स्वतंत्र व निष्पक्ष रूप से न्यायालय के समक्ष अपनी बात रख सके इसके लिए अधिवक्ताओं को कई अधिकार प्रदान किए गए है –

जैसे –

पैरवी करने का अधिकार

पक्षकारों की ओर से राजीनामा आदि करने का अधिकार।

न्यायालय में समुचित स्थान पर बैठने का अधिकार।

पक्षकारों से संबंधित पत्रावली व दस्तावेज आदि का निरीक्षण करने का अधिकार

पक्षकारों से संबंधित मामलों में दस्तावेज, आदेश, निर्णय, डिक्री आदि की प्रतिलिपि लेने का अधिकार।

पूर्व निर्णय प्रस्तुत करने का अधिकार

अधिवक्ता न्यायालय में उपस्थित न होने पर अपनी और से उपस्थिति देने हेतु किसी अन्य अधिवक्ता को ब्रीफ करने का अधिकार।

किसी भी मामले में साक्ष्य लेने हेतु एवं किसी स्थान, लेखा, फर्म आदि का निरीक्षण करने हेतु कमिश्नर के रूप में नियुक्त होने का अधिकार।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 126 के अधीन वृत्तिक संसूचनाओं का अधिकार।

सिविल प्रक्रिया संहिता एवं दण्ड़ प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत अधिवक्ता को रिसीवर के रूप में नियुक्त होने का अधिकार

अपने पक्षकारों से पैरवी करने बावत् पारश्रमिक पाने का अधिकार।

शपथ आयुक्त के रूप में नियुक्त होने का अधिकार।

नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त होने के अधिकार।

पक्षकार की और से उसके अधिवक्ता द्वारा सम्मन आदि की तामीली करने का अधिकार।

इस प्रकार अधिवक्ताओं को कई महत्वपूर्ण अधिकार दिए गए है यह अधिकार अधिवक्ता को स्वतंत्र एवं निष्पक्ष रूप से अपने कर्तव्य के निर्वहन में सहायक होते है।

अधिवक्ता अधिनियम 1961 में विधि व्यवसाय का अधिकार –:

इस अधिनियम के **अध्याय–4 की धारा–29 से धारा–34,** तक अधिवक्ताओं के विधि–व्यवसाय करने के अधिकार का वर्णन किया गया है विधि–व्यवसाय के अधिकार को सार्थक करने हेतु अनिवार्य है कि प्रत्येक अधिवक्ता का राज्य नामावली में नाम दर्ज हो।

इस अधिनियम की **धारा–29 में** केवल अधिवक्ताओं को ही मान्यता प्राप्त व्यक्तियों का वर्ग विधि व्यवसाय करने के हकदार होंगें को समाहित करते हुए कहा गया है कि–इस एक्ट के अधीन रहते हुए नियत दिन से विधि व्यवसाय करने के लिये हकदार व्यक्तियों का एक ही वर्ग होगा अर्थात् अधिवक्ता

धारा–30 में कहा गया है कि– प्रत्येक अधिवक्ता जिसका नाम राज्य नामावली में दर्ज है, वह उन सभी राज्यों में विधि व्यवसाय कर सकता है, जिन राज्यों में इस एक्ट का विस्तार है।

एन.के.बाजपेई बनाम भारत संघ और (2012)4 एस.सी.सी. 653– ए.आई.आर. 2012 एस.सी. 1310 के वाद में यह कहा गया कि धारा–30 के अधीन अधिवक्ताओं का विधि व्यवसाय करने का अधिकार एक निर्बंधित अधिकार है ना कि आत्यंतिक अधिकार यद्यपि यह अधिवक्ता अधिनियम के अधीन वैधानिक अधिकार होने के साथ–साथ संविधान के अनुच्छेछ 19(1) (छ) के अधीन मौलिक अधिकार भी है किन्तु युक्तियुक्त निर्बन्धनों के अध्यधीन।

ब्रजमोहन लाल बनाम भारत संघ और अन्य (2012)6 एस.सी.सी. 502 के वाद में यह कहा गया कि अधिवक्ताओं का विधि व्यवसाय करने का अधिकार आत्यंतिक अधिकार नहीं है बल्कि यह अधिवक्ता अधिनियम, 1961 में अनुध्यात अपेक्षित योग्यतायें धारित

करने और भारतीय विधिज्ञ परिषद् नियमों में विहित परिसीमाओं के अध्यधीन है।

जमशेद अंसारी बनाम इलाहाबाद उच्च न्यायालय ए.आई.आर. 2016 एस.सी. 3997 के वाद में यह कहा गया कि धारा 30 के अधीन अधिवक्ताओं का विधि–व्यवसाय करने का अधिकार आत्यंतिक नहीं होता अपितु संविधान के अनुच्छेद 225 और अधिवक्ता अधिनियम, की धारा 34 के अधीन उच्च न्यायालय की नियम बनाने की शक्ति के अध्यधीन होता हैं।

राजेन्द्र सिंह बनाम डॉ. सुरेन्द्र सिंह 1982 सीआर. एलजे. 3749 एम.पी. के वाद में यह कहा गया है कि अधिवक्ता की अपनी अचार संहिता है अतः कोई भी व्यक्ति तब तक विधि व्यवसाय नहीं कर सकता है जब तक की उसके पास निर्धारित शैक्षणिक योग्यता न हो और यदि वह अधिवक्ता नामावली में नाम नामांकित कराये बिना विधि व्यवसाय करता है तोफिर उसे इस अधिनियम की धारा 45 के अंतर्गत दोष सिद्ध किया जायेगा।

धारा 31 को 1976, के अधिनियम, संख्या 107 की धारा 7 द्वारा (1–1–1977 से) निसरित किया गया है।

धारा 32 में यह उल्लेख किया गया है कोई भी न्यायालय किसी भी व्यक्ति को जो इस एक्ट के अधीन अधिवक्ता के रूप में नामांकित नहीं है उपसंजात होने की अनुज्ञा दे सकता है अर्थात उपस्थित होने की आज्ञा दे सकता है।

धारा 33 में यह उल्लेख किया गया है कि कोई भी व्यक्ति किसी न्यायालय के समक्ष विधि व्यवसाय करने का हकदार तब तक नहीं होगा जब तक की वह इस अधिनियम के अधीन अधिवक्ता के रूप में नामांकित न हो।

धारा 34 में यह उल्लेख किया गया है कि उच्च न्यायालय ऐसी शर्तों को रखते हुए नियम बना सकता है जिन शर्तो के अधीन रहते हुए किसी अधिवक्ता को उच्च न्यायालय में और उसके अधीनस्थ न्यायालय में विधि व्यवसाय करने के लिए अनुज्ञात किया जायेगा।

ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि :– प्राचीन आदि युग में समाज की सम्पूर्ण क्रियाशक्ति मुखिया के हाथ में होती थी उस समय विधि का स्वरूप बहुत ही आदिम होता था परन्तु जब से न्याय प्रशासन मुखिया के हाथ से समुदाय के हाथ में आ गया तब से विधि का स्वरूप निखरने लगा क्योंकि इससे विधि के नियम केवल एक व्यक्ति (मुखिया) की निरकुंश मनोवाछाओं पर नहीं बनते थे बल्कि सार्वजनिक सिद्धांत के रूप में होते थे इस प्रकार विधि के उत्कर्ष में समुदाय की सहायता रही है।

मध्य ऐशिया में सर्वप्रथम न्यायाधीशों ने विधि को समुचित रूप दिया।

धर्म प्रधान देशों में धर्म पंड़ितों ने विधि को समुचित रूप दिया।

मिस्त्र व मेसोपोटामिया में न्यायाधीशों ने विधि को समुचित रूप दिया।

ग्रीस में अधिवक्ताओं और पंचों ने विधि को समुचित रूप दिया।

रोम में न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं एवं न्याय विशेषज्ञों ने विधि को समुचित रूप दिया।

मध्य कालीन ब्रिटेन और फ्रांस में न्यायाधीशों और अधिवक्ताओं और एटर्नी ने विधि को समुचित रूप प्रदान किया।

इस प्रकार विधि का निर्माण धर्म अधिकारियों से विधिकारों के क्षेत्र में आता गया प्रत्येक देश में।

अधिवक्ताओं का जन्म कैसे हुआ :– प्रारम्भ में व्यक्ति स्वयं ही न्यायालय में पक्ष निवेदन करते थे। किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा पक्ष निवेदन किया जाये ऐसी प्रथा नहीं थी परन्तु जैसे–जैसे विधि का स्वरूप जटिल होता गया वैसे–वैसे एक व्यक्ति के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह विधि के गूढ़ तत्वों को एक विशेषज्ञ द्वारा समझे और साथ ही अपना पक्ष निवेदन न्यायालय में इस विधि विशेषज्ञ द्वारा कराये इसके अलावा कभी–कभी व्यक्ति अपनी निजी परिस्थितियों के कारण स्वयं न्यायालय में उपस्थित नहीं हो पाता था तब भी यह आवश्यक था कि वह अपना प्रतिनिधित्व किसी अन्य व्यक्ति से कराये। इस प्रकार वैयक्तिक सुविधा और विधि के प्राविधिक स्वरूप ने **अधिवक्ताओं को जन्म** दिया।

इन अधिवक्ताओं ने हमेशा से ही अपने विद्वान होने के कारण समाज में बहुत सम्मान प्राप्त किया तब इन अधिवक्ताओं की प्रतिष्ठा से आकर्षित होकर समाज के अनेक युवक विधि के ज्ञान की और आकर्षित होने लगे इस कारण विधि के छात्रों की संख्या बढ़ने लगी और अधिवक्ताओं का कार्य विधि की शिक्षा देना भी हो गया इन्हौंने विधि के शिक्षा केन्द्र स्थापित किए और तब वे इस शिक्षा को देने के बदले में लोगो से पारिश्रमिक भी लेते थे। इस प्रकार विधि व्यवसाय एक उपयोगी व्यवसाय बनता गया।

प्रारम्भ में इस विधि व्यवसाय को धर्म अधिकारी और न्यायालय नियंत्रित करते थे परन्तु कुछ समय पश्चात् जब ये व्यवसाय थोड़ा सा पुष्ट हो गया तब इस व्यवसाय के अपने स्वयं के संघ बन गए तब इस संघ के नियंत्रण में विधि व्यवसाय हो गया और फिर ये विधि–व्यवसाय और भी प्रगतिशील होता गया इस विधिक वृत्ति में सदैव से ही दो प्रकार के अधिवक्ता होते थे–

पहला– जो अन्य व्यक्ति की औंर से न्यायालय में पक्ष निवेदन करता हैं।

दूसरा–जो न्यायालय में नहीं जाता है, परन्तु वह अन्य सभी प्रकार से दावें का विधि दायित्व लेता है।

यही अन्तर आज के सॉलिसीटर और अधिवक्ता में है अधिवक्ताओं की यही स्थिति अन्य देशों जैसे–

रोम, फ्रांस औंर इग्लैण्ड़ एवं भारत में रही है।

रोम में :– रोम में भी वैयक्तिक सुविधा और विधि की जटिलता को दूर करने के लिये अधिवक्ता से विधि सहमति लेने की प्रथा स्थापित हुई ये अधिवक्ता अपने पक्षकार को विधि के अनुकूल कथन को रटा देते थे और तव वह उन्हीं शब्दों में न्यायालय में अपना पक्ष निवेदन करते थे इस सहायता के लिये अधिवक्ता पक्षकारों से पारिश्रमिक भी लेते थे इससे रोम के युवक की इस व्यवसाय की ओर आकर्षित होने लगे और विधि का अध्ययन करने लगे। 300 ई. पूर्व के पार्श्वकाल में अधिवक्ता पक्षकार के कथनों को लिखते नहीं थे बल्कि उनके स्थान पर पक्षकारों के प्रतिनिधि बनकर न्यायालय में अपना पक्ष निवेदन करते थे।

रोम में **सिसरो** नाम के एक प्रमुख अधिवक्ता थे, उनसे कई युवकों ने विधि की शिक्षा प्राप्त की उन्होंने वैयक्तिक शिक्षा केन्द्र भी खोले थे, जहाँ वे युवकों को विधि शिक्षा में सैद्धांतिक और व्यवहारिक दोंनों प्रकार की शिक्षा देते थे, इस कारण सिसरो को **अधिवक्ताओं का सृष्टा** भी कहा जाता है। यूरोप और मध्य यूरोप में भी कई विधि शिक्षा केन्द्र स्थापित हुए इन केन्द्रों में यह नियम बना दिया गया कि अधिवक्ता पद ग्रहण करने के लिए इन केन्द्रो से प्रमाण पत्र प्राप्त करें (निश्चित समय तक अधिवक्ता बने रहने के लिए) यह अवधि चार या पांच वर्ष की होती थी। इस प्रकार बारहवीं शताब्दीं में रोम में विधि शिक्षा की पुर्नजाग्रति हुई और तब पूरे यूरोप में विधि वृत्ति के शिक्षालय निर्मित हुए।

फ्रांस में :– फांस में दो प्रकार के विधि वृत्तिकार थे – अधिवक्ता और विधि सहायक

13वीं शताब्दीं में फ्रांस में भी अधिवक्ताओं ने पक्षकारों का पक्ष निवेदन प्रारम्भ कर दिया। 14वीं शताब्दीं में अधिवक्ता इतने लोकप्रिय हो गये कि इन्हें राज्य द्वारा ही पक्ष निवेदन करने की विधिवत् स्वीकृति मिल गई परन्तु राज्य ने इनके लिए यह नियम बनाया कि अधिवक्ताओं को अपने सद्व्यवहार की शपथग्रहण करनी होगी। और राज्य नें अधिवक्ताओं को उचित पारिश्रमिक लेने की भी अनुमति प्रदान कर दी।

इस प्रकार 14वीं शताब्दी में राज्य अधिवक्ताओं को उचित पारिश्रमिक लेने की स्वीकृति प्रदान कर दी गई। वैसे साधारण तौर पे तो सभी न्यायालयों में अधिवक्ताओं द्वारा ही पक्ष निवेदन किया जाता है। परन्तु जब अधिवक्ताओं के संघ बनने लगे तब इन संघ के सदस्यों द्वारा भी पक्ष निवेदन किया जाने लगा ये संघ अधिवक्ताओं के व्यवहार को नियंत्रण और संचालन करते थे।

इग्लैण्ड में :– इग्लैण्ड़ में 13वीं शताब्दी में विधिक वृत्ति का उदभव हुआ 13वीं शताब्दी से पहले ये विधिक वृत्ति धार्मिक संस्थाओं से संबंधित थी यहाँ भी **अधिवक्ता** और **विधि सहायक** दो प्रकार के विधि वृत्तिकार थे। इग्लैण्ड़ में प्रारम्भ में अधिवक्ता तभी पक्ष निवेदन कर सकते थे, जब अधिवक्ता को न्यायालय की विशेष अनुमति प्राप्त हो जाती थी।

एड़वर्ड प्रथम के काल में – अधिवक्ता के विरूद्ध आसावधानी व धोखे का दावा चल सकता था।

इग्लैण्ड में कॉमन लॉ अधिवक्ता और धार्मिक संस्थाओं के अधिवक्ताओं में अंतर था क्योंकि धार्मिक संस्था वाले अधिवक्ता केवल विशेष अवसर पर ही पक्ष निवेदन कर सकते थे प्रत्येक अवसर पर नहीं जबकि कॉमन लॉ अधिवक्ता प्रत्येक अवसर पर पक्ष निवेदन कर सकते थे।

ईयर बुक के अनुसार – 13वीं, 14 वीं, शताब्दी में अधिवक्ता समुदाय ने उचित रूप धारण कर लिया और तब ये समुदाय इग्लैण्ड़ की विधि प्रणाली की मुख्य शक्ति बन गया।

14वीं शताब्दी में अधिवक्ता दो प्रकार के हुए – 1 **साजेंट**, 2 **अप्रेंटिस**

साजेंट (राज्य सेवक) ये राज्य की ओर से दावों का पक्ष निवेदन करते थे इन्हें अप्रेंटिस अधिवक्ताओं से अधिक सुविधा प्राप्त होती थी, ये साजेंट ईयर बुक संपादित करते थे यदि अधिवक्ता द्वारा कोई भी असावधानी की जाती थी या अन्य कोई दोष किया जाता था तब न्यायालय में अधिवक्ता और पक्षकार के बीच समझौता कराया जाता था। इग्लैंण्ड में अधिवक्ता संघ को **"इन्"** कहते थे।

प्रमुख अधिवक्ता संघो के नाम थे – **लिंकन इन, ग्रेज इन, दि–मिडिल टैंपल** आदि।

इन अधिवक्ता संघों में इग्लैंण्ड की विधि शिक्षा दी जाती है क्योंकि इग्लैंण्ड के विश्व विद्यालयों में विधि की शिक्षा नहीं दी जाती थी इस प्रकार ये अधिवक्ता संघ विधि व्यवसाय के शिक्षालय भी थे इन शिक्षालयों में सैद्धांतिक और व्यवहारिक दोंनों प्रकार की शिक्षा दी जाती थी, 15वीं शताब्दी में ये अधिवक्ता संघ अधिक पुष्ट हो गये तब इन संघो को अपने विधि शिक्षा वाले शिष्यों को अधिवक्ता का प्रमाण पत्र देने का अधिकार प्राप्त हो गया।

भारत में :– भारतीय आर्य परम्परा के अनुसार आदिकाल से विधि पूर्ण न्याय की अपेक्षा की जाती थी उस समय राजा न्यायकारी के रूप में विधि से आबद्ध होता था।

ऋग्वेद काल में – इस काल में पुरोहित ओर विधि ज्ञाता की सहायता से न्याय प्रशासन होता था परन्तु आधुनिक अधिवक्ता का परिचय नहीं मिलता है न ही पक्ष निवेदन की प्रथा थी।

धर्म सूत्र काल में – विधि पंड़ितों और विधि पंड़ितों की सभाओं की सहायता से न्याय प्रशासन होता था।

गौतम सूत्र में – विधिज्ञाता प्रांविवाक के नाम से वर्णित ही जिसने न्यायाधीश का रूप लिया।

ब्रहस्पति का कथन है कि :– जब न्यायालय द्वारा याचिका को अस्वीकार कर लिया जाता है तब न्यायालय कार्य में अधिवक्ताओं की सहायता की आवश्यकता पड़ती है उस समय न्यायालय में राज्यकीय विधि पंडित होते थे और समाज में विधिज्ञाता होते थे इन विधिज्ञाता से समाज के लोग विधिक सहायता लेते थे और विधि पंड़ित न्यायालय में सहायता करते थे परन्तु ये विधिज्ञाता विधिक सहायता के बदले में पारिश्रमिक लेते थे।

यवन (विदेशियों) के आने के पश्चात भारत में मुस्लिम प्रथा के अनुसार न्याय होने लगा इस यवन प्रथा के अनुसार स्पेन, तुर्कीस्थान, ईरान में इस्लाम राज्य के प्रारम्भ में अधिवक्ता की प्रथा नहीं थी बल्कि उनके यहां काजी, मुफ्ती, और मुज्तहिद विधिज्ञाता होते थे ये कुरान व इज्मा के अनुसार काम करते थे। सुबुक्तगीन, महमूद गजनी तथा मोहम्मद गोरी ने यही प्रथा भारत में प्रचलित की इब्नबतूता के कथनानुसार तुगलक काल में वकील का वर्णन मिलता है अर्थात् तुगलक काल में वकील की प्रथा थी औरंगजेब के राज्यकाल में भी वकील प्रथा थी औरंगजेब के राज्य काल में यह नियम था कि यदि दावे के दोंनों पक्षकार और वकील अनुपस्थित रहते है तोफिर उनके दावे को अस्वीकार कर दिया जायेगा उस समय के इतिहासकार **बदोनी राय** अरजानी नामक एक हिंदू वकील का वर्णन किया है।

सर–टामस रो ने भी औरंगजेब के काल में वकील प्रथा होने की बात की पुष्टि की है ईस्ट इंण्ड़िया कम्पनी के कई दावों में वकीलों द्वारा पक्ष निवेदन का वर्णन प्राप्त होता है। भारत के अंतिम स्वतंत्र शासक **बहादुर शाह** के समय में एक व्यक्ति को चतुर अधिवक्ता होने के लिए वकालत खाँ की पदवी दी गई थी। औरंगजेब के कॉल में दो प्रकार के अधिवक्ता होते थे–

राज्यकीय अधिवक्ता– वकील – ए – सरकार
साधारण अधिवक्ता – वकील – ए– शहरा रहते थे।

उस समय वकील–ए–सरकार को एक रूपया प्रतिदिन वेतन मिलता था। और उस समय यह आवश्यक था कि सभी अधिवक्ता वकालत नामा लेकर पक्ष निवेदन करें। औरंगजेब के कॉल के पश्चात् इस्ट इण्ड़िया कम्पनी के समय कुछ विशेष प्रदेशों में अधिवक्ता के संबंध में कुछ रेग्यूलेशन धारायें बनाई गई सबसे पहले 1793 ई. में बंगाल, बिहार, उड़ीसा में अधिवक्ता के संबंध में रेग्यूलेशन धारायें बनाई गईं। लार्ड कार्नवालिस के उद्योग से विधिक वृत्ति और अधिक व्यवस्थित हुई और तब यहा से अधिवक्ता को शपथ, पारिश्रमिक और वकालत नामा द्वारा पक्ष निवेदन करने का अधिकार दिया गया साथ ही सनद की बातें निश्चित हुई और तब वकील और मुख्तार दोनो को वकालत करने का अधिकार दे दिया गया।

1802 ई. में मद्रास में
1803 ई. में उत्तर पश्चिमी सीमांत प्रदेशों में
1827 ई. में बम्बई प्रांन्त में

इसी प्रकार के रेग्यूलेशन नियम बनाए गए और 1846 ई. में सभी प्रदेशों के लिए विधि नियम बनाए गए। (विधिक वृत्ति के नियंत्रण के लिए)

1846 ई. के विधि नियम अनुसार किसी भी धर्म का व्यक्ति चाहे वह हिन्दू हो, या मुस्लमान या अन्य अनुयायी वह अधिवक्ता हो सकता है।

1865 ई. के विधि के नियम अनुसार प्लीडर, मुख्तार, रेवेन्यू प्रतिनिधि भी वकालत करने के अधिकारी हो सकते है।

1889 ई. में हाई कोर्ट के अधिवक्ताओं को सनद देने और उससे वर्जित करने का अधिकार प्राप्त हुआ।

1923 ई. में स्त्रियों को अधिवक्ता होने का अधिकार दिया गया। अंत में 1926 में भारतीय विधिज्ञ परिषद् अधिनियम, पारित हुआ। (देश के समस्त एवं विभिन्न श्रेणियों के अधिवक्ताओं में समानता लाने के लिए) वर्तमान में आज सभी अधिवक्ता संघ भारतीय विधिज्ञ परिषद् के नियंत्रण में होते है। इस प्रकार अन्य देशों के समान भारत में भी निजी सुविधा और विधि प्राविधिकता के कारण अधिवक्ता का जन्म हुआ।

शोध पेपर का उद्देश्य :– "अधिवक्ता के अधिकारों का संरक्षण करना"

अधिवक्ता के अधिकारों के संबंध में कुछ महत्वपूर्ण अभिलेख –

अधिवक्ताओं के विधिक संरक्षण के संबंध में विधेयक एवं अधिनियम :– काफी समय से यह देखा जा रहा है कि अधिवक्ताओं के विरूद्ध हिंसा, हमला, आपराधिक बल, आपराधिक अभित्रास का प्रयोग किया जा रहा है, जिससे उनके विधिक अधिकारों का हनन हो रहा है तब इन विधिक अधिकारों के संरक्षण हेतु मध्यप्रदेश में **मध्यप्रदेश विधि व्यवसायी सुरक्षा विधेयक, 2012** और **मध्यप्रदेश अधिवक्ता संरक्षण अधिनियम, 2016** का प्रस्ताव रखा गया हैं और मध्यप्रदेश अधिवक्ता संरक्षण अधिनियम, 2016 को लागू करने की मांग की जा रही है –

मध्यप्रदेश विधि व्यवसायी सुरक्षा विधेयक, 2012 :– ये विधेयक अधिवक्ताओं के विरूद्ध हमला, आपराधिक बल, धमकियों से संरक्षण प्रदान करता है। ये विधेयक भारत गणराज्य के 63वें वर्ष में मध्यप्रदेश विधायिका द्वारा अधिनियमित किया गया हैं। जो कि निम्न प्रकार है –

धारा 1 संक्षिप्त नाम प्रारंभ एवं विस्तार

इस अधिनियम को मध्यप्रदेश विधि व्यवसायी सुरक्षा अधिनियम कहा जाता है ये अधिनियम पूरे मध्यप्रदेश राज्य में लागू होगा यह सरकारी गजट में दी गई प्रकाशन की तारीख से प्रवृत्त किया जाएगा।

धारा 2 परिभाषायें –

विधि व्यवसायी – इस शब्द का तात्पर्य अधिवक्ता अधिनियम 1961 की धारा 2(1) ए मे दी गई अधिवक्ता की परिभाषा से हैं।

धारा 3 यदि कोई अधिवक्ता किसी न्यायालय में या किसी फोरम में अपने कार्य मे अभ्यासरत् हैं तोफिर उसे किसी भी प्रकार की धमकी, आपराधिक बल और हमला नहीं किया जा सकता है यह प्रतिबंधित है।

धारा 4 जो कोई व्यक्ति अपनी ईच्छा से अधिनियम की धारा 3 का उल्लघंन करता है, तोफिर उसे किसी भाँति के कारावास से जो तीन माह तक का हो सकेगा और जुर्माने से जिसकी राशि 10,000/– रूपए तक की हो सकेगी इन दोंनों से दण्ड़ित किया जायेगा।

धारा 5 धारा 3 के अंतर्गत किया गया दण्ड़नीय अपराध संज्ञेय और अजमानतीय अपराध होगा।

धारा 6 इस अधिनियम के अधीन दण्ड़नीय अपराध न्यायालय की अनुज्ञा से पीड़ित व्यक्ति द्वारा शमनीय अपराध माना जायेगा।

धारा 7 इस अपराध का विचारण प्रथम न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाएगा।

धारा 8 इस अधिनियम का कुछ अन्य अधिनियमों का अल्पीकरण में होना – इस अधिनियम की कोई भी बात किसी अन्य अधिनियम के उपबंधों का अल्पीकरण करने वाली नहीं समझी जायेगी।

मध्यप्रदेश अधिवक्ता संरक्षण अधिनियम, 2016 :–

इस अधिनियम का उद्देश्य – "अधिवक्ता बिना किसी डर, भय, दबाव, एवं बाहरी दखलअंदाजी से अपना विधि व्यवसाय कर सकें ताकि न्याय ठीक ढंग से हो एवं विधि के नियम का पालन हो"

धारा 1 संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम मध्यप्रदेश अधिवक्ता संरक्षण अधिनियम, 2016 होगा।

इसका विस्तार पूरे मध्यप्रदेश में होगा।

यह अधिनियम उस तारीख को प्रवृत्त होगा। जो तारीख राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत की जाये। इस अधिनियम में जब तक की संदर्भ से अपेक्षित न हो।

धारा 2 परिभाषायें –

अ. अधिनियम– अधिनियम से आशय मध्यप्रदेश अधिवक्ता संरक्षण अधिनियम, 2016 है।

ब. अधिवक्ता – विधि व्यवसाय से आशय जो किसी न्यायालय या फोरम में व्यवसाय करता है और जिसे अधिवक्ता अधिनियम, 1961 की धारा 2(1) (अ) में परिभाषित किया गया है और भारतीय विधिज्ञ परिषद् द्वारा बनाए गए नियमों से शासित है।

स. बार एसोशियेशन – बार एसोशियेशन से आशय मध्यप्रदेश राज्य विधिज्ञ परिषद् द्वारा मान्यता प्राप्त बार एसोसियेशन से है।

इस एक्ट में जो शब्द परिभाषित नहीं किए गए है, उन शब्दों का वही अर्थ होगा जो अर्थ अधिवक्ता अधिनियम, 1961 और भारतीय दण्ड़ संहिता, 1860 में दिया गया है।

धारा 3 हमला, आपराधिक बल, अभित्रास और धमकी पर प्रतिषेध – जो अधिवक्ता किसी भी न्यायालय में विधि व्यवसाय करता है, उस पर हमले, आपराधिक बल, अभित्रास और धमकी देने पर प्रतिषेध किया गया है।

धारा 4 जो कोई किसी भी अधिवक्ता को आपराधिक अभित्रास स्वैच्छा से करता है वह किसी भी भाँति के कारावास से दण्ड़ित किया जायेगा जिसकी अवधि 2 वर्ष और जुर्माना जो कि 10,000/– हजार रूपये तक का हो सकेगा और यदि ऐसी धमकी, मृत्यु या घोर उपहति या संपत्ति को अग्नि द्वारा नष्ट करने के लिए या ऐसा अपराध कारित करने के लिए जो कि मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्ड़ित है, या सात वर्ष के कारावास से दण्ड़ित है। वह किसी भी भांति के कारावास से जिसकी अवधि 7 वर्ष और जुर्माना जो कि 20 हजार तक का हो सकेगा।

धारा 6 इस एक्ट के अधीन किए जाने वाला प्रत्येक अपराध शमनीय या अशमनीय होगा।

धारा 9 अपराधों का विचारण – इस एक्ट के अधीन किए जाने वाले अपराधों का विचारण प्रथम न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा किया जायेगा परन्तु इस एक्ट की धारा–4 (2) में दिए गए अपराध का विचारण सेशन न्यायालय द्वारा किया जायेगा।

धारा 10 प्रतिकर का आदेश – इस एक्ट के अधीन जो कोई भी अधिवक्ता पर हमला, आपराधिक बल, गम्भीर चोट और धमकी देता है उसे प्रतिकर देने का आदेश दिया जा सकता है।

धारा 11 अधिवक्ताओं का अभियोजन – इस एक्ट में यदि किसी भी अधिवक्ता के विरूद्ध एफ.आई.आर. की जाती है, तो इसके पहले इसकी सूचना बार काउसिंल के अध्यक्ष या सचिव को भेजी जाएगी, फिर अ डी.एस. पी. द्वारा इसका अन्वेषण किया जायेगा डी.एस.पी. इस अन्वेषण को 7 दिवस के भीतर समाप्त कर देगा।

धारा 12 प्रकीर्ण – इस अधिनियम की कोई भी बात किसी अन्य अधिनियम के उपबंधों का अल्पीकरण करने वाली नहीं समझी जायेगी।

उपसंहार :– अधिवक्ता को न्यायालय का एक अधिकारी होता है इससे ही न्याय प्रशासन को स्वच्छ, शुद्ध एवं प्रदूषण मुक्त रखा जा सकता है साथ ही अधिवक्ता को समाज का एक प्रबुद्ध, विशेषाधिकृत एवं उच्च वर्ग का व्यक्ति माना जाता है क्योंकि अधिवक्ता ही समाज में शांति व्यवस्था को बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं, साथ ही समाज की विधिक व्यवस्था को कायम रखने का भी कार्य करते है ये समाज के नागरिकों के अधिकारों व स्वतंत्रता की रक्षा करते है इससे समाज में विधि का शासन साकार होता है। इस प्रकार अधिवक्ता का समाज में एक विशिष्ट स्थान होता है। अतः यदि हमें समाज में शांति व्यवस्था को कायम रखना हैं और विधि शासन को बनाये रखना है तोफिर हमें अधिवक्ता के अधिकारों का संरक्षण कराना चाहिये ताकि समाज में शांति व्यवस्था व विधि शासन को कायम रखा जा सके और न्याय प्रशासन को स्वच्छ, शुद्ध एवं प्रदूषण मुक्त रखा जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुप्ता, डॉ. एस. पी. प्रकाशन वर्ष 2018 पुनः मुद्रित सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद
2. बावेल, डॉ. बसन्ती लाल प्रकाशन वर्ष 2001 द्वितीय संस्करण सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद

3. https://www.vidhikunj.com/2017/10 Advocate की पहुंच से 01/04/2019
4. hi.m.wikipedia.org की पहुंच से 01/04/2019
5. hi.m.wikibooks.org की पहुंच से 01/04/2019
6. मध्यप्रदेश राज्य अधिवक्ता परिषद उच्च न्यायालय जबलपुर
7. गुप्ता, डॉ. एस. पी. प्रकाशन वर्ष 2018 पुनः मुद्रित सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद2
8. राय, डॉ. कैलाश प्रकाशन वर्ष 2017 पुनः मुद्रित सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद–2
9. शर्मा, डॉ.एस.एस., प्रकाशन वर्ष 2002 प्रथम संस्करण सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद– 2
10. बावेल, डॉ. बसन्ती लाल प्रकाशन वर्ष 2001 द्वितीय संस्करण सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद– 2
11. टंड़न, एम. पी., प्रकाशन वर्ष 2006 अठारहवॉ संस्करण इलाहाबाद एजेन्सी, पब्लिकेशन इलाहाबाद– 2
12. पाण्ड़े, डॉ. जय नारायण, प्रकाशन वर्ष 2018 इक्यॉवन संस्करण सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद–2
13. घोष, आर. के. प्रकाशन वर्ष 2019 द्वितीय संस्करण जबलपुर लॉ पब्लिकेशन जबलपुर

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

श्री जे. पी. चौबे, केन्द्रीय पुस्तकालय, डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय करगीरोड, कोटा का संक्षिप्त परिचय

डॉ. संगीता सिंह
(पुस्तकालयाध्यक्ष, केन्द्रीय पुस्तकालय), डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.)
कु. पायल चक्रवर्ती
(सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष, केन्द्रीय पुस्तकालय), डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.)

प्रस्तुत लेख में डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में सूचनाओं और सेवाओं पर विस्तृत जानकारी प्रदान की जा रही है, जिसके द्वारा विश्वविद्यालय में पुस्तकालय के उपयोगकर्ताओं को ज्ञान के क्षेत्र में लाभान्वित होने की जानकारी दी गई है। यहाँ ग्रंथालय की सूचनाओं और सेवाओं को उपयोगकर्ता किस प्रकार से उपयोग कर सकते हैं इसकी जानकारी दी गई है।

विश्वविद्यालय का परिचय :– डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर छत्तीसगढ़, छत्तीसगढ़ के एक निजी विश्वविद्यालयों में से एक है। सन् 2007 में डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय की स्थापना हुई है। यहाँ अनेक संकाय/विभाग संचालित होते हैं। जो निम्नानुसार है:–

कला संकाय – बी. ए. एवं एम. ए. (अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, इतिहास, समाज शास्त्र, भूगोल, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान, हिन्दी, अंग्रेजी एवं सामाजिक कार्य)

विज्ञान संकाय – बी.एस.सी., एम.एस.सी. (भौतिक विज्ञान, रसायनविज्ञान, प्राणी विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, सूक्ष्म जीव विज्ञान,)

वाणिज्य संकाय – बी. कॉम. एवं एम. कॉम.

विधि संकाय – बी.ए.एल.एल.बी., एल.एल.बी., एल.एल.एम.

शिक्षा संकाय – बी. एड. एवं एम. एड.

प्रबंधन संकाय – बी. बी. ए. एवं एम. बी. ए.

इंजीनियरिंग संकाय – बी.ई. एवं पोली सिविल इंजिनियरिंग, मैक्निकल इंजिनियरिंग, इलेक्ट्रिकल इंजिनियरिंग, कम्प्यूटर विज्ञान इंजिनियरिंग, ई.सी.ई. तथा ई.ई.ई. इत्यादि कक्षायें संचालित होतीं हैं।

पुस्तकालय का परिचय :– पुस्तकालय सामान्य तौर पर सभी क्षेत्रों में स्थित होता है, जिसमें विश्वविद्यालय के पुस्तकालय शैक्षणिक पुस्तकालय के अन्तर्गत आते हैं। जिससे विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले सभी विद्यार्थियों/शिक्षकगण/शोद्यार्थी इसका उपयोग करते हैं ताकि अपने ज्ञान का विकास कर सके। शैक्षणिक पुस्तकालय में पुस्तक/शोधपत्र/ पत्रिकाएं और भी अनेक सूचनाओं को एकत्रित करके रखा जाता है।

डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर के केन्द्रीय पुस्तकालय का वर्तमान तंत्र :– डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय के केन्द्रीय पुस्तकालय का नाम श्री जे. पी. चौबे, केन्द्रीय पुस्तकालय है। यहां वर्तमान में डॉ. संगीता सिंह, पुस्तकालयाध्यक्ष के पद पर कार्यरत् है। आपकी शैक्षणिक योग्यता, पी.एच.डी. (ग्रंथालय एवं सूचना विज्ञान) है। यहाँ 04 सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष, 05 पुस्तकालय सहायक, 03 बुक लिफ्टर तथा 02 कम्प्यूटर आपरेटर तथा 3 भृत्य कार्यरत् हैं। केन्द्रीय पुस्तकालय में कार्य का समय शासकीय अवकाश को छोड़कर प्रतिदिन सुबह 10:30 से 5:00 बजे तक निश्चित है। जिसमें स्नातक के विद्यार्थियों को 2 पुस्तकें तथा स्नातकोत्तर के विद्यार्थियों को 3 पुस्तकें, शोधार्थियों को 04 व कार्यरत् कर्मचारियों को 05 पुस्तकें प्रदान की जाती है। विद्यार्थियों को 30 दिन के लिए व यहाँ के कर्मचारियों को 60 दिन के लिए पुस्तकें प्रदान की जाती हैं।

पुस्तकालय में ई–पुस्तकालय, फोटोकापी, 05 वर्षों के प्रश्नपत्र CD/DVD की सुविधायें प्रदान की जाती है।

विश्वविद्यालय में पुस्तकें एवं ग्रंथों का क्रय पुस्तकालयाध्यक्ष एवं पुस्तकालय कमेटी के सहमति से किया जाता है। जिसमें पुस्तकालयाध्यक्ष क्रय समिति के अध्यक्ष होते है। प्रतिदिन उपयोगकर्त्ताओं का आवागमन लगभग 400–450 रहता है।

पुस्तकालय के संग्रह :–

- पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या :– 54966
- पत्रिकाओं (मैग्जीन) की संख्या :– 22
- पत्रिकाओं (जरनल्स) की संख्या :– 86
- समाचार पत्रों की संख्या :– 12
- धार्मिक ग्रंथों की संख्या :– 379
- पुस्तकालय में इनसायक्लोपिडिया की संख्या :– 34
- लघु शोध ग्रंथों की संख्या :– 1823
- शोध ग्रंथों की संख्या :– 365

किसी भी शैक्षणिक पुस्तकालय में अपनी सेवाओं को उपयोगकर्त्ता तक सही ढंग से प्रस्तुत करने के लिए डॉ. भयाली रामामृत रंगनाथन अययर ने पुस्तकालय सूत्र का प्रतिपादन 1928 में किया था जिसके द्वारा पुस्तकालय के कार्यों को सुचारू रूप से चलाया जा सकें।

डॉ. एस. आर. रंगनाथन द्वारा पुस्तकालय विज्ञान के पांच सूत्रों का प्रतिपादन सन् 1931 में किया गया था।

1. पुस्तकें उपयोग के लिए है। (Books are for use)
2. प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक। (Every Reader his/her Book)
3. प्रत्येक पुस्तक को उसका पाठक। (Every Book its Reader)
4. पाठक का समय बचायें। (Save the time of the reader)
5. पुस्तकालय एक वर्धनशील संस्था हैं। (The Library is a growing Organisation)

निष्कर्ष :– विश्वविद्यालय प्रबंधन के द्वारा उपर्युक्त पुस्तकालय सेवाओं हेतू पर्याप्त बजट प्रदान किया जाता है। जिससे की विश्वविद्यालय पुस्तकालय के सेवाओं को बेहतर ढंग से उपयोगकर्त्ताओं तक पहुंचाया जा सकें। साथ ही साथ पुस्तकालय के विभागों के कार्यों का सम्पादन किया जा सके –

1) (Acquisition) पुस्तकें अर्जन विभाग।
2) (Catalogue) वर्गीकरण एवं सूचीकरण विभाग।
3) (Catalogue) पुस्तक आदान प्रदान विभाग।
4) (OPAC) ओपेक।
4) (Serial Control) पत्र/पत्रिकाएं संग्रह विभाग।
5) (Administration) प्रशासन एवं प्रबंध विभाग।
6) (e-Library Section) ई–लाइब्रेरी विभाग।

संदर्भ :–

- ठाकुर अविनाश सिंह एवं सिंह, संगीता, ''ग्रंथालय (शासकीय जमुना प्रसाद वर्मा कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, बिलासपुर : एक संक्षिप्त परिचय ; AIYRA – Vol. 5 / No 18-
- WWW.google.com/Search-
- WWW.ramanuniversity.ac.in-

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

''गुरूतत्वविमर्श''

डॉ. दिनेश कुमार गर्ग
एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, प्राचीन राजशास्त्रर्थशास्त्र विभाग सं.सं.वि.वि. वाराणसी

गुरुशब्द यद्यपि विविधार्थक है किन्तु यहाँ आचार्य अथवा ब्रह्मविद् अर्थ परक शब्द का विचार प्रस्तुत है, कोश में गुरुशब्द का अर्थ करते है– "गृनिगरणे, गृशब्दे धातु से 'गिरति–अज्ञानं एवं गृणाति–उपदिशति धर्मं, यः स गुरुः"। अथवा गीर्यते स्तूयते वा कृग्रोरुच्च" से कु एवं उत्व होकर निष्पन्न होता है।

आचार्य याज्ञवल्क्य कहते हैं– **"स गुरुर्यः क्रियां कृत्वा वेदमस्मै प्रयच्छति।"** (याज्ञ0 स्मृति) और भी– आचार्य मनु कहते हैं कि आचार्य की सेवा से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है–यथा–

"इमं लोकं मातृभक्त्या पितृभक्त्या तु मध्यमम्।
गुरुशुश्रूषया त्वेवं ब्रह्मलोकं समश्नुते।।" (मनुस्मृतिः)

गुरु का स्वरूप–

"मातृतः पितृतः शुद्धः शुद्धभावो जितेन्द्रियः।
सर्वागमाणां तत्वज्ञः सर्वशास्त्रार्थतत्वविद्।।
परोपकारनिरतो जपपूजादितत्परः।
अमोघवचनः शान्तो वेदवेदार्थपारगः।।
योगमार्गानुसन्धाता देवताहृदयग्मः।
इत्यादिगुणसम्पन्नो गुरुरागमसम्मतः।।

अर्थात् आगमशास्त्र के अनुसार गुरु कौन है, इस पर कहते हैं, जो मातृ एवं पितृ उभयपक्ष गत शुद्धि हों, भावशुद्ध हो इन्द्रिय जयी हो, समस्त आगमों के तत्व को जानने वाला सम्पूर्णशास्त्रों के तत्वों को जानने वाला, परोपकार में सदा तत्पर, जप, अनुष्ठान–पूजा आदि में तत्पर, (जिससे मनोवृत्ति या विषयोन्मुख न हों)। जिसका वचन निष्फल न जाय, वेद एवं उसके अर्थ को जानने वाला, अष्टा योग का अनुसन्धान करने वाला, सदा देवी–देवताओं को हृदय में प्रतिष्ठित रखने वाला गुरु होता है। और भी तन्त्रसार में सद्गुरु का लक्षण बताया गया है, यथा–

"शान्तो दान्तः कुलीनश्च विनोतः शुद्धवेशवान्।
शुद्धाचारः सुप्रतिष्ठः शुचिर्दक्षः सुबुद्धिमान्।।
अध्यात्मध्याननिष्ठश्च मन्त्रतन्त्रविशारदः।
निग्रहानुग्रहे शक्तो गुरुरित्यभिधीयते।।

शान्त हो, दान्त= इन्दियजयी, कुलीन, विनयसम्पन्न, शुद्ध=सादे वेष–भूषा को धारण करने वाला, पवित्र–व्यवहार–आचरण करने वाला, जगत में प्रतिष्ठा को प्राप्त, दक्ष, सद्बुद्धि सम्पन्न, अध्यात्म= आत्मा में सदा आरूढ, ईश्वर का ध्यान करने वाला, मन्त्र, तन्त्र को जानने वाला, निग्रह एवं अनुग्रह (कृपा) करने में समर्थ गुरु कहा जाता है।

गुरुशब्दार्थ :– आगमसार में गुरुशब्द की व्याख्या करते है–

"गकारः सिद्धिदः प्रोक्तो रेफः पापस्य दाहकः।
उकारः शम्भुरित्युक्तस्त्रितयात्मा गुरुः स्मृतः।।

अर्थात् गुरु शब्द में तीन मात्रायें हैं (ग्+उ+र्+उ)। इसमें गकार सिद्धि प्रदान करने वाला, रेफ पाप समूह को जलाने वाला तथा उकार शम्भु का वाचक है। अतः गुरु में तीनों तत्व समाहित हैं। और भी

"गकारो ज्ञानसम्पत्यै रेफस्तत्वप्रकाशकः।
उकारात् शिवतादात्म्यं दद्यादिति गुरुः स्मृतः।।

अर्थात् गकार ज्ञानसम्पत्ति प्रदान करने वाला है, तथा रेफ तत्व (ब्रह्मतत्व) को प्रकाशित करने वाला, एवं शिव से तादात्म्य कराने वाला होता है।

गुरु तत्व के महत्व के बताते हुये गुरुगीता में कहा गया है–

"यज्ञो व्रतो तपोदानं जपस्तीर्थं तथैव च।
गुरुतत्वमविज्ञाय मूढास्ते चरंते जनाः।।" (गुरुगीता श्लोक सं0–08)

गुरुतत्व को न जानने वाले मूर्खलोग यज्ञ, व्रत, तप, दान, जप, तीर्थभ्रमण आदि अनेक कार्यों का आचरण करते हैं एवं

"गुरुर्बुद्धयात्मनो नान्यत् सत्यं सत्यं न संशयः।

तल्लाभार्थं प्रयत्नस्तु कर्त्तव्यो हि मनीषिभिः।।"
(गुरुगीता श्लोक सं0–9)

यह ध्रुव सत्य है, इसमें संषय नहीं कि गुरुज्ञानस्वरूप आत्मा से भिन्न नहीं है। अतः गुरु की प्राप्ति के लिये बुद्धिमानों को प्रयत्न करना चाहिए।

"गुरुपादोदकं पीत्वा शेषं शिरसि धारयेत्।
सर्वतीर्थावगाहस्य सम्प्राप्नोति फलं नरः।।"
(गुरुगीता श्लोक सं0–12)

गुरु के चरणामृत जल को पीकर और शेष को सिर पर धारण करने से सभी तीर्थों में स्नान करने का फल मनुष्य को प्राप्त हो जाता है। इसलिये कहा जा सकता है गुरु की कृपा ही भुक्ति–मुक्ति को प्रदान करती है। विना गुरु की कृपा के जीव कितना भी प्रयास करे, तत्व की प्राप्ति असम्भव है। किन्तु जब गुरु का संकल्प हो जाता है तो जीव को तत्वबोध हो जाता है। महाराज परीक्षित जी को परमविरक्त परमज्ञानी भगवद्भक्त श्री शुकदेव जी महाराज सप्ताह व्यापिनी कथा श्रवण करा रहे थे, राजा की जिज्ञासायें शान्त नहीं हो रहीं थी, बुद्धि सांसारिक चिन्तनयुक्त थी, तभी परम गुरु श्री शुकदेव जी का संकल्प होता है– कहते है–

"त्वं तु राजन् मरिष्येति पशुबुद्धिमिमां जहि"। (श्रीमद्भा0 12/5/2)

कहा हे राजन् मृत्यु संनिकट है किन्तु आपकी ये पाशविक बुद्धि संसार के व्यामोह से ग्रसित प्रतीत हो रही है, इसे छोड़ परमात्मा में अपनी बुद्धि को लगाइए। अर्थात् गुरु के संकल्प लेते ही राजा परीक्षित की बुद्धि में परिवर्तन आता है तथा वह कहते है–

"सिद्धोऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि भवता करुणात्मना।
श्रावितो यच्च मे साक्षादनादिनिधनो हरिः।।"
"भगवंस्तक्षकादिभ्यो मृत्युभ्यो न बिभेम्यहम्।
प्रविष्टो ब्रह्मनिर्वाणं ह्यभयं दर्शितं त्वया।।(श्रीमद्भा0 12/5/2 व 5)

राजा कहते हैं– भगवान् आप करुणा के मूर्तिमान् स्वरूप हैं। आपने मुझ पर परम कृपा करके, अनादि–अनन्त एकरस सत्य भगवान् श्री हरि के स्वरूप और लीलाओं का वर्णन किया। अब मैं आप की कृपा से परम अनुगृहीत एवं कृतकृत्य हो गया हूँ। भगवन् मुझे इस समय काल रूपी तक्षक से भय नहीं लग रहा, चूंकि आपकी कृपा से मुझे ब्रह्मतत्व का बोध हो चुका है।

उपर्युक्त कथन का सार है कि विना गुरु कृपा के ब्रह्मतत्व या मुक्ति की प्राप्ति सम्भव नहीं है, इसलिये हम सभी को श्री गुरुशरण होना चाहिये। तभी संसार के आवागमन से मुक्ति सम्भव है। ।।इतिशम्।।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

होलकर रियासत की स्थापना और उसके क्षेत्र का इतिहास

सोनल सिंह वास्केल (शोधार्थी)
डॉ. बी.एल. चौहान (निर्देशक)
शासकीय महाविद्यालय सरदारपुर, राजगढ़ जिला धार

14 जनवरी 1761 को पानीपत के युद्ध में मराठा सेना अब्दाली द्वारा बुरी तरह पराजीत हई। यह एक भयंकर पराजय थी। सभी अर्थो और प्रयोजनों की दृष्टि से मराठा संघ छिन्न–भिन्न होकर विभिन्न राज्यों में बिखर गया। पानीपत के युद्ध में मराठा वीरों की एक पूरी पीढ़ी एक ही बार में समाप्त हो गई। मल्हार राव को मराठा सेना पर आने वाली इस विपरीत का आभास पहले ही हो चुका था। अतएव उस दिन सुबह ही युद्ध क्षेत्र से हट गया। इस प्रकार उसने स्वयं को विपत्ति से बचा लिया और कुछ सुरक्षा के साथ पीछे हट गया।

पानीपत से लौटने पर होल्कर ने केवल मालवा में बल्कि सारे हिन्दुस्थान में मराठा प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करने के प्रयास किये। अब उसे सर्वोच्च अधिकार प्राप्त थे और उसने अपने अदम्य साहस के बल पर मराठा शासक के समस्त शत्रुओं को परास्त किया। वह कुछ समय तक ग्वालियर में स्वास्थ्यलाभ करता रहा और तदन्तर उसने एक विशाल मराठा सेना का संगठन किया। तत्पश्चात् मालवा में अपना आधिपत्य पुनः स्थापित करने के लिये वह इन्दौर पहुंचा। उसने पाया कि यहाँ शासन व्यवस्था बिगढ़ चुकी है तथा अधिकारीगंण निष्ठाहीन होते जा रहे।

मल्हारराव एक छोटे से भू–स्वामी का पुत्र था किंतु जब वह एक ऐसे विशाल क्षेत्र का अधिपति हो गया था, जिसकी वार्षिक आय 60 लाख रू थी। तथापि 26 मई 1677 को आलम पुर में उसकी अचानक मृत्यु हो गई। जहाँ उसकी स्मृतिस्वरूप एक छतरी का निर्माण किया गया है। मल्हार राव प्रथमतः सैनिक था। वह अदम्य साहसी था और मराठा सेना का अद्वितीय नायक था। उसकी उदारता लोकप्रसिद्ध थी तथा जब वह किसी सैनिक की वीरता से प्रसन्न होता था त बवह अक्सर कहा करता उसकी ढाल को रूपयों से भर दों।

मल्हार राव का एक मात्र पुत्र खण्डेराव पहले ही भरतपुर के उत्तर पूर्व में ग्यारह मील दूर स्थित कुंभेर के किले की घेराबंदी के दौरान 16 मार्च 1754 को एक तोप के गोले से मारा जा चुका था। अतः मल्हार राव होल्कर की मृत्यु के उपरांत खंडेराव का पुत्र मालेराव होल्कर गद्दी का उत्तराधिकारी हुआ। किंतु मालेराव में पागलपन के कुछ लक्षण प्रगट होने लगे थे और वह अपने पितामह की मृत्यु के पश्चात् अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहा। सिंहासनारूढ़ होने के एक वर्ष के भीतर ही 26 मार्च 1767 को उसकी मृत्यु हो गई। उसके पश्चात् उसकी माता अहिल्या बाई ने स्वयं ही राज्य की बागडोर संभाली और मल्हारा राव के एक विश्वासपात्र अधिकारी तुकोजी होल्कर को अपनी सेना का सेनापति बनाया।

मार्च 1767 में स्वर्गीय पेशवा बालाजी राव का भाई रघुनाथ राव दक्षिण मालवा आया ओर यह ज्ञात होने पर कि उसी माह की 26 तारीख को भोलेराव की मृत्यु हो गई है, उसने अपनी स्वार्थ–पूर्ति की अभिलाषा से अवसर का लाभ उठाते हुए इस बहाने होल्कर की संपत्ति पर अधिकार करना चाहा कि अब राज्य का कोई उत्तराधिकारी नहीं है अतः उस पर अधिकार किया जाना उपयुक्त है। किंतु मल्हार राव होल्कर की तेजस्वी पुत्रवधु को इतनी आसानी से झुकाया नही जा सकता था। दीवान गंगाधर चन्द्रचूड और चिन्टू विट्ठल का कूट परामर्श मानकर रघुनाथ राव ने इन्दौर पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। अहिल्याबाई ने आक्रमण से शहर की रक्षा करने की तैयारी की और उसके इस प्रयास में उसे रघुनाथ राव के पक्ष में सभी मराठा सरदारों की सहानूभूति प्राप्त हुई। अन्ततः संवेदना प्रकट करने के बहाने अहिल्याबाई से भेंट कर रघुनाथ राव ने अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा की। पेशवा माधव राव के समक्ष अहिल्या ने राज्य का उत्तराधिकारी चुनने का प्रश्न भी रखा तथा जो उत्तर प्राप्त हुआ उससे सारी स्थिति अहिल्याबाई के अनुकूल हो गई। उसे महादजी सिन्धिया का भी समर्थन प्राप्त हुआ।

अहिल्या बाई ने अब भाासन की बागडोर अपने हाथों में संभाली। तुकोजी होल्कर ने सेना का सेनापतित्व ग्रहण किया और उन कर्त्तव्यों का निर्वहन किया जो महिला होने के नाते अहिल्या बाई स्वयं करने में असमर्थ थी। अपनी नियुक्ति के पश्चात् तुकोजी ने पेशवा को नजर के रूप में 15.5 लाख रू भेंट किए और बदले मे उसे होल्कर परिवार के उत्तराधिकारी की

मान्यता प्राप्ति के प्रतीकस्वरूप खिलप्त्रत प्राप्त हुई। तुकोजी अपनी उपकारिणी अहिल्या बाई के प्रति आभार क्षण भर के लिए भी नहीं भुला। उसने आजीवन निष्ठापूर्वक और कर्त्तव्यपरायणता के साथ उसकी सेवा की तथा वह सदैव महत्वपूर्ण विषयों पर उसको परामर्श देता रहा। तथापित तुकोजी राव ने मुख्यतः होल्कर सेना के प्रधान, सेनापति के कर्त्तव्यों का ही पालन किया और समय–समय पर विभिन्न अभियानों में भाग लेता रहा। सन् 1792 में उसने अपनी सेना में यूरोपीय युद्ध कौशल और अनुशासन लागू किया। परिणामस्वरूप चार बटालियनी का गठन किया गया और उन्हें एक फ्रांन्सीसी व्यक्ति डुड्रनेक के अधीन रखा।

13 अगस्त 1795 को 60 वर्ष की दीर्घायू में अहिल्या बाई की मृत्यु हो गई। उसने होल्कर परिवार द्वारा अधिकृत क्षेत्रों पर विलक्षण दक्षता और कुशलतापूर्वक 30 वर्षो तक शासन किया। निष्पक्ष इतिहासकारों द्वारा उसके शासन की भूरि–भूरि सराहना की गई है। इस आदरणीय महिला की प्रंशसा करते हुए सर जॉन मालकम ने एक असाधारण चित्र प्रस्तुत किया है। ''वह नारी थी, किंतु उसमें मिथ्या अभिमान नहीं था, वह कट्टरपंथी थी किंतु असहिष्णु नहीं उसका मस्ति क गहरी अंध श्रद्धा से परिपूर्ण था, फिर भी वह उससे वही प्रभाव ग्रहण करती थी, जो अंध श्रद्धागस्त व्यक्तियों के लिये हितकारी हो, वह ऐसी महिला थी, जो अत्यंत सक्रिय और सुयोग्य रीति से निरकुंश शक्ति का न केवल सहज विनम्रतासहित अपितु, ऐसे कठोर समय के साथ उपयोग करती थी, जो मानवीय कार्य–व्यापारी पर विवके द्वारा आरोपित किया जा सकता है तथा इन समग्र विशेषताओं के साथ–साथ अन्य व्यक्तियों की दुर्बलता और त्रुटियों के प्रति उसका रूख अत्यंत सहिष्णु था। उसके शासन काल में इन्दौर जो एक गांव था प्रगति कर समृद्धिशाली नगर बन गया।

अब वयोवृद्ध तुकोजी ने प्रशासन कार्य संभाला और उसने होल्कर परिवार द्वारा अधिकृत क्षेत्रों पर अहिल्या बाई की भांति हो प्रशासन करने का प्रयास किया। किंतु तुकोजी का स्वास्थ्य गिरता जा रहा था और 15 अगस्त 1796 को पूना में अपने ही शिविर में उसकी मृत्यु हो गई। तुकोजी रावं की मृत्यु होल्कर वंश के लिये बहुत दुर्भाग्यवश सिद्ध हुई, क्योंकि इससे उसके चार पुत्रों के बीच गद्दी के लिये एक दीर्घकालीन संघर्ष का सूत्रपात हुआ। काशीराव और मल्हार राव उसके धर्मज पुत्र थे तथा यशवंत राव (जसवंत राव) और विठोजी उसके जारद पुत्र थे।

काशीराव मूढ और जडबुद्धि व्यक्ति था। उनका अनूज मल्हार राव भी मन्दबुद्धि, दुराचारी और अविवेकी था। मल्हार राव, विठोजी और यवन्त राव यद्यपि पराक्रमी थे किंतु किसी ऐसे व्यक्ति के न होने के कारण जी उनकी शक्तियों को किसी सत्कार्य में लगातार उन्हें नियंत्रित कर सकता, वे परिवार के लिये अमंगलकारी ही सिद्ध हुए। तुकोजी ने अपना उत्तराधिकार अहिल्याबाई के जीवनमाल में ही काशीराव को सौंप दिया था। तुकोजी राव के निवेदन पर 29 जनवरी 1796 को पेशवा द्वारा भी इसकी पुष्टि कर दी गयी थी। अतः 1795 में अहिल्याबाई के गंभीर रूप से अस्वस्थ्य होने पर काशीराव को पूना से महे वर बुलाया गया था। यद्यपि काशीराव होल्कर गद्दी का वैध उत्तराधिकारी था तथापि वह राज्य का शासन संभालने के अयोग्य था। अन्य तीनों भाईयों ने एक ही उद्देश्य से षड्यंत्र रच कर काशीराव को उखाड़ फेंकने के लिये खुला विद्रोह कर दिया। दौलत, राव सिन्धिया ने होल्कर दल के नेता मल्हार राव को गिरफ्तार करने या संघर्ष के दौरान, संभव होने पर मार डालने के उद्देश्य से तत्काल कदम उठाए। 14 सितम्बर 1697 को अरक्षित स्थिति में उस पर आक्रमण किया गया और उसके कुछ साथियों सहित उसे मार डाला गया। विठोजी और यशवंत राव किसी प्रकार बचकर पूना से भाग निकले। पूना से भाग कर यशवंत राव ने नागपुर के राजा भोंसला से शरण मांगी। वहां उसे भोंसला ने दौलत राव सिन्धिया और पेशवा के कहने पर बन्दी बना लिया। बिठोजी भाग कर कोल्हापुर पहुँचा और दस्यु बन कर पेशवा के इलाके में लूट–पाट मचाले लगा। तथपित वह पकडा गया और उसे जंजीरों से बांधकर पेशवा के समक्ष लाया गया तथा उसका दुखद अंत हुआ। उसे एक हाथी के पैरों में बांधकर महल के अहाते में घसीटा गया और नृशंसतापूर्वक मार डाला गया। बाजीराव द्वितीय अपने मंत्री बालाजी कुंजर के साथ छत पर से उसकी दुर्दशा देख कर प्रसन्न होते रहे। अंतिम संस्कार किए जाने से पूर्व उसके भाव का पूरे चौबीस घंटो तक प्रदर्शन किया गया। यह घटना 15 अप्रैल 1801 को घटित हुई। यशवंत राव ने इस कुकृत्य के लिये पेशवा को कभी क्षमा नहीं किया।

यशवन्त राव नागपुर के राजा के बन्दीगृह से भाग निकला तथा वह ताप्ती और नर्मदा के वन्य क्षेत्रों में भटकता रहा। यहाँ उसे एक विश्वस्त सेवक और सलाहकार लाला भवानी शंकर मिल गया, जिसने समस्ट संकटों में उसका साथ दिया।

यशवन्त राव ने दो चार सौ भील सैनिकों को एकत्र कर उत्तर खानदेश (सुल्तानपुर और नन्दुबीर) में छापा मारना प्रारम्भ कर दिया। यह ज्ञात होने पर कि उसका सामना करने के लिए उसका भाई काशीराव बढ़ा आ रहा है, वह नर्मदा पार कर बड़वानी होता हुआ धार की ओर भाग गया। यहाँ धार के शासक आनंद राव पंवार ने उसे कुछ काल तक आश्रय प्रदान किया। किंतु शीघ्र ही आनंदराव पंवार को सिन्धिया ने विवश किया कि वह यशवन्त राव को अपने क्षेत्र से निकाल दे, किंतु अब तक यशवंतराय भीलों, अफगानों और पिन्डारियों की एक विशाल सेना संगठित कर चुका था।

इसके पश्चात् यशवंत राव देपालपुर की ओर अग्रसर हुआ उसकी काशीराव की सेना से छीनकर अपने अधिकार में कर लिया। अपने पक्ष की दुर्बलता को अनुभव कर यशवंत राव ने यह घोषणा की कि वह होल्कर राज्य में वैध उत्तराधिकारी मल्कार राव की मृत्यु के उपरांत पुत्र खंडेराव के पक्ष का समर्थन कर रहा है। उसने अपने भाई काशीराव के विरूद्ध खुला युद्ध छेड़ दिया और मालवा में सिन्धिया के क्षेत्र को भी हथियाने लगा। होल्कर घराने के अनेक पुराने सेवक उससे आ मिले। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि अपनी विशाल सेना सहित अमीर खान, जो बाद में टोंक का नबाव हुआ और सांरगपुर के वजीर खान ने भी उसका साथ दिया।

उसने महे वर में सुरक्षित अहिल्याबाई की विशाल संपत्ति पर कब्जा किया और मालवा में सिन्धिया के विरूद्ध भयंकर युद्ध आरंभ कर दिया। इसी समय अमीर खान ने डुड्रेनेके के यशवंत राव की सहायता करने के लिए समझाया बुझाया। वह अपनी सेना सहित य ांवत राव से जा मिला और उसे उसकी सेना के पोषण के लिए रामपुरा की जागीर प्रदान की गई। 1800–01 के दौरान यशवंत राव ने अपनी अद्भूत गतिविधियों से मालवा में तहलका मचा दिया था।

दौलतराव सिंधिया यशवंत राव का सामना करने के लिये दिसम्बर 1800 में पूना के उत्तर की ओर अग्रसर हुआ किंतु नर्मदा नदी तक पहुंचने में उसे काफी समय लग गया। इसी बीच यशवंत राव ने 2 जुलाई 1801 को उज्जैन स्थिति सिंधिया सेना को बुरी तरह परस्त किया। उसने उज्जैन में लूटपाट की ओर ऐसी सारी संपत्ति अपने साथ ले गया, जो वह भाहर के निवासियों से जबर्दस्ती वसूल कर सका। इस विजय से यशवंत राव की कीर्ति में पर्याप्त वृद्धि हुई। सन् 1801 के ग्रीष्म काल में यशवंत सिंधिया के क्षेत्रों में विध्वंस मचाता रहा। युद्धक्षेत्र नर्मदा के दक्षिणी किनारे से उत्तर में इन्दौर और उज्जैन तक विस्तीर्ण हो चुका था। निरंतर चार महीनों तक घमासान युद्ध होता रहा जिसमें भीषण नर–संहार हुआ तथा संपूर्ण क्षेत्र उजाड़ हो गया।

संदर्भ ग्रंथ :–

- फरिश्ता, जिल्द चार, पृष्ठ 273.
- बेवरीज द्वारा अनूदित अकबर नामा, जिल्द दो, पृष्ठ 136.
- बी.डे. द्वारा अनूदित, तबकात ए अकबरी, जिल्द दो, पृष्ठ 252.
- डब्ल्यू.एच.ओ. द्वारा अनूदित, बदायुनी, मुन्तखाब उत् तवारीख, जिल्द दो, पृष्ठ 42–43.
- दि केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया, जिल्द चार, पृष्ठ 80.
- एच.एन. सिन्हा, राइज ऑफ पेशवाज, पृष्ठ 382

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

महिलाओं के विरूद्ध होने वाले अपराधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

सुधीर शर्मा (शोधार्थी)
डॉ. आशीष श्रीवास्तव (निर्देशक)
प्राध्यापक विधि एम.बी. खालसा महाविद्यालय, इंदौर म.प्र.

महिलाओं के प्रति हिसां एवं अपराध कोई आज के युग की ही घटना नहीं है वरन् प्राचीन भारत में भी इसके अनेक उदाहरण मिलते है। महाभारत काल में युधिश्ठिर ने अपनी पत्नी द्रौपदी को जुए में दांव पर लगा दिया था और दुर्योधन ने भरी सभा में उसका चीर–हरण कर अपमानित किया था। रामायण काल में रावण ने सीता का अपहरण किया था। विधवाओं को भारत में अनेक अधिकारों से वंचित किया जाता रहा तथा नाना प्रकार के कष्ट दिए जाते रहे हैं। दहेज को लेकर नारी को जला देना या हत्या कर देना आज के युग की सबसे बड़ी त्रासदी है। सतीत्व के नाम पर महिलाओं को इसी देश में जिन्दा जलाया जाता रहा है। हम आए दिन पत्र–पत्रिकाओं में बलात्कार की घटनाएं पढ़ते रहते हैं जिनमें से कुछ में तो पुलिस और प्रशासन भी शामिल होता है। इस प्रकार से महिलाओं का अपराधिक शोषण, उनके साथ बलात्कार, उन्हें बहला फुसला कर भगा ले जाना एवं वैश्यावृत्ति के लिए उन्हें बेच देना, उनके साथ मारपीट एवं गाली–गलौच करना, उन्हें जला देना, उनकी हत्या कर देना आदि महिला अपराध के कुछ प्रमुख उदाहरण हैं।

वर्तमान में समाजशास्त्र में महिलाओं के बारे में अध्ययन में रूचि का विकास हुआ है। रैडिकल समाजशास्त्री जो समाज के दलित एवं उपेक्षित वर्ग के अध्ययन में रूचि रखते हैं, वे भी महिलाओं के अध्ययन के प्रति काफी संवेदनशील है। समाज–सुधारकों, राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में स्थापित महिला अध्ययन प्रकोष्ठों, मनोरोग आदि में रूचि दर्शायी है और महिलाओं से सम्बन्धित अनेक आयामों का अध्ययन किया जा रहा है। वर्तमान में कुछ लोग अपराध में महिलाओं की भूमिका एवं महिलाओं के प्रति हिंसा एवं अपराध विषयों में भी रूचि लेने लगे है। महिलाओं के प्रति हिंसा से तात्पर्य है महिलाओं के निकट रिश्तेदारों; जैसे माता–पिता, भाई–बहिन, सास–ससुर, देवर, ननंद, भाभी या परिवार के किसी भी सदस्य अथवा अन्य व्यक्तियों द्वारा किया जाने वाला हिंसात्मक व्यवहार जो नारी को शारीरिक मानसिक आघात पहुँचाता है।

भारतीय समाज पुरूष प्रधान है तथा यहां लड़की की तुलना में लड़के को अधिक महत्व दिया जाता है। धार्मिक दृष्टि से भी पुत्र प्राप्ति आवश्यक माना गया है क्योंकि वही श्राद्ध एवं तर्पण द्वारा मृत माता–पिता एवं पूर्वजों को स्वर्ग पहुंचाता है। उत्तराधिकार की दृष्टि से भी पुत्र का होना आवश्यक है, किन्तु कई बार किसी परिवार में लड़कियों की संख्या अधिक होने पर लड़की के पैदा होते ही मार दिया जाता है जो नारी हत्या का ही एक रूप है। नारी हत्या हमें प्रकट और अप्रकट कई रूपों में देखने को मिलती है। माता के गर्भ में ही नारी शिशु को मार देना या जन्म के बाद उसे मार देना या दहेज के लोभ में बहू को जला देना या पीट–पीट कर मार देना, या ऐसी परिस्थितियां पैदा कर देना जिनमें नारी स्वयं आत्महत्या करने के लिए विवश हो जाए, जहर देकर मार देना, गलाघोंट देना, आदि सभी नारी हत्या के प्रत्यक्ष रूप है। नारी हत्या का अप्रत्यक्ष रूप वह है जिसमें नारी शिशु के पालन–पोषण एवं चिकित्सा की ओर उचित ध्यान नहीं देने से वे मौत की शिकार हो जाती है।

वैज्ञानिक प्रगति ने मानव को हजारों सुख–सुविधाआ के साधन जुटाएं हैं, आज हम माता के गर्भ की जांच जिसे 'एमनियोसेंटेसिस' कहा जाता है, के द्वारा भ्रूण की जांच कर यह पता लगा सकते हैं कि उत्पन्न होने वाला शिशु लड़को है या लड़की। इस वैज्ञानिक ज्ञान का लोगों ने दुरूपयोग किया है और वह यदि भ्रूण लड़की का है तो उसका गर्भपात करवा देते है जो भ्रूण हत्या है। लड़के की चाह में लड़की की हत्या मानवता के माथे पर बहुत बड़ा कलंक है। आज के युग में तो लड़के व लड़कियां सभी समान है। वास्तव में जो स्थितियां देखने व सुनने में आती हैं उनके अनुरूप तो लड़कों की तुलना में लड़कियां ही माता–पिता की अधिक सेवा करती है और विश्वविद्यालयों एवं प्रतियोगी परीक्षाओं के परिणाम यह बताते है कि योग्यता सूची में लड़कियों को दक्षता से कार्य करते हुए देखा जा सकता है। अतः लोगों के मन से यह भ्रम निकालना होगा कि पुत्र प्राप्ति आवश्यक है और उसकी चाह में किसी भी रूप में नारी हत्या अमानवीय है एवं नैतिकता व कानून के विरूद्ध अपराध

है। नारी हत्या में पुरूष की अपेक्षा स्वयं नारी का योगदान भी कम नहीं होता है। वास्तव में देखा जाए तो नारी ही नारी की दुश्मन है। अतः सर्वप्रथम तो नारी को ही नारी के विरूद्ध होने वाले अपराधों को रोकने के लिए उठ खड़ा होना पड़ेगा।

नारी के विरूद्ध अपराधों में छेड़छाड़ भी एक बढ़ती हुई प्रवृत्ति है। महाविद्यालयों के परिसर में, रेलो एवं बसो में, बाजारों में मनचले एवं उद्दण्ड किस्म के लड़कों द्वारा लड़कियों को भद्दे और गंदे इशारे किए जाते है, उन पर फब्तियां कसी जाती हैं, उन्हें अपशब्द कहे जाते हैं, उनके साथ गाली–गलौच की जाती है, उनको छूने का प्रयत्न किया जाता है, उन्हें नोंचने नाखुन चुभोने जैसी गन्दी हरकतें की जाती है। कभी–कभी ऐसे लोगों की सार्वजनिक रूप से जनता द्वारा पिटाई भी कर दी जाती है या पुलिस की गिरफ्त में आ जाने पर अच्छी खासी मरम्मत भी हो जाती है। इस प्रकार की गुण्डागर्दी बड़े शहरों में और विशेष रूप से उत्तरी भारत में अधिक पायी जाती है। दिल्ली, कानपुर, आगरा, बनारस, और अन्य बड़े शहरों में छेड़छाड़ की घटनाएं ज्यादा होती है। ऐसी घटनाओं के विरोध में दिल्ली एवं अन्य नगरों में नारी संगठनों द्वारा प्रदर्शन भी किए गए हैं, तथा गुण्डागर्दी के खिलाफ कानूनी लम्बी और थका देने वाली महंगी प्रक्रिया के कारण सज्जन व्यक्ति इस पचड़े में नहीं पड़ना चाहते और इससे गुण्डों के हौंसले और बुलन्द होते है। नारी के प्रति छेड़छाड़ की घटनाओं को सिनेमा एवं केम्पस जैसे सीरियलों से बढ़ावा ही मिला है क्योंकि इनमें प्रदर्शित अच्छाई से नहीं वरन् बुराई से ही लोग अधिक प्रभावित होते है। ऐसी घटनाओं से बचने के लिए स्वयं लड़कियों को ही अपने आपको समर्थ बनाना होगा, जुड़ो–कराटे सीख कर आत्म रक्षा के उपाय करने होंगे, समूह बनाकर ऐसे गुण्डों से उन्हें निपटना होगा। सब कुछ सरकार, पुलिस और कानून पर ही नहीं छोड़ा जा सकता।

नारी के विरूद्ध उपर्युक्त अपराधों एवं बढ़ती हिंसा के अतिरिक्त भद्दे और भौंडे विज्ञापनों में नारी के नग्न एवं अर्द्ध–नग्न चित्रों के द्वारा वस्तुओं को बेचने का प्रयास भी नारी की मजबूरी का लाभ उठाना ही है। नाचघरों एवं होटलों में उनसे कैबरे नृत्य करवाना भी अप्रत्यक्ष रूप से नारी देह का शोषण ही है, किन्तु इन सब के लिए मात्र पुरूष को ही उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, स्त्री भी कम जिम्मेदार नहीं है। अतः सब से पहला प्रयास तो स्वयं नारियों को ही अपने आप को संयत करके व नैतिक बना कर करना होगा, अन्य उपाय तो बाद में आते है।

महिलाओं के साथ होने वाले अपराधिक कृत्यों में बलात्कार, भगा ले जाना, अपहरण, करना, हत्या करना, दहेज हत्याएं करना, पत्नी को पीटना, विधवाओं के प्रति हिंसा, वेश्यावृत्ति नारी, हत्या तथा भ्रूण हत्या, छेड़छाड़ आदि घटनाएं प्रमुख है।

पुरूषों द्वारा महिलाओं और युवतियों के साथ बलात्कार, उत्पीड़न, छेड़छाड़ और दुर्व्यवहार महिलाओं की स्वतंत्रता सीमित करने का कार्य करता है और इस धारणा को कायम रखता है कि महिलाओं को जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में पुरूषों के संरक्षण की आवश्यकता है। देश के कई भागों में शिक्षण संस्थाओं में बलात्कार/सामूहिक बलात्कार तथा युवतियों को कुरूप बनाने के लिए तेजाब शरीर पर डालना जैसी घटनायें भी होती है। कार्य स्थल पर महिला अपराध और भी निराशाजनक है क्योंकि यहाँ पर महिलाएँ ऐसे दुर्व्यवहारों के प्रति रिपोर्ट करने या विरोध करने से कतराती हैं, कारण, उन्हें रोजगार से वंचित होने और सामाजिक निन्दा का भय रहता है।

बलात्कार महिला की इच्छा और सहमति के बिना, जोर जबरदस्ती से की जाने वाली संभोग क्रिया है। यह पुरूष और महिला के बीच शक्ति प्रदर्शन का प्रमाण है। बलात्कार द्वारा एक व्यक्ति के रूप में महिला के व्यक्तित्व का ह्रास होता है और उसे केवल वस्तु मान लिया जाता है। भारत में महिलाओं पर अत्याचार और अपराध होते रहे है। दहेज हत्या के मुकाबले बलात्कार के मामले में महिलाओं पर अत्याचार और अपराध होते रहे हैं। दहेज हत्या के मुकाबले बलात्कार के मामले राजस्थान में ज्यादा रहे है। दहेज हत्या में राजस्थान का क्रम पाँचवा तथा बलात्कार में चौथा है। यह एक अत्यन्त ही चिंताजनक स्थिति है। बलात्कार की घटनाओं में भी तेजी से वृद्धि हो रही है। बलात्कार फिर चाहे नन्हीं बालिका का हो, युवती का अथवा किसी प्रौढ़ महिला का। बलात्कार करने वाला अपरिचित हो, परिचित दोस्त हो अथवा घरेलू परिजन लेकिन प्रत्येक संदर्भ, महिला एक घंटे में देश में कहीं न कहीं एक बलात्कार की घटना घटित होती है और सबसे अधिक भयानक और निराशाजनक स्थिति तो यह है कि इसकी संख्या निरन्तर बढ़ रही है। यहाँ तक की 2–3 वर्ष की अबोध बालिका को भी नहीं बख्शा जा रहा है।

अपराध ब्यूरों की रिपोर्ट के अनुसार 1994 से 1996 के बीच बच्चियों के साथ बलात्कार की घटनाओं में 17 फीसदी वृद्धि रिकॉर्ड की गई, और ये सारी बच्चियां दस वर्ष से कम की है। 1994 में बच्चियों के साथ बलात्कार की 3986 घटनाएं दर्ज हुई जिसकी संख्या 1996 में बढ़कर 4063 हो गई। यदि वास्तविकता का अनुमान लगाया जाए तो रिपोर्ट कराने की परेशानी और उसके बाद की स्थिति के मद्देनजर बलात्कार की शिकार महिलाओं की यह संख्या आधे से भी बहुत कम है।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 366 के अनुसार भगा ले जाने का तात्पर्य है किसी महिला का जबरदस्ती, कपटपूर्वक या धोखाधड़ी करके उसे बहला फुसला कर ले जाना तथा उसके साथ अवैध यौन संबंध स्थापित करना या उसे उसकी इच्छा के विरूद्ध विवाह के लिए बाध्य करना जबकि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 361 के अनुसार अपहरण का तात्पर्य है एक नाबालिग (18 वर्ष से कम आयु की लड़की व 16 वर्ष से कम आयु का लड़का) को उसके माता–पिता या वैधानिक संरक्षक की अनुमति के बिना ले जाना अपहरण में आता है। जिसका अपहरण किया जाता है, उसकी सहमति का कोई महत्व नहीं होता जबकि भगा ले जाने में, जिसे भगाया जाता है उसकी सहमति अपराधी को क्षमा कर देती है।

भारत में दहेज एक गंभीर समस्या बनी हुई हैं। दहेज के अभाव में भारत में हजारों स्त्रियों को प्रति वर्श जलाया जाता है, उन्हें सास–ससुर, देवर–जेठ, पति एवं ससुराल पक्ष वालों के द्वारा कई प्रकार की यातनाएं दी जाती है। उन्हें भूखा रखा जाता है, और यहां तक कि आत्महत्या करने एवं घर छोड़कर चले जाने तक के लिए मजबूर किया जाता है जिससे कि पति दूसरी शादी कर दहेज जुटा सके। यद्यपि 1961 में भारत सरकार ने 'दहेज निरोधक अधिनियम' (Dowry Prohibition Act) बना दिया और इस अधिनियम के अंतर्गत दहेज लेना व देना दोनों ही अपराध माने गये हैं, किन्तु वास्तविक स्थिति यह है कि दहेज संबंधी मुकदमों की संख्या नगण्य है। देश में प्रतिवर्श लगभग पांच हजार हत्याएं दहेज के कारण होती है। भारत में प्रतिदिन 33 तथा प्रतिवर्श 5,000 हत्याएं दहेज से संबंधित होती हैं, अतः ससुराल वाले हत्या संबंधी प्रमाण मिटा देते है और उसे आत्महत्या या हादसे का रूप दे देते है। साक्षी के अभाव में अपराधी अक्सर बच जाते है।

भारत में पत्नी के रूप में नारी की प्रतिश्ठा रही है और उसे यहां गृह–लक्ष्मी की संज्ञा से संबोधित किया गया है। पत्नी को पुरूश की अर्द्धांगिनी, सहधर्मचारिणी, धर्मपत्नी भी कहा जाता है, यहां पत्नी के अभाव में पति द्वारा किए गए धार्मिक कार्यो को निश्फल माना गया है, किन्तु यह तस्वीर का एक पहलू है। पत्नी के साथ दुर्व्यवहार करने एवं उसे मारने–पीटने की घटनाएं भी कई बार सुनने में आती है। विवाह के बाद पति से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपनी पत्नी का भरण–पोषण करेगा, उसे प्रेम करेगा और संरक्षण प्रदान करेगा। भारत में पति के लिए 'भर्ता' शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ है भरण–पोशण करने वाला। सामान्यतः यह माना जाता है कि घर नारी के लिए सुरक्षा एवं प्रसन्नता की दृश्टि से स्वर्ग है, किन्तु अनेक स्त्रियों के प्रति घर में हिंसा का व्यवहार किया जाता है। उन्हें लातों, घूसों, चांटो व लकड़ियों से मारा जाता है, हड्डियां तक तोड़ दी जाती हैं। पहले अध्ययन में पाया कि पतियों द्वारा अपनी पत्नियों को चाकुओं से गोदा गया। फर्नीचर फेंक कर मारा गया, सीढ़ियों से गिराया गया और कुछ स्त्रियों के तो पैरों में कीलें ठोकी गई।

दहेज प्रथा का अस्तित्व, प्रचलन तथा विस्तार बहुत भयानक है शहरों, छोटे कस्बों और महानगरों में बढ़ रही दहेज हत्या की घटनाओं ने महिला समूहों का ध्यान आकृष्ट किया और 1980 के दशक के शुरू के वर्षो में दहेज अधिनियम में संशोधन की माँग की गई। दहेज प्रथा का एक परिणाम यह भी उभर कर आया है कि विवाह के समय दहेज के भावी भुगतान से मुक्ति पाने के लिये अमीनों सैटोसिस (लिंग पहचान परीक्षण) की सहायता से उत्तरी भारत और पश्चिमी भारत में जानबुझ कर कन्या भ्रूण हत्या की गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- सैय्यद फरजन्द अली, रिजवी मानवाधिकार कल और आज
- श्रीवास्तव, अशोक, ग्लोबल ह्यूमन राइट्स, इण्डियन पब्लिशर्स, नई दिल्ली (2001)
- शर्मा, दिवाकर महिलाओं के प्रति अपराध, पुलिस अनुसंधान विकास ब्यूरो नई दिल्ली, 2009
- शुक्ला डी.पी. व उशा, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय नारी की समस्याओं से संभावनाओं तक, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली (1999)

- शरतमनि के ''वूमेन वर्क एंड सोसायटी'' इंडियन स्टेटिकल इंस्टिट्यूट, कोलकाता, 1985
- शर्मा, दिवाकर महिलाओं के प्रति अपराध, पुलिस अनुसंधान विकास ब्यूरों नई दिल्ली
- समाजशास्त्र – डॉ. डी.एस. बघेल
- स्त्री–पुरूष तुलना – ताराबाई शिंदे
- ठाकुर डॉ. आद्यदत्त, देव वेदो में भारतीय नारी
- तेजस्कर पाण्डे, ओजस्कर पाण्डे–समाज कार्य (महिलाओं के संदर्भ में)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

बाल श्रमिकों में स्वास्थ्य की जागरूकता के संदर्भ में एक अध्ययन

कु. गीता परतेती (शोधार्थी)
डॉ. विश्वास चौहान (निर्देशक)
सहायक प्राध्यापक शासकीय राज्य स्तरीय विधि महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

स्वास्थ्य मानव के दैहिक एवं मानसिक दोनों का संतुलित रूप है। राष्ट्र का उत्थान एवं पतन जनता के स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। पौष्टिक तत्त्वों की न्यूनता से मानव शरीर रोगग्रस्त हो जाता है जिससे उसकी कार्यक्षमता घटने लगती है। शारीरिक कार्य करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है जो हम भोज्य पदार्थ से प्राप्त कर सकते हैं। आवश्यकतानुसार यदि किसी व्यक्ति को भोज्य प्रदार्थों से कैलोरी नहीं मिल पाती है तो उसका स्वास्थ्य दिनों–दिन गिरता जाता है, जिससे वह कमजोर हो जाता है, बराबर थकावट महसूस करता है तथा उसका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में शारीरिक कार्य के लिए उसके शरीर में एकत्रित वसा का उपयोग ऊर्जा प्रदान करने के लिए होने लगता है। ऊर्जा शरीर के कार्य के लिए वसायुक्त ऊतकों को व्यय होने लगती है और फिर मांसपेशियों एवं यकृत में संचित ऊर्जा भी धीरे–धीरे व्यय होने लगती है। यदि यही स्थिति लगातार बनी रही तो व्यक्ति का शरीर–भार कम होने लगता है एवं कुछ दिनों बाद शरीर देखने में कंकाल के रूप में दिखाई देने लगता है जिससे वह बुखार, रक्तअल्पता तथा अन्य संक्रामक रोगों से पीड़ित हो जाता है।

किशोरावस्था में तेज शारीरिक वृद्धि के कारण अधिक कैलोरी की आवश्यकता होती है। ऐसी अवस्था में आधारीय चयापचय दर (बी.एम.आर.) भी बढ़ जाता है जिससे अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती हैद्य इस अवस्था में आहार में ऊर्जा की कमी होने से प्रोटीन ऊर्जा देने का काम करने लगता है, फलस्वरूप शारीरिक वृद्धि में बाधा होने लगती है जिसका परिणाम उसे जीवन भर भुगतना पड़ता है। इससे शारीरिक विकास रूक जाता है, वह सुस्त हो जाता है, शीघ्र थक जाता है एवं विभिन्न रोगों से ग्रसित रहने लगता है। एक किशोर एवं किशोरी द्वारा सन्तुलित एवं पौष्टिक आहार ग्रहण करने से उसकी शारीरिक ऊर्जा के साथ–साथ अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती रहती है। पर्याप्त मात्रा में आहार ग्रहण करने से शरीर की आवश्यकतानुसार कंलोरी की पूर्ति होती रहती है। यदि कोई किशोर एवं किशोरी भोजन कम मात्रा में ग्रहण करती है तो उसके शरीर में ऊर्जा के साथ–साथ अन्य भोज्य तत्वों की कमी हो जाती है। किशोरावस्था में कैलोरी की कमी का भयंकर परिणाम होता हैद्य इससे वह पोषण न्यूनता एवं कुपोषण का शिकार हो जाता है और उसका शारीरिक विकास रूक जाता है।

विकासशील राष्ट्रों की कतार छोड़कर विकसित राष्ट्रों के समूह में शामिल होने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील भारत की जनसंख्या 2011 की जनगणना रिपोर्ट के अनुसार एक अरब के 21 करोड़ के आँकड़े को पार करती हुई इससे थोड़ा ऊपर पहुँच गयी है। आहार सर्वेक्षणों के अनुसार हमारे देश की अधिकांश जनता का भोजन पोषक तत्त्वों की दृष्टि से अत्यन्त अपर्याप्त है। अपर्याप्तता गुणात्मक तथा परिणामात्मक, दोनों दृष्टियों से है। गरीब जनता की कैलोरी मांग तक की पूर्ति नहीं हो पाती। अतः कमजोर आर्थिक स्थिति वाले निम्न तथा मध्यम वर्गों में कुपोषण की समस्या अत्यन्त विकराल रूप लेकर खड़ी है इसका सबसे अधिक प्रभाव छोटे बच्चों, गर्भवती व दूध पिलाती माताओं पर पड़ता है। एक सर्वेक्षण के अनुसार कुपोषण के कारण 47 प्रतिशत बच्चों की उम्र के अनुरूप लम्बाई और वजन नहीं बढ़ पा रहा है। 6 से 49 साल की 50 प्रतिशत महिलायें रक्ताल्पता की शिकार हैं। अधिकारिक आँकड़ों के अनुसार स्कूल जाने वाला देश का हर दूसरा बच्चा या तो सामान्य या अतिकुपोषण का शिकार है। आज का बच्चा कल देश का भविष्य होता है। अतः स्वास्थ्य नागरिक पैदा करना देश तथा समाज के प्रति हम सभी का मूल कर्तव्य बनता है।

प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा होती है कि उसका पोषण उचित एवं सन्तुलित हो। परन्तु अधिकतर ऐसा नहीं हो पाता, किसी न किसी रूप में आहार में कुछ पौष्टिक तत्त्वों की कमी रह जाती है, जिसका प्रभाव शरीर पर पड़ता है। जब व्यक्ति को उसकी शारीरिक आवश्यकता के अनुकूल उपयुक्त मात्रा में सभी भोज्य तत्त्व नहीं मिलते या आवश्यकता से अधिक मिलते हैं, जिनके कारण शरीर की वृद्धि एवं विकास तथा उसकी क्रियाशीलता पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है तो यह कुपोषण कहलाता है। कभी–कभी ऐसा भी होता है कि गुण और मात्रा की वृद्धि से भी भोज्य तत्त्व शारीरिक आवश्यकता के अनुसार लिए जाते हैं, परन्तु वास्तव में

कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, जो पर्याप्त एवं उपर्युक्त भोज्य पदार्थों से युक्त आहार का उपयोग करने पर भी उसकी पौष्टिकता के लाभ से उपभोक्ता को वंचित रखती है। अर्थात् भोज्य पदार्थ जब गुण एवं परिणाम में अपर्याप्त लिये जाते हैं जिससे भोजन द्वारा शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पाती तो वह कुपोषण की स्थिति कहलाती है।

इस प्रकार कुपोषण वह स्थिति होती है जब व्यक्ति द्वारा ग्रहण किये जाने वाले आहार भूख तो शान्त करता है परन्तु उस आहार से मिलने वाले पौष्टिक तत्त्व शरीर की आवश्यकता के अनुरूप नहीं होते जिससे जीवन सत्त्व तथा खनिज लवणों की कमी के कारण शरीर निर्माण कार्य तथा रोग–रोधन क्षमता में कमी आ जाती है। कुपोषण में भोजन के समस्त पौष्टिक तत्त्वों में से कुछ पौष्टिक तत्त्वों की मात्रा आवश्यकता से अधिक तो कुछ शरीर की आवश्यकता से कम होती है। पौष्टिक तत्त्वों की अधिकता या कमी दोनों हमारे शरीर के लिए हानिकारक है।

भोजन में पौष्टिक तत्त्वों की मात्रा सही होने पर भी कई बार कुपोषण की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कारण कि भोजन द्वारा पौष्टिक तत्त्व सही मात्रा में व्यक्ति के शरीर के अन्दर तो पहुँच जाता है परन्तु शरीर में उसका अभिशोषण, चयपचय तथा संग्रह की प्रक्रिया ठीक न होने के कारण पौष्टिक तत्त्वों का उपयोग सही नहीं हो पाता है और वह निरुपयोगी पदार्थों के साथ शरीर से बाहर निकल जाता है। इसके अतिरिक्त भी कुछ और कारण है जिससे भोजन में पौष्टिक तत्त्व होने पर भी शरीर में उसकी कमी रहती है। जैसे–भोज्य पदार्थों की अशुद्धियाँ एवं मिलावट होने के कारण शारीरिक थकावट व कमजोरी के कारण, समय पर व्यायाम न करने के कारण, नींद पूरा न हो पाने के कारण प्रकृति प्रदत्त स्वच्छ वायु एवं प्रकाश न मिलने के कारण भी कुपोषण का जन्म होता है।

कुपोषण के प्रकोप का अध्ययन दिल्ली के एजूकेशनल प्लानिंग ग्रुप ने किया तथा यह पाया कि कुपोषण व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, व्यावहारिक एवं भावनात्मक संतुलन के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता है तथा एक कृपोषित व्यक्ति की लम्बाई एवं भार, वजन सामान्य व्यक्ति की तुलना में कम होता है। ऐसे व्यक्तियों में संक्रामक रोगों के प्रति रोग प्रतिरोधक क्षमता अत्यन्त कम तथा ग्रसित होने की संभावना अधिक होती है। इसके अलावा उन्होंने यह भी पाया कि कुपोषण का प्रभाव सीखने की क्षमता, स्मरण शक्ति, बुद्धि एवं वाक शक्ति तथा संवेगात्मक संतुलन पर भी पड़ता है। व्यक्ति को जब उचित मात्रा में उचित प्रकार का आहार नहीं मिलता है तो कई आवश्यक पोषक तत्त्व, उचित मात्रा में शरीर को नहीं मिल द पाते है और कई अभावजनित रोग व विषमताएँ पैदा हो जाती है। सामान्यतः प्रोटीन एनर्जी मालन्यूट्रीशन, विटामिन ए, बी, आयरन एवं अन्य विटामिनों के अभाव में कई रोग हो जाते हैं। प्रोटीन एनर्जी मालन्यूट्रीशन के अन्तर्गत क्वाशियोरकर रोग हो जाता है। इस रोग में शरीर वृद्धि अवरूद्ध हो जाती है, पैर व टांगों में सूजन आ जाती है, पेशियों का क्षय हो जाता है। बाल एवं त्वचा का रंग बदल जाता है, त्वचा झुररीदार हो जाती है। इसके अतिरिक्त जब प्रोटीन और ऊर्जा दोनों का ही शरीर में अभाव हो जाता है तो मरासमस रोग हो जाता है। इसमें भी शारीरिक वृद्धि रूक जाती है तथा मांसपेशियों का पूर्ण क्षय हो जाता है। विटामिन ए डिफीशियन्सी में नेत्र दृष्टि प्रभावित होती है। आयरन की कमी से एनीमिया हो जाता है। इससे विशेषकर महिलाएँ ही प्रभावित होती हैं। विटामिन बी के अभाव में जिह्वा और होठों पर घाव बन जाते हैं, यह सब कुपोषण के कारण होता है। राइबोफ्लेविन के अभाव में त्वचा में दरारें पड़ जाती हैं। नायासिन के अभाव में पेलेग्ता रोग हो जाता है। यह ज्वार खाने वाले व्यक्ति में ज्यादा होता है। आयोडीन के अभाव में घेघा रोग हो जाता है। इसी तरह पोषक तत्त्वों के अभाव में व्यक्ति कुपोषण का शिकार हो जाता है और तदजनित विषमताओं से ग्रसित हो जाता है। प्रायः यह देखा गया है कि दूसरे देशों की अपेक्षा भारत की जनसंख्या बहुत अधिक कृपोषित है तथा अपोषित भी है। इसी से यहाँ मृत्यु–दर अधिक है, यहाँ के अधिकांश लोग किसी न किसी रोग से पीड़ित हैं फलतः उनकी कार्यक्षमता भी कम होती है तथा स्वस्थ प्रसन्नचित्त, लम्बी–चौड़ी स्वस्थ कद–काठी वाले स्फूर्तिवान विरले ही दिखाई देते हैं।

इस प्रकार स्वास्थ्य का प्रभाव शारीरिक विकास पर ही नहीं अपितु मानसिक विकास, बौद्धिक क्षमता, सीखने की शक्ति, स्मृति आदि पर भी पड़ता है। पोषण सम्बन्धी सर्वेक्षणों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि कुपोषण के प्रकोप के कारण गर्भवती स्त्रियों, शिशुओं, बच्चों तथा परिचर्या करने वाली माताओं में पोषण सम्बन्धी न्यूनतमजन्य रोग अधिक पाये जाते हैं। इनमें से कुछ में कुपोषण के लक्षण प्रकट नहीं होते। परन्तु उनमें उत्तम स्वास्थ्य की विशेषताएँ नहीं पायी जाती और आसानी से रोगों के पकड़ में आ जाते हैं इसलिए हमारे देश में अधिकांश जनसंख्या का स्वास्थ्य कपोषण के कारण अच्छा नहीं रहता।

कुपोषण की स्थिति अनेक परिस्थितियों में उत्पन्न होती है, इसका कोई एक कारण नहीं होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने शरीर में रक्त की कमी, पौष्टिक मात्रा की कमी, पौष्टिक तत्त्वों को ग्रहण करने में असमर्थता और रक्त निर्माणक तत्त्वों को ग्रहण नहीं कर पाने को कुपोषण का कारण पाया हैं। भारत एक कृषि प्रधान देश है। इसके बावजूद यहाँ खाद्य प्रदार्थों का निरन्तर अभाव–सा बना रहता है। यहाँ की सरकार को अन्य देशों से अनाज, कर्ज या अनुदान के रूप में लेना पड़ता है ताकि खाद्यान्न की पूर्ति की जा सके। इसके बावजूद जो भोजन मिलता है वह पौष्टिक तत्त्वों से रहित रहता है जबकि भोजन पोषण का माध्यम होता है। यदि शरीर की आवश्यकता से कम भोजन ग्रहण किया जाता है, तो उससे प्राप्त होने वाले पोषक तत्त्व की न्यूनता होती है जिसके परिणामस्वरूप कुपोषण की स्थिति उत्पन्न होती है।

भारत में जनसंख्या का अधिकांश भाग गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन करता है तथा गरीबी के कारण उनकी क्रय क्षमता भी कम होती है, जो कुपोषण का एक मुख्य कारण है। निम्न आय वर्ग के लोग भोजन तो करते हैं किन्तु सिफ पेट भरने के लिए। इनके भोजन में आवश्यक मात्रा में पौष्टिक तत्त्व नहीं प्राप्त हो पाते हैं। क्योंकि बढ़ती हुईं महंगाई, कम आमदनी तथा निर्धनता के कारण वे उच्च पौष्टिक मूल्यों वाले भोज्य पदार्थों को खरीदने में असमर्थ होते हैं तथा उनके भोजन में प्रायः पौष्टिक तत्त्वों की कमी के कारण धीरे–धीरे वो कुपोषण के शिकार हो जाते हैं।

भारत एवं अन्य अविकसित एवं विकासशील देशों में स्वास्थ्य जागरूकता का प्रमुख कारण अशिक्षा एवं पोषण के ज्ञान का अभाव है। अधिकांश जनता भोज्य रू पदार्थ उपलब्ध होते हुए भी अज्ञानतावश कुपोषण का शिकार हो जाती है। क्योंकि आम व्यक्ति की यह धारणा होती है कि पौष्टिक आहार मंहगे साधनों द्वारा ही प्राप्त किये जा सकते हैं जबकि ऐसे भी कुछ भोज्य पदार्थ हैं जो पौष्टिकता से पूर्ण और सस्ते भी हैं। आम व्यक्ति पोषण के ज्ञान की कमी के कारण भोजन बनाने के सही तरीकों से भी अनभिज्ञ होते हैं। उदाहरणार्थ––चावल पकाते समय उसका पानी फेंक देना, सब्जियों के मोटे छिलके उतारना, यह भोजन बनाने के गलत तरीके हैं जो भोजन की पौष्टिकता को कम कर देते हैं।

संदर्भ ग्रंथ :–

- रेखा टण्डन, विवेक दिग्दर्शिका, विवेक प्रकाश पुस्तक प्रकाशन एण्ड विक्रेता, आगरा, पृ. 64
- डॉ. प्रमिला वर्मा एवं कान्ति पाण्डेय, आहार एवं पोषण विज्ञान, पृ. 84
- डॉ. कान्ति पाण्डेय, आहार एवं पोषण विज्ञान, पृ. 5
- डॉ जी. पी. शैरी–पोषण एवं विज्ञान, पृ. 8
- बी. डी. हरपालानी, आहार विज्ञान एवं उपचारात्मक पोषण, पृ. 9
- बोसर्ड जेम्स एच. एस. एल. : दी सोशियोलाजी आफ चाइल्ड डेवलपमेण्ट, पृ. 86
- सी. ए. मार्शल : एजूकेशन, मैन पावर एण्ड इकोनामिक ग्रोथ, पृ. 95

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

उज्जैन जिले का सामान्य परिचय ऐतिहासिक, धार्मिक अध्ययन

परितरिका चाहान (शोधार्थी)
डॉ. दिनेश कुमार सिंगल (निर्देशक)
प्राध्यापक, वाणिज्य शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

उज्जयिनी के ऐतिहासिकता का प्रमाण ई. सन् 600 वर्ष पूर्व मिलता है। तत्कालीन समय में भारत में जो सोलह जनपद थे उनमें अवंति जनपद भी एक था। अवंति उत्तर एवं दक्षिण इन दो भागों में विभक्त होकर उत्तरी भाग की राजधानी उज्जैन व दक्षिण भाग की राजधानी महिष्मति थी। उस समय चंद्रप्रधांत नामक राजा राज करता था। मौर्य साम्राज्य के उदय होने पर मगध सम्राट बिन्दुसार की मृत्योपरान्त अशोक ने उज्जयिनी की बागडोर अपने हाथों में ली। तथा उज्जयिनी का विकास किया।

सातवीं शताब्दी में उज्जैन कन्नौद के हर्षवर्धन साम्राज्य में विलीन हो गया सन् 648 ई. में हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात् नवीं शताब्दी तक उज्जैन परमारों के आधिपत्य में आया जो 11वीं शताब्दी तक कायम रहा इसके पश्चात् उज्जैन चौहान और तोमर राजपूतों के अधिकारों में आ गया।

सन् 1235 ई. में दिल्ली का शमशुद्दीन इल्तमिश विदिशा विजय करके उज्जैन की ओर आया यहां उस क्रूर शासक ने उज्जैन को न केवल बुरी तरह लुटा अपितु में उज्जैन सिंधिया वंश के अधिकार में आया उनका सन् 1880 तक एक छत्र राज्य रहा जिसमें उज्जैन का सर्वागीण विकास होता रहा। राणोजी सिंधिया ने महाकालेश्वर मंदिर का जीर्णोद्धार कराया।

इतिहास काल के पूर्व महाभारत में विद और अनुविंद उज्जयिनी के शासक बताये गये है, जो कुरूक्षेत्र के युद्ध में कौरवों की ओर से लड़े थे। बौद्धकाल में यह एक विस्तृत राज्य के रूप में था, जिसमें उज्जयिनी एक बड़ी व्यापारिक मण्डी के रूप में विकसित था।

महान् सम्राट चंद्रगुप्त द्वितीय (380ई.–412ई.) को ही ''विक्रमादित्य'' कहा गया हैं चंद्रगुप्त द्वितीय के शासनकाल में उसकी प्रथम राजधानी पाटलिपुत्र और द्वितीय राजधानी उज्जयिनी थी, ये दोनो ही नगर गुप्त कालीन शिक्षा के प्रसिद्ध केन्द्र थे।

उज्जैन की भौगोलिक स्थिति के कारण इसका विशिश्ट महत्व प्राचीनकाल से ही रहा है। यह 75^0 47 पूर्व देशांतर व 23^0 11 उत्तर अक्षांश पर शिप्रा नदी के दाहिने तट पर समुद्र सतह से 527 फीट की ऊँचाई पर मालवा के पठार पर स्थित है। प्राचीन अवन्ति जनपद की राजधानी ''उज्जयिनी'' अथवा ''उज्जैन'' मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिमवर्ती मालवा में शिप्रा नदी के पूर्वी तट पर स्थित धार्मिक एवं सांस्कृतिक नगरी है। पुरातत्व वेत्ताओं का यह भी कथन है कि आज जहाँ उज्जयिनी बसी हुई है वह पुरातन उज्जयिनी का क्षेत्र नहीं है। किन्तु यह महाकाल वन के श्मशान की जगह पर बसी हुई है। पुरातन उज्जयिनी के अवशेश जिस क्षेत्र पर है वे भी इसके उत्तर में 3 कि.मी. लम्बाई और 1.5/2 कि.मी. की चौड़ाई के क्षेत्र में दृश्टिगोचर होता है। इस क्षेत्र और वर्तमान नगरी के क्षेत्र को दुर्गादास मार्ग विभक्त करता है, समय के प्रभाव से आज यह नगरी पर्याप्त विस्तृत हो गई है और होती ही जा रही है।

उज्जैन जिला प्रदेश के दक्षिण–पश्चिम में 22. 43 डिग्री से 23.36 डिग्री आक्षांश तथा 75.00 डिग्री सें 76.30 डिग्री पूर्व आक्षांश के बीच स्थित है। उज्जैन जिला भोगोलिक दृश्टि से मालवा पठार के केन्द्रीय भाग में एक समतल भूमि पर स्थित है। जिले की समुद्रतल से ऊँचाई 527 मीटर है। जिले की प्रमुख नदियाँ चम्बल, गम्भीर, खान, छोटी कालिसिंध, चामला तथा शिप्रा नदी है। जिसे पावन व पवित्र तथा मोक्षदायिनी भी माना जाता है।

प्राकृतिक रचना की दृश्टि से जिले को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। जिले का उत्तरी भाग ढालू है तथा दक्षिणी भाग पठारी है। जिले में सामान्यतः काली मिट्टी पाई जाती हैं, जो गेहूँ, सोयाबीन तथा कपास की पैदावार के लिये उपयुक्त है। जिले के कुछ भाग में भुर–भुरी कंकरीली मिट्टी पाई जाती हैं, जो मक्का की फसल के लिए उपयुक्त है।

जिले की जलवायु साधारणतया समशीतोष्ण है। जिले का कुल क्षेत्रफल 6091 वर्ग किलोमीटर है। प्रशासनिक दृष्टि से उज्जैन जिला सात तहसीलों में

अर्थात बड़नगर, खाचरौद, नागदा, महिदपुर, तराना उज्जैन और घटिया में विभक्त है। स्थानीय निकायों में एक नगर पालिक निगम उज्जैन, तथा चार नगर परिशद बड़नगर, खाचरौद, नागदा तथा महिदपुर तथा दो नगर पंचायतें– तराना व उन्हेंल है। जिले में जनगणना 2011 अनुसार कुल राजस्व ग्रामों की संख्या 1101 है, जिसमें 1088 आबाद तथा 13 विरान है। जिले में कोई वन ग्राम नही है।

उज्जयिनी के भौगोलिक और प्राकृतिक स्थिति का भी बहुत महत्व है। प्रकृतिक और वैज्ञानिक दृश्टि से इसे नाभिकीय देशांष पर सराहनीय स्थान प्राप्त है। क्योंकि उत्तरी ध्रुव की स्थिति पर 21 मार्च से प्रायः छः मास के दिनों के 3 मास बीत जाने पर सूर्य दक्षिण क्षितिज से अत्यन्त दूर के अंतर (ऊँचाई) पर हो जाता है। आचार्य वराहमिहिर की मान्यता के अनुसार उस समय सूर्य उज्जैन के ठीक मस्तक पर होता है।

उज्जयिनी के अक्षांश पर मकर संक्राति के दिन ही स्थिति 24 अंश मानी जाती है। सूर्य की स्थिति ठीक मस्तक पर होती है। उज्जयिनी के अतिरिक्त विश्व के किसी भी स्थान को इस अक्षांश की स्थिति प्राप्त नहीं है। यह ऐसा स्थान है जिसकी स्थिति के कारण प्राचीन काल से ही काल (समय) की गणना का ज्ञान प्राप्त किया जाता रहा हैं। उज्जयिनी को कालगणना की दृश्टि से ग्रीनविच कहने का कारण भी यही है। काल ज्ञान की इस अद्भुत विशेषता के कारण ही यहाँ के प्रधान देवता को महाकाल नाम से अभिहित किया गया है। खगोलशास्त्रीय दृष्टि से इसका बड़ा महत्व है।

उज्जैन नगरपालिका के अंतर्गत कुल 54 वार्ड है। 2011 के अनुसार कुल जनसंख्या 5,15,215 है, जिनमें 48.40 प्रतिशत महिलाएँ है। उज्जैन नगर में लिंग अनुपात 942 है। तथा नगर का जनसंख्या घनत्व 6091 व्यक्ति प्रतिवर्ग कि.मी. है।

उज्जैन नगर में सभी धर्मो एवं सामाजिक–आर्थिक वर्ग के लोग समान रूप से फैले हुए है। उज्जैन नगर का भौगोलिक विस्तार उज्जैन–इन्दौर सड़क मार्ग, उज्जैन–देवास सड़क मार्ग, उज्जैन–मक्सी सड़क मार्ग, बड़नगर सड़क मार्ग, तथा आगर सड़क मार्ग के आसपास हुआ है। उज्जैन अन्य नगरों से सड़क एवं रेल मार्ग से जुड़ा हुआ है। नगर को रेल यातायात द्वारा मुख्य शहरों से बड़ी लाईन (ब्राडगेज) एवं छोटी लाईन (मीटर गेज) दोनों के माध्यम से जोड़ा गया है। नगर से दो अंतर्राज्यीय सड़क मार्ग गुजरते है। इनमें से एक अंतर्राज्यीय सड़क मार्ग क्रमांक 27 है, जो इन्दौर–कोटा सड़क मार्ग के नाम से जाना जाता है तथा दूसरा अंतर्राज्यीय सड़क मार्ग क्रमांक 18 है जो अहमदाबाद से सागर को उज्जैन से होकर जाता है।

उज्जैन को मंदिरों की नगरी कहा जाता है। इन्दौर से 20 किलोमीटर दूरी पर स्थित एक छोटी सी पहाड़ी काकड़ी बरड़ी से पुण्यसलिल मोक्ष दाहिनी क्षिप्रा नदी का उद्गम होता है। जबकि शास्त्रों में कुछ इस प्रकार लिखा है।

''क्षिप्राम्हावन्ती कुन्ती च पारीयात्रा श्रितास्मृताः''

अर्थात् प्राचीन समय में क्षिप्रा नदी का उद्गम स्थल पारियात्र पर्वत माना गया है। स्कन्द पुराण के अनुसार क्षिप्रा उत्तर वाहिनी है जो चर्मण्वती (चम्बल नदी) में जाकर मिल जाती है। क्षिप्रा उज्जैन के दक्षिण पूर्वी सिरे से नगर में प्रवेश करती है। क्षिप्रा नदी की लम्बाई 195 किलोमीटर है।

उज्जयिनी ही ऐसा स्थान है जिससे ठीक काल (समय) का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। उज्जयिनी को ग्रीनविच कहने का कारण भी यही है। काल ज्ञान की इस अद्भुत विशेषता के कारण ही यहाँ के प्रधान देवता को महांकाल नाम से अभिहित किया गया है।

उज्जयिनी का ही अपभ्रंश उज्जैन शब्द है। संभवतः इसी उज्जैन को अरबी भू–मध्य रेखा का पर्यायवाची शब्द बन गया। प्राचीन काल में उत्तर–दक्षिण भी भू–मध्य रेखा उज्जयिनी से होकर ही जाती थी।

उज्जैन में प्रतिवर्ष कालिदास समारोह का आयोजन राष्ट्रीय स्तर पर किया जाता है, इसमें राग प्रदर्शन, चित्र प्रदर्शनी एवं परिसंवाद जैसे आयोजनों को शामिल किया जाता है। इस हेतु ही कालिदास अकादमी की स्थापना की गई है।

कला के क्षेत्र में सृजनात्मक श्रेष्ठता को प्रोत्साहन देने की दृष्टि से कालिदास पुरस्कार की स्थापना वर्ष 1980 में की गई है। पूर्व में यह पुरस्कार केवल शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में ही दिया जाता था। अब यह पुरस्कार शास्त्रीय गीत, शास्त्रीय नृत्य, रंगकर्म एवं रूपकंर कला के क्षेत्र में पृथक–पृथक रूप से दिया

जाता है। उज्जैन में ही 'प्रेमचन्द्र सृजनपीठ' स्थापित है।

उज्जैन के गौरव स्थल :–

(1) महांकालेश्वर मंदिर – उज्जैन महांकालेश्वर की मान्यता भारत के प्रमुख बारह ज्योतिर्लिंगों में है। महाकवि तुलसीदास से लेकर संस्कृत साहित्य के अनेक प्रसिद्ध कवियों ने इस मंदिर का वर्णन किया है। उज्जैन भारत की कालगणना का केन्द्र बिन्दु था और महांकाल उज्जैन के अधिपति आदि देव माने जाते हैं।

(2) श्री बड़े गणेश मंदिर – श्री महांकालेश्वर मंदिर के निकट हरसिद्धि मार्ग पर बड़े गणेश की भव्य और कलापूर्ण मूर्ति प्रतिश्ठित है। इस मूर्ति का निर्माण पद्मविभूषित पं. सूर्यनारायण व्यास के पिता विख्यात विद्वान स्व. पं. नारायणजी व्यास ने किया था।

(3) मंगलनाथ मंदिर – पुराणों के अनुसार उज्जैन नगरी को मंगल की जननी कहा जाता है। ऐसे व्यक्ति जिनकी कुंडली में मंगल भारी रहता है। वे अपने प्रसिद्ध ग्रहों की शांति के लिए यहां पूजा–पाठ करवाने आते है।

(4) हरसिद्धि – उज्जैन नगर के प्राचीन और महत्वपूर्ण धार्मिक स्थलों में हरसिद्धि देवी का मंदिर प्रमुख है। चिंतामण गणेश मंदिर से थोड़ी दूर और रूद्रसागर तालाब के किनारे स्थित हैं।

(5) क्षिप्रा घाट – उज्जैन नगर के धार्मिक स्वरूप में क्षिप्रा नदी के घाटों का प्रमुख स्थान है। नदी के दाहिने किनारे, जहाँ नगर स्थित है,पर बने ये घाट स्नानार्थियों के लिए सीढ़ीबद्ध है। घाटों पर विभिन्न देवी–देवताओं के नये–पुराने मंदिर भी है।

(6) गोपाल मंदिर – गोपाल मंदिर उज्जैन नगर का दूसरा सबसे बड़ा मंदिर है। यह मंदिर नगर के मध्य व्यस्ततम क्षेत्र में स्थित है। मंदिर का निर्माण महाराजा दौलतराव सिंधिया की महारानी बायजा बाई ने सन् 1833 के आसपास कराया था।

(7) गढ़कालिका देवी – गढ़कालिका देवी का यह मंदिर आज के उज्जैन नगर में प्राचीन अवंतिका नगरी क्षेत्र में है। कालयजी कवि कालिदास कढ़कालिका देवी के उपासक थे। इस प्राचीन मंदिर का सम्राट हर्षवर्धन द्वारा जीर्णोद्धार कराने का उल्लेख मिलता है।

(8) भर्तृहरि गुफा – भर्तृहरि की गुफा ग्यारहवीं सदी के एक मंदिर का अवशेष है, जिसका उत्तरवर्ती दौर में जीर्णोद्धार होता रहा है। यह सिद्ध संत भर्तृहरि का समाधि स्थल है। ई.स.72 में गोवर्धनर सेन के पुत्र भर्तृहरि को राज्य सौपा। दंत कथाओं के अनुसार इस गुफा के भीतर चारधाम के रास्ते हैं।

(9) काल भैरव – काल भैरव मंदिर उज्जैन नगर में स्थित प्राचीन अवंतिका नगरी के क्षेत्र में स्थित है। इस मंदिर के अंदर काल भैरव की विशाल प्रतिमा है। इस प्रतिमा की विशेषता यह है कि यह मूर्ति मदिरा पान करती है।

(10) कालियादेह महल – इसे 1458 में मोहम्मद खिलजी ने बनाया है स्कन्द पुराण के अवंति खण्ड में यहां ब्रह्म कुण्ड नामक स्थान है। यहां पर सूर्य मंदिर स्थित है।

(11) नवगृह एवं शनि मंदिर – यह मंदिर त्रिवेणी तट पर स्थित है। यहां पर इन्दौर की खान नदी क्षिप्रा नदी में आकर मिलती है। मान्यता है कि विलुप्त सरस्वती का भी यहां संगम होता है।

(12) सांन्दीपनि आश्रम – पुराणों के अनुसार सान्दीपनि ऋषि के इस आश्रम में आकर श्रीकृष्ण, बलराम तथा सुदामा ने विद्या प्राप्त की थी। यहां से ई. पू. दो हजार से अधिक वर्ष पूर्व प्राचीन पाषाण के अवशेष प्राप्त हुए है।

(13) वैधशाला – यहां दिगंश सम्राट ने नाडीवलय, याम्योतर, आदि यंत्रों का केन्द्र बनाया एवं विभिन्न यंत्र होने से इसे यंत्र महल भी कहा जाता है।

(14) मत्स्येन्द्रनाथ – नवनाथों में प्रमुख मत्स्येन्द्रनाथ की समाधि गढकालिका के निकट क्षिप्रा तट पर स्थित है। यहां हिन्दू और मुसलमान दोनो ही पूजा अर्चना करते है।

(15) सिंहस्थ कुम्भ – सिंहस्थ उज्जैन का महान स्नान पर्व है। बारह वर्षो के अंतराल से यह पर्व तब मनाया जाता है। जब बृहस्पति सिंह राशि पर स्थित रहता है। पवित्र क्षिप्रा नदी में पुण्य स्नान की विधियां चैत्र मात्र की पूर्णिमा से प्रारंभ होती है और पूरे मास में वैशाख पूर्णिमा के अंतिम स्नान तक भिन्न–भिन्न तिथियों में संपन्न होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- आचार्य राममुर्ती त्रिपाठी, अवन्तिका क्षेत्र और सिंहस्थ महापर्व, कावेरी शोध–संस्थान, उज्जैन (म. प्र.), 2004
- डॉ. श्याम सुन्दर निगम, अवन्तिका क्षेत्र और सिंहस्थ महापर्व, कावेरी शोध–संस्थान, उज्जैन (म. प्र.), 2004
- उज्जैन दर्शन।
- डॉ. राजपुरोहित भगवतीलाल, अवन्तिका क्षेत्र और सिंहस्थ महापर्व, कावेरी शोध–संस्थान, उज्जैन (म. प्र.), 2004

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 7, No. – 2, Dec. 2019
A Monthly Journal of Multidisciplinary
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact Factor - 4.2 Research Journal

मलिन बस्तियों की समस्याएँ एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

ऋचा पाठक (शोधार्थी)
डॉ. प्रितिबाला मिश्रा (निर्देशक)
सहायक प्राध्यापक महाकौशल वाणिज्य एवं कला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

नगरीय जनसंख्या और नगरों की संख्या में वृद्धि देश की अर्थव्यवस्था में गुणात्मक सुधार के संकेत हैं। क्योंकि विशेषज्ञों के अनुसार औद्योगिक उत्पादन और वाणिज्य–व्यापार के कारण नगर अर्थ–व्यवस्था की धुरी के रुप में उभर रहे हैं। किन्तु नगरीय विकास का एक चिन्ताजनक पहलू यह है कि गरीब व विकासशील देशों में मलिन बस्तियों की समस्या अधिक गम्भीर होती जा रही है क्योंकि आर्थिक रुप से विकसित और वैज्ञानिक तकनीकों से सम्पन्न राष्ट्र नगरों का नियोजित विकास करने में समर्थ हैं जबकि सीमित संसाधनों के कारण विकासशील राष्ट्रों के लिए नगरों में अपेक्षित अवस्थापना सुविधायें जुटाना सम्भव नहीं। परिणामस्वरुप भारतवर्ष में भी मलिन बस्तियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है कि विश्व की जनसंख्या में तेजी से वृद्धि के कारण गरीबी का नगरीकरण होने लगा है क्योंकि गरीब व भूमिहीन श्रमिकों का रोजगार की तलाश में नगरों की ओर पलायन होने से नगरों में श्रमिकों की जनसंख्या व मलिन बस्तियों की संख्या में वृद्धि हो रही है।

भारत के महानगरों की एक तिहाई जनसंख्या गन्दी बस्तियों में निवास करने को बाध्य है जहां न्यूनतम नागरिक सुविधायें भी उपलब्ध नहीं हैं। जनसंख्या से बोझिल नगरों की समस्यायें विकराल रुप लेती जा रही हैं क्योंकि संसाधनों के अभाव में, विशेषकर विकासशील देशों में, कोई कारगर सफलता नहीं मिल पा रही है। भारत के महानगरों की भाँति (उत्तराखण्ड) कमाऊं के भाबर एवं तराई क्षेत्र के नगरों में मलिन बस्तियों में भी स्थिति इतनी दयनीय है कि नागरिक जीवन की श्रेष्ठता बनाये रखना कठिन लगने लगा है।

मलिन बस्तियों के परिवारों की महिलाएँ विभिन्न स्तरों के कुपोषण रक्तालपता, प्रसवोपरान्त जटिल स्वास्थ्य समस्याओं, आंखों के संबंध में चिरकालिक समस्याओं इत्यादि से भी पीड़ित रहती हैं, जिनकी वजह से उनका स्वास्थ्य लगातार खराब रहता है। इस वर्ग में मातृ–मृत्युदर राष्ट्रीय औसत मातृ–मृत्युदर की तुलना में कहीं अधिक है। बहुत से परिवारों में चिकित्सकीय देखभाल और उपचार को सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परिभाषित किया जाता है। लगातार बिमार रहने के कारण बुरी नजर लगना, जादू–टोना किया जाना या कोई दैवी प्रकोप माना जाता है और इसलिए रोग का इलाज देशी दवाई अथवा जादुई धार्मिक तरीकों से किया जाता है। आध्नानिक चिकित्सा की उपलब्धता की स्थिति भी असंतोषजनक है।

नगरों में विविध कार्यो के लिए लकड़ी, कोयला, गैस, किरोसिन और बिजली का उपयोग ईंधन के रुप में किया जाता है। पश्चिमी देशों के नगरों में उचित प्रबन्धन के कारण न तो ईंधन की समस्या है और न प्रकाश की। लेकिन विकासशील देशों के नगरों में यह एक महत्वपूर्ण समस्या है। लकड़ी और कोयले के प्रयोग के कारण जहाँ एक ओर आवासीय गूहों की आयु क्षीण होती है वहीं धुआं से पर्यावरणीय प्रदूषण को बढ़ावा मिलता है। भारतीय नगरों में लकड़ी, कोयला, गैस, तेल और लकड़ी का प्रयोग अधिक किया जाता है। अब लकड़ी की आपूर्ति घट जाने के कारण कोयला और किरोसिन तेल का प्रयोग नगर के निम्न मध्यम वर्ग तथा निम्न वर्ग के घरों में सर्वाधिक होता है जो प्रदूषण का एक प्रमुख कारण बन गया है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के रिपोर्ट के अनुसार कोयला, लकड़ी और करोसिन तेल के प्रयोग से सर्वाधिक कृप्रभाव महिलाओं के स्वास्थ्य पर पड़ता है। विश्व बैंक के 1992 के वर्ल्ड डेवलपमेन्ट रिपोर्ट के अनुसार नगरों में वायु प्रदूषण के लिए ईंधन, वाहन और उद्योगों को मुख्य कारक बताया गया है।

पश्चिमी देशों के नगरों में व्यवस्थित सीवर व्यवस्था के कारण मलजल निकासी और गन्दें जल को साफ कर सिंचाई के लिए प्रयोग या उपयुक्त जल स्रोतों में प्रवाह के कारण न्यूनतम समस्या उपस्थित होती है। विकासशील देशों विशेषकर भारत में, मलजल निकासी और गन्दे जल की उचित सफाई व्यवस्था के अभाव में नगरीय जीवन समस्या प्रधान हो जाता हैं। अधिकांश नगरों में वर्षा जल की निकासी के लिए बनी नालियाँ

अधिकांश समय कूड़ा से पटती रहती हैं और वर्षा काल के पूर्व उचित सफाई के अभाव में ये जल प्रवाह के लिए अपर्याप्त प्रमाणित होती है। फलतः सड़के जल जमाव के कारण आवागमन बाधित करती हैं। नदियों के किनारे बसे भारत के अनेक नगरों में बाढ़ की दहशत बनी रहती हैं ।

नगरीय संस्कृति में स्वच्छता एक महत्वपूर्ण पक्ष है। नगर को स्वच्छ रखने के लिए दो बातें जरुरी हैं – 1. गन्दगी के प्रति नागरिक जागरुकता अर्थात् कम से कम गन्दगी फैलाने का प्रयास 2. गन्दगी को नियन्त्रित करने के लिए कूड़े का समय से निष्पादन। नगरों में न तो नगर निवासी उचित आचरण का निर्वाहन करते हैं और न नगर प्रशासन समय से कड़े का निष्पादन करते है। फलतरू गन्दगी यहाँ की नियति बनती जा रही है जिससे विविध प्रकार की बीमारियां जन्म लेती हैं। कड़े के निष्पादन के लिए स्थानों का चुनाव भी दोष पूर्ण होने के कारण सड़ांध नगरीय जीवन को प्रभावित करता है। प्लास्टिक के बहुउठपयोग के बाद समस्या और भी विकट हो गई है जिसके कारण इस पर अब प्रतिबन्ध लगाने की नौबत आ गई है। कड़े के लिये उचित स्थान नियत न होने के कारण उसे सड़क, नाली और खुली भूमि पर ढेर लगा दिया जाता है जो फैलकर गन्दगी का विस्तार करते हैं। समय से यदि कूड़ा हटाया न गया तो राह चलना कठिन हो जाता है। नगर प्रशासन के सारे प्रयासों के बावजूद अधिकांश नगरों में कड़ा की सफाई एक चुनौतीपूर्ण समस्या है। जबसे प्लास्टिक का प्रयोग बढ़ा है नगरों में कड़े की सफाई एक समस्या बन गई है। प्लास्टिक कड़े के कारण धरातलीय जल प्रवाह की नालियां इतनी अधिक जाम होने लगी है कि सड़क पर पानी फैल जाता है।

नगरीय जीवन की उत्कृष्टता, सहज और सुव्यवस्थित गमनागमन में निहित होती है क्योंकि कार्य सम्पादन में इसकी अहम् भूमिका होती है। नगरीय यातायात सुविधा की तुलना में जब उपभोक्ताओं की संख्या बढ़ने लगती है तो गमनागमन बाधित होने लगता है। सड़कों पर जब क्षमता से अधिक वाहन गतिमान होने लगते हैं तो सड़क जाम की समस्या यात्रा को बाधित कर देती है। नगरीय यातायात की समस्या जनसंख्या वृद्धि, वाहन वृद्धि और यातायात मार्गों के विकास से उत्पन्न हुई है। इनके कारण यातायात सम्बन्धी अनेक समस्यायें जैसे यातायात की भीड़–भाड़, वाहन ठहराव की असुविधा, सड़क दुर्घटना, वायु प्रदूषण, सार्वजनिक वाहनों का कम उपयोग, पैदल चलने वालों की कठिनाइयां विशेष उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार परिवहन सम्बन्धी समस्यायें मिश्रित प्रकृति की हैं। इन समस्याओं का विकराल रुप भारतीय नगरों में देखने को मिलता है। आज भी भारतीय नगरों में वाहन ठहराव की उचित व्यवस्था नहीं हैं। यहां तक कि सार्वजनिक क्षेत्र की बसें भी सड़कों पर पार्क की जाती हैं।

नगरीय मार्ग तंत्र का विकास नगर विकास का आधारी पक्ष होता है। अतः नियोजित नगरों में इसे सबसे पहले आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार विकसित किया जाता है। ऐसी दशा में विविध प्रकार की सड़कें और रेल मार्ग विकसित किये जाते हैं ताकि नगर के परिवहन में कठिनाई न हो। लेकिन प्राकृतिक ढ़ग से क्रमशः विकसित होने वाले नगरों में स्थिति भिन्न होती है। नगर विकास की प्रारम्भिक अवस्था में नगर की कम आबादी के कारण पतली सड़के और नगर छोर पर विकसित रेल मार्ग आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त समझे जाते हैं। जब नगर का विस्तार होने लगता है और जनसंख्या में वृद्धि होने लगती है तो दूसरे चरण में सड़कों का आकार– प्रकार सुधरे रुप में अस्तित्व में आता है। ऐसी दशा में रेल मार्ग नगर के अन्दर आ जाता है और सड़कें उसे पार करने लगती हैं। ऐसा ही कुछ मलिन बस्तियों में भी देखा गया है। फलतः नियोजित और अर्द्धनियोजित मार्ग तंत्र नगर का अभिन्न अंग बन जाता है। ऐसी दशा में नगर में अनेक मार्ग अवरोध उत्पन्न हो जाते हैं जिससे गमनागमन वाधित हो जाता है। कभी–कभी राष्ट्रीय मार्ग जो कभी नगर छोर से गुजरता था, नगर के अन्दर आ जाता है। नगर में मार्गों के अवरोध यथा सड़क की वक्रता, अन्धा मोड़ रेलवे क्रासिंग, चौड़ी–पतली सड़के, पुल रहित नदी, सड़क ढाल आदि के कारण नगरों में सुगम यातायात वाधित होता है। रेलवे क्रासिंग पर उपरगामी पुल के अभाव में प्रतीक्षारत यातायात के कारण समय साधन का अपव्यय होता है।

मलिन बस्तियों का वातावरण अपने आप में ही कई अवरोधों से युक्त होता है जिससे बच्चे भी ग्रसित होते हैं। सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि इन चयनित मलिन बस्तियों के इलाकों में बच्चे कार्य तथा रोजगार के लिए किसी तैयारी के बिना ही बढ़ते हैं तथा युवावस्था प्राप्त करते हैं। मलिन बस्तियों में युवाओं को उन्हें प्राप्त प्रशिक्षण एवं रोजगार के अवसर के बारे में जानकारी उपलब्ध कराने हेतु कोई पर्याप्त कार्यक्रम नहीं है। अक्षर ज्ञान से वंचित बच्चे कल्पना

चावला, किरण वेदी के मुकाम पर पहुँचना तो दूर, चल भी नहीं सकते। जिस समाज ने जैसा भविष्य का सांचा वर्तमान में गढ़ा, वैसा परिणाम उसके हाथ लगा। इसलिए आप देश के भविष्य को उज्जवल बनाना चाहते हैं, तो आपको बचपन को काम के "अंधेरे कूएँ" में जाने से रोकना होगा और इनके बचपन में शिक्षा की रोशनी सुनिश्चित करनी होगी। प्रत्येक विद्यालय न जाने वाला बच्चा संभावित बाल श्रमिक है।

मलिन बस्तियों मे बड़ी संख्या मे गली में बच्चे विभिन्न कामों में संलग्न हैं। परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है, इनका ध्यान रखने वाला कोई नहीं होता, अभिभावक रोटी की व्यवस्था में प्रातःकाल से रात्रि तक मेहनत करते हैं। इस परिवेश में बच्चे के लिए विद्यालय भेजने की व्यवस्था नहीं हो पाती। नतीजा बच्चों को विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में संलग्न होना पड़ता है। ये बच्चे प्रायः गरीबी, कुपोषण, अशिक्षा, यौन शोषण के शिकार होते हैं।

आज के युग में अत्यधिक औद्योगिक विकास ने पर्यावरण सम्बन्धी अनेक समस्याऐं उत्पन्न कर दी हैं। अतरू किसी प्रकार के विकास के अध्ययन में पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्याओं का अध्ययन किया जाना भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गया है जिसका समाधान समय रहते हो जाना आवश्यक है। पर्यावरण ह्लास की समस्या मात्र बीस वर्षो से पहले की समस्या नहीं है वरन् पर्यावरण का ह्लास भी तबसे प्रारम्भ हुआ जब यहां के लोगों ने जंगलों को काटकर खेती करना शुरु कर दिया। यह पर्यावरण ह्लास उद्योगों के लगने के पश्चात् और तीव्रता से बढ़ने लगा है। उद्योगों की तीव्र वृद्धि के साथ–साथ यहां पर जनसंख्या की वृद्धि ने भी पर्यावरण सम्बन्धी अनेक समस्याओं को जन्म दिया है। जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ बढ़ती आवासीय मांग, सामग्री की मांग तथा यातायात के साधनों की वृद्धि ने संसाधनों का उपयोग अत्यधिक बढ़ा दिया है। विनिर्मित सामान एवं शक्ति के साधनों के अधिक से अधिक उपयोग ने व्यर्थ सामग्री को भी बढ़ा दिया है, जो किसी न किसी रुप में पर्यावरण में फेंक दी जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- फोर्ड जेम्स, (1936), स्लम्स एण्ड हाउसिंग, हिस्टरी, कण्डीशन्स पॉलिसी, हावर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज।
- गिल राजेश (1994), स्लम्स ऐज अरबन विलेज, रावत पब्लिकेशन, न्यु देल्ही।
- ममफोर्ड लेविस, (1961), दी सिटी इन हिस्ट्री, सीकर एण्ड वर्बर्ग, लण्डन।
- शर्मा आर.ए., (2002) फण्डामेन्टल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, लायल बुक डिपार्ट, मेरठ।
- सिंह श्यामली, (2006) स्टेटस ऑफ इविक्शन ऑफ स्लम्स, आक्सफैम इण्डिया ट्रस्ट लखनऊ।